श्रीराम कथा

साहित्य सेवी पूज्य ससुर जी
स्व. श्री जगत प्रसाद शर्मा (नायक) (सन् 1913–1999)
पूर्व पुस्तकालय अध्यक्ष,
श्री मारवाड़ी पुस्तकालय, बिरहाना रोड, कानपुर
एवं
सासू जी श्रीमती ललिता देवी (सन् 1918–2001)
की पुण्य स्मृति में

डॉ. राजाराम त्रिपाठी
करुणेश

श्रीरामचरितमानस सत्संग समिति (पंजीकृत)
ए–447, सेक्टर–47, नोएडा (उ.प्र.) के सौजन्य से प्रकाशित

© श्रीमती माया त्रिपाठी
ग्राम पोस्ट–चिचारा
जिला–महोबा (उत्तर प्रदेश)

मूल्य : 160 रूपये
प्रथम संस्करण, 2011
प्रकाशक : श्रीरामचरितमानस सत्संग समिति (पंजीकृत)
मुद्रक : एक्सेलप्रिंट, नई दिल्ली

Shree Ram Katha

भूमिका

गो लोक बासी पूज्या सासू जी **श्रीमती ललिता देवी** एवं ससुर जी **श्री जगत प्रसाद शर्मा (नायक)** कर्तव्यनिष्ठा के प्रतीक रहे हैं। कानपुर के कस्तूरबा गाँधी मार्ग में स्थित श्री मारवाड़ी पुस्तकालय एवम् वाचनालय का भव्य भवन आपके परिश्रम का आज भी स्मरण करा रहा है। अनेकानेक विधाओं की असंख्य पुस्तकें आपके अभाव में मानों चिन्तित सी हैं, कि कहाँ गये, साहित्य सेवी श्री जगत प्रसाद शर्मा (नायक)।

उनका सम्पूर्ण जीवन सर्वदा श्री राम के आदर्शो का पक्षधर रहा। मैं जब भी उनके पास पहुँचता, तब वे प्रसंगवस अपनी इच्छा प्रकट किया करते थे कि त्रिपाठी जी, आज वर्तमान समाज का जो पतन हो रहा है उसके परिवर्तन के लिये श्रीराम के आदर्शों पर प्रकाश डालें। मैं उस ग्रन्थ को पुस्तकालय में सजाऊँगा। खेद है मैं तत्क्षण आदेश अनुपालन नहीं कर सका। स्मृतियों के सिलसिले में आज आपकी पुत्री श्रीमती माया ने मुझे आपके ही आदेश की पुनः प्रेरणा दी और तद्नुसार अपने मतानुसार श्रीराम कथा लिखने लगा। सोच रहा हूँ, समर्पण किसे करूँ। आप नहीं हैं, तो आपके पुत्र–प्रप्रौत्र तो हैं। अतः आपके प्यारे पुत्रों प्रकाश नारायण, केशव नारायण, कृष्ण कुमार तथा राजेन्द्र कुमार नायक एवं समस्त नायक परिवार को सस्नेह समर्पित।

डॉ0 राजा राम त्रिपाठी (करुणेश)

स्थान : चिचारा (महोबा) उ.प्र.
तिथि : भाद्रपद सुदी 4 संवत् 2067
दिनांक : 11 सितंबर सन् 2010 ई.

कवित्त

राम कथा लिखने की इच्छा हुई कैसे लिखूँ,
चाहें गणेश भी तो उनमें सामर्थ्य–नहीं।
वेद, व महेश शेष– शारद, न पायो – पार,
सर्व ब्याप्त ईश्वर का आदि और अन्त नहीं।।
लिखने को वेदब्यास बाल्मीक तुलसी लिखा ,
उनको भी लीला थाह लिखने में मिली कही।
सोच रही कलम पकड़ बारम्बार पंगु बुद्धि,
कैसे पार–पाऊँगी राम की अपार मही।।

होता है प्रश्न अब सुनेगा कौन राम कथा,
अन्धा बिश्वास, भाव श्रद्धा बिहीन है।
कलि के दुश्चिन्तन से ज्ञान शक्ति क्षीण हुई,
भाव भक्ति बिना अब नेह न नवीन है।।
माया में लिप्त सभी उलझे भव फन्दों से,
राग में बिरागी रँगे, बुद्धियाँ मलीन हैं।
अब तो काम–क्रोध–लोभ ईर्ष्या में जलते सभी,
कौन सुने राम कथा स्वार्थ में प्रवीन हैं।।

तर्ज राधेश्याम

जिनके मन में भ्रम गांठ पड़ी, रघुनन्दन के गुण गायेंगे क्यों।
तन में कलि कीचड़ लेप किये, वे गंगतरंग नहायेंगे क्यों।।
भ्रम जाल से दृष्टि बिहीन हुये, उन्हें दीपक ज्ञान दिखायेंगे क्यों।
कानों में विषयन–विष है भरा, वे राम कथा सुन पायेंगे क्यों।।
कैसे वे धर्म धुरन्धर हैं, जिनमें कुछ धर्म प्रथा ही न हो।
कैसे सम्बेदन शील ह्रदय, जिसमें पर–पीर ब्यथा ही न हो।।
वे चिन्तन चित्त के व्यर्थ सभी, जिसमें श्रीराम मथा ही न हो।
करुणेश कहे वह ग्राम ही क्या, जिस ग्राम में रामकथा ही न हो।।

प्रस्तावना

'हरि अनन्त, हरि कथा अनन्ता' के अनुसार भगवान श्री राम की कथा अनन्त है, अपरम्पार है, वर्णनातीत है ।उनके समग्र जीवन पर प्रकाश डाल पाना अथवा उनकी मानवीय लीला के महत्त्व को निरूपित कर पाना, न तो अब तक सम्भव हुआ है और न ही कभी सम्भव होगा। जो साहित्य विद् अथवा राम भक्त ऐसा दाबा करते हों वे भ्रम की स्थिति में हैं क्योंकि श्री राम परब्रह्म परमात्मा हैं, अगम है, अगाध हैं और अनिर्वचनीय हैं। निःसन्देह आदि कवि बाल्मीकि, गोस्वामी तुलसीदास, आचार्य कवि केशव और मैथिलीशरण गुप्त आदि अनेक सुप्रसिद्ध संतों और विद्वानों ने भगवान श्री राम के रामत्व पर अपनी–अपनी बुद्धि और सोच के अनुसार बहुत कुछ कहा और लिखा है; पर वे सब मिलकर भी राम की महत्ता का सहस्त्रांश भी नहीं कर सके अलबत्ता, ये सभी राम की अवर्णनीय महत्ता का अपनी क्षमतानुसार गुणगान कर, उनके चरण–कमलों पर अपने श्रद्धारूपी शब्द–सुमन ही अर्पित कर सके हैं। श्रीराम के यश–वर्णन का यह क्रम आज भी अनवरत जारी है और सृष्टि–पर्यन्त जारी रहेगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

श्रीराम कथा का प्रकाशन इसी क्रम की एक महत्त्वूपर्ण कड़ी है। इस पुस्तिका के सृष्टा डॉ. राजाराम त्रिपाठी हैं जो हिन्दी और संस्कृत भाषाओं के उद्भट विद्वान हैं, सुप्रसिद्ध कवि हैं, साथ ही अनन्य राम–भक्त भी हैं। भक्ति–उर्मियों से सम्पृक्त जब त्रिपाठी जी के उर–उदधि का घनघोर मन्थन हुआ तब परिणाम स्वरूप ''श्री राम–कथा'' का प्राकट्य हुआ। ग्रन्थ के सृजन की पृष्ठभूमि से ही उसकी महत्ता का पूर्वाभास होना सहज स्वाभाविक है। इस प्रकार भगवान श्रीराम के चरणों पर

श्रद्धा–सुमन समर्पित करने के सार्थक प्रयास के रूप में इस कृति 'श्री राम–कथा' का प्रणयन डॉ. त्रिपाठी जी का एक स्तुत्य कृत्य है।

ग्रन्थ के कथ्य विषय पर विचार करने के पूर्व यह देखना आवश्यक है कि इस कृति के सृजन के पीछे कृतिकार का क्या उद्देश्य है! पुस्तिका के प्रारम्भ में ही कवि ने 'भूमिका' के रूप में अपना उद्देश्य स्पष्ट करते हुए लिखा है :–

'दिन प्रतिदिन भारतीय आदर्श आचरण के साथ मानवतावादी सिद्धान्तों की किरणें ओझिल होकर दानवता का आतंकी अंधेरा चारों ओर अग्रसर है। ऐसी अवस्था में यह आवश्यक है कि ऋषि–प्रणीत कथानकों को प्रोत्साहन देकर श्रीराम जैसे महामानव के आदर्शों का अनुकरण करने की प्रेरणायें समाज को दें।' इस कथ्य से सभी अवगत हैं कि मानव के रुप में भगवान श्री राम का चरित्र आदर्शों और भारतीय संस्कृति की मान–मर्यादाओं का समुच्चय है। उन्हें 'मर्यादा पुरुषोत्तम राम' की संज्ञा इसीलिए दी गई है।

एक और प्रश्न जन–मानस के सामने है कि तुलसी कृत 'रामचरित मानस' सरिस देदीप्यमान भास्कर के होते हुए इन छोटे–छोटे ग्रन्थों रुपी दीपकों की क्या उपादेयता है? उत्तर है–उपादेयता न होती तो फिर दीपक होते ही क्यों? धरा पटल पर अवस्थित लाखों लाख कोठरियों में व्याप्त अँधेरे को विदीर्ण करने के लिए दीपकों का ही सहारा लिया जाता है, न कि सूर्य का। डॉ. त्रिपाठी कृत इस लघु ग्रन्थ 'श्रीराम कथा' के प्रणयन को इसी सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए।

इस पुस्तक की भाषा सरल 'हिन्दी खड़ी बोली' जो आज समाज की आम भाषा है, यह बहु प्रचलित है और बोध गम्य है। साधारण पढ़ा–लिखा व्यक्ति भी इसे पढ़ और समझ सकता है।

डॉ. त्रिपाठी जी की यह 'श्रीराम कथा' और भी अनेक

विशेषताओं से मण्डित है, यथा–श्री रामजी के जीवन की प्रमुख–प्रमुख घटनाओं का चित्रण मात्र अर्थात् सामान्य जन के मन–मानस में अल्प समय में ही भगवान रामजी की दिव्य लीलाओं का दर्शन करा देना–कृतिकार की कृति का एक उद्देश्य यह भी है।

इस ग्रन्थ की एक अन्य विशेषता यह है कि भगवान श्रीराम के प्रत्येक *प्रसंग का यशोवर्णन* करने के पूर्व डॉ. त्रिपाठी ने प्रसंग से सम्बन्धित *'रामचरितमानस'* के दोहा–चौपाईयों को उद्धृत किया है। ऐसा इसलिए, ताकि अधिकांश शिक्षित व्यक्ति राम चरित मानस के कथा प्रसंगों को आसानी से समझ सकें। ऐसा करना, पाठकों की दृष्टि से बोधगम्य भी है और सुविधाजनक थी। यथा :–

प्रसंग–राजा जनक की यज्ञ–शाला में देश–विदेश के भूपति गण, जनकपुर के नर–नारी और अन्तःपुर की रानियाँ एवं दासियाँ आदि उपस्थित हैं। इसी बीच मुनिवर विश्वामित्र के साथ श्री राम लक्ष्मण पधारते हैं–अपनी–अपनी भावना के अनुसार उपस्थित जनों को श्री राम के भिन्न–भिन्न रुपों में दर्शन होते हैं। इस दृश्य का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में इस प्रकार किया है।

'जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभु मूरत तिन्ह देखी तैसी।।

इसी दृश्य का चित्रण डॉ. त्रिपाठी जी की पंक्तियों में देखिएः–

''सन्तों को परब्रह्म सुन्दर स्वरूप दिखा,
दैत्यों को भयंकर जमराज से दिखाने लगे।
राजा जनक को दिखे, जैसे जामाता हो,
सीता को दुल्हा रूप श्रीराम भाने लगे।।

इसके अतिरिक्त एक ही प्रसंग–वर्णन के लिए दो कृतिकारों के समन्वय को काव्य की नवीन विधा के रुप में भी देखा जा

सकता है।

अपने ग्रन्थ के प्रणयन के लिए डॉ. त्रिपाठी जी ने किसी विशिष्ट छन्द या छन्दों का प्रयोग नहीं किया परन्तु उनकी प्रत्येक रचना गेय है, तुकान्त है, लय–बद्ध है और राग–बद्ध है। आइये, अब हम कृतिकार की श्रीराम–कथा की कतिपय रचनाओं का विहंगावलोकन करेंः–

भगवान श्रीराम द्वारा अहिल्या–उद्धार के प्रसंग से प्रायः सभी पाठक–बन्धु भलीभाँति परिचित हैं। प्रायः सभी कृतिकारों ने इन्द्र के इस दुष्कृत्य के लिए इन्द्र और अहिल्या–दोनों को समान रूप से दोषी माना है। यहाँ तक कि अहिल्या के पति ऋषिवर गौतम ने भी इस हेतु दोनों को ही दण्डित किया है। परन्तु डॉ. त्रिपाठी जी का मत उन सबसे भिन्न और विरल हैः– उनकी मान्यता है कि अपराधी तो केवल इन्द्र था, जिसने गौतम ऋषि का भेष धारण कर अहिल्या के साथ छल किया। अहिल्या को दण्ड देना न्याय संगत नहीं है। कृतिकार के शब्दों में देखिएः–

''दोषी थे श्री देवराज, छलकर बिगाड़ा धर्म,
गौतम ने शाप दिया, निर्बल बेचारी थी।''

पारम्परिक मान्यताओं के विपरीत ग्रन्थकार ने पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को अपना नैतिक समर्थन देकर अद्भुत साहस का परिचय दिया है। अहिल्या–उद्धार के इसी घटना–क्रम में कवि का कथन हैः–

''नारियों को पुरुष वर्ग युगों से सताता रहा,
गौतम ने सोचा नहीं, कितनी मति मारी थी।''

और आज के सन्दर्भ में कवि ने लिखा है :–

''करें पुरुष पतित काम, होते बदनाम नहीं,
नारी पर एक नहीं, सौ–सौ इल्जाम हैं।''

राजा जनक 'विदेह राज' की संज्ञा से विभूषित थे। देह

धारण करते हुए भी देह सम्बन्धी समस्त भले–बुरे प्रभावों से वे परे थे। गृहस्थाश्रम का जीवन अपनाकर भी वे पूर्ण योगी और वीतरागी थे। परन्तु विश्वामित्र मुनि के साथ जब राम–लक्ष्मण भी जनकपुर पधारते हैं तो उनका अनिर्वचनीय सौन्दर्य देखकर योगिराज जनक भी विमोहित हो जाते हैं। उन्हीं के शब्दों में :–

''दोनों सुधाकर समाये हृदय सागर में,
जाता रहा ब्रह्म–ज्ञान भूल गया देहभान;
युगल रूप बगिया में, देख मैं भटकने लगा,
रागी बना हूँ नाथ, मेरा सब ज्ञान गया।''

विदेह राज जनक युगल किशोरों का रूप–लावण्य देखकर ऐसे विमोहित होते हैं कि वे विरागी से रागी बनने को विवश हो जाते हैं।

रामचरित मानस में श्रृगार रस का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास जी ने बड़े शालीन और मर्यादित ढंग से किया है–इसकी स्वाभाविक निष्पत्ति भी हो जाय और मर्यादा का सीमोलंघन भी न हो–इसका शत–प्रतिशत पालन गोस्वामी जी ने किया है। इस सन्दर्भ में डॉ. त्रिपाठी जी ने भी इसी मर्यादा का पालन किया है। एक दृश्य देखिएः–

इधर श्रीराम अपने भाई लक्ष्मणजी के साथ पुष्प चयन हेतु पुष्प–वाटिका में पधारते हैं, उधर जनकसुता श्री सीता जी का अपनी सहेलियों के साथ गौरी–पूजन हेतु वाटिका में आगमन होता है। मन्द–मन्द गति से गमन करती हुईं श्री सीता जी की पायलों के घुँघरुओं और नुपूरों से मधुर–मधुर ध्वनि निस्सृत हो रही है। इस मधुर ध्वनि के आकर्षण से राम का मन भी प्रभावित होता है। वे लक्ष्मण से अपनी अन्तर्दशा इन शब्दों में व्यक्त करते हैंः–

''भैया लखन! सुनते हो, कैसी उठी मीठी धुन।
पायलों के घुँघरू मुखर, रुन–झुन सुनाते है।।''

भैया! लखनलाल आज जाने क्यों दाहिन भुज,
मेरी आँख दाहिनी भी, फड़क–फड़क जाती है।''

इन पंक्तियों में डॉ. त्रिपाठी जी ने वह सब व्यक्त कर दिया है, जो ऐसे भाव दृश्यों में स्वतः ही कह दिया जाता है। इस परिप्रेक्ष्य में कवि ने लक्षणा और व्यंजना के माध्यम से राम के मनोभावों का बड़ा ही सजीव और मनोहारी चित्रण किया है, तदर्थ वे साधुवाद के पात्र हैं।

वह काव्य, काव्य ही क्या जिसमें उपमाओं, रूपकों, अनुप्रासों आदि अलंकारों की छटा दृष्टव्य न हो। डॉ. त्रिपाठी जी की कृति भी यत्र–तत्र अलंकारों से सुशोभित है। पुष्प वाटिका में एक ओर श्रीराम की श्यामवर्णी घनघोर घटा और दूसरी ओर जनक नन्दनी सीता की गौर वर्णी विद्युत छटा। घटा और छटा के संयोग से युगल प्रेमियों के नेत्रों से अश्रु–वर्षा का चित्रण कवि की अद्भुत कल्पना शक्ति का जीवन्त उदाहरण है। आईये! हम–आप भी इस छटा के दर्शन करेंः–

''श्याम घटा रूप राम, छाये पुष्प बगिया में,
दामिनी सी दमकत दुति गोरी किशोरी की,
काली जो आई पुरवाई बन पाछिल प्रीत,
अँखियन से बरसन लगीं, बूँदें जुग जोरी की।''

कतिपय पौराणिक घटनाओं की सम्यक् जानकारी के अभाव में आम लोगों में कुछ भ्रान्त धारणायें परिव्याप्त हैं। उदाहरणार्थ, परशुराम जी के प्रसंग को ही लीजिए। उनके प्रति आम धारणा यह है कि वे समूचे क्षत्री–समाज के द्रोही थे जबकि वास्तविकता यह है कि परशुरामजी का बैर केवल हैहय वंशीय सहस्रवाहु से था अर्थात् केवल हैहय वंशीय क्षत्री ही उनके कोप–भाजन बने। अन्य क्षत्रियों से उनके बड़े मधुर सम्बन्ध थे। इस तथ्य को कृतिकार त्रिपाठी जी ने स्पष्टवादिता

के साथ उजागर करते हुए लिखा है :–

''कैसे कहें क्षत्री कुल द्रोही श्री परशुराम,
व्यापक समदर्शी प्रभु अंशावतार थे,
हैहय वंशवालों से इनका था बैर–भाव,
क्योंकि सहस्रबाहु के दानवी विचार थे।''

अपनी कृति 'श्री राम कथा' में डॉ. त्रिपाठी जी ने यत्र–तत्र कतिपय बुन्देली भाषा के शब्दों को प्रयोग किया है, यथा–धनुष यज्ञ प्रसंग में देखिए **''स्यानी निहार रहीं जैसे प्रिय बालक हों।''** इस पंक्ति में 'स्यानी' अर्थात् उम्रदराज़ (प्रौढ़) महिलायें, शब्द का प्रयोग कितना सार्थक और सटीक है–देखते ही बनता है। त्रिपाठी जी का यह बुन्देली–प्रेम अनुकरणीय और स्तुत्य है।

डॉ. राजाराम त्रिपाठी बुन्देलखण्ड के गौरव हैं। वे वयोवृद्ध हैं, ज्ञानोदधि और तपोनिष्ठ हैं। शास्त्रों के कुशल अध्येता हैं और लब्ध प्रतिष्ठ साहित्य विद् हैं। 'श्री राम कथा' की भाँति ही उनकी एक अन्य कृति ''बात से ही ज्ञान भक्ति का प्रभात (तुलसी चरित्र)'' आध्यात्मिक साहित्य की एक मूल्यवान कृति हैं। त्रिपाठी जी 'रामचरित मानस' और 'श्री मद्भागवत'–कथा के ओजस्वी प्रवक्ता के रुप में भी बुंदेलखण्ड में विख्यात हैं।

'श्रीराम कथा' के लिए प्रस्तावना लेखन जैसा दायित्व सौंपकर डॉ. त्रिपाठी जी ने इस पावन–यज्ञ में मुझे भी आहुति देने का शुभावसर प्रदान किया, तदर्थ मैं उनके प्रति सादर कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

रामरतन अवस्थी
प्राचार्य (सेवा निवृत्त)
गिरधरलाल मन्दिर के पास
नौगाँव (छतरपुर) म.प्र.

आमुख

श्रीरामचरितमानस एक दिव्य ग्रन्थ है, ऐसा महाकाव्य है कि श्रीराम चरित्रों का मर्यादापूर्वक, प्रेरणादायक और जीवन के हर पहलू में ग्राह्य वर्णन अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता है। इस संदर्भ में वह प्रसंग उल्लेखनीय है जब राजा जनक के दूत, धनुष भंग के पश्चात्, निमंत्रण देने राजा दशरथ के दरबार में पहुँचते हैं। राजा दशरथ उनसे पूछते हैं–

"भैया कहहु कुसल दोउ बारे। तुम्ह नींके निज नयन निहारे।।
स्यामल गौर धरें धनु भाथा। बय किसोर कौसिक मुनि साथा।।
पहिचानहु तुम्ह कहहु सुभाऊ। प्रेम बिबस पुनि पुनि कह राऊ।।"

महाराजा दशरथ के ऐसे वचन सुनकर दूत इस प्रकार उत्तर देते हैः–

"जिन्ह के जस प्रताप कें आगे। ससि मलीन रबि सीतल लागे।।
तिन्ह कहँ कहिअ नाथ किमि चीन्हे। देखिअ रबि कि दीप कर लीन्हे।।
देव देखि तब बालक दोऊ। अब न आँखि तर आवत कोऊ।।''

अर्थात् दूत कहते हैं कि आपके दोनों बालकों को देखने के बाद अब आँख को और कोई नहीं सुहाता। इसी प्रकार श्रीरामचरितमानस के बाद और कोई रचना उतनी नहीं भाती। तब क्या जो लोग 'राम कथा' या अन्य भगवत् कथाएँ लिख चुके हैं, लिख रहे हैं या भविष्य में लिखेंगे, उनका प्रबुद्ध समाज में कोई स्थान नहीं हैं? ऐसी बात नहीं है। गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में ऐसे विद्वान कवियों को प्रणाम करते हुए लिखा है–

"कलि के कबिन्ह करउँ परनामा। जिन्ह बरनै रघुपति गुन ग्रामा।"
जे प्राकृत कबि परम समाने। भाषाँ जिन्ह हरि चरित बरवाने।।
भये जे अहहिं जे होइहहिं आगें। प्रनवउँ सबहि कपट सब त्यागे।।

इस दृष्टिकोण से 'श्रीरामकथा' का महत्व है वह चाहे जिस

किसी कवि ने लिखी हो। विशेषता का दूसरा कारण यह है कि कलियुग में श्रीराम गुणगान के अलावा दूसरा कोई सुगम साधन नहीं है भव पार जाने का। 'मानस' की अन्तिम चौपाईयों में देखिये–

'एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप व्रत पूजा।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि। संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।।"

इस प्रकार से डॉ. राजाराम त्रिपाठी द्वारा रचित 'श्रीरामकथा' का अपना महत्व है। इसे अद्योपान्त पढ़कर सम्पादित करने में मुझे आनन्द की अनुभूति हुई। इनके लेख से ज्ञात हुआ कि कथा का अधिकांश भाग इन्होंने श्री वृदांवन धाम के हंस सरोवर में रहकर लिखा।

डॉ. त्रिपाठी की इस कृति का मुख्य आधार श्रीरामचरितमानस है किन्तु अरण्यकाण्ड और सुन्दरकाण्ड के कुछ प्रसंग बाल्मीकि रामायण तथा पुराणों से भी लिए हैं। इनकी रचना के कुछ छन्द राष्टकवि मैथिलीशरण गुप्त के साकेत की लय में हैं। इसके अलावा सवैया, कवित्त और तर्ज राधेश्याम की लय में गीत हैं। पूरा काव्य गेय है। इसमें कहीं–कहीं बुंदेली भाषा के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

श्रीरामचरितमानस की तरह उत्तर काण्ड में काक भुशुण्डि जी द्वारा कही श्रीराम कथा का संक्षिप्त वर्णन छन्द संख्या 118 से 136 में दिया गया है।

डॉ. भगवान दास पटैरया
महासचिव, श्रीरामचरितमानस
सत्संग समिति (पंजीकृत) नोएडा

तथि : मार्गशीर्ष सुदी 5 संवत् 2067
दिनांक 10 दिसम्बर सन् 2010 ई.

श्रीगणेशाय नमः

श्रीराम कथा

बाल काण्ड

१.मंगलाचरण

तर्ज राधेश्याम

हे रघुनन्दन दशरथ नन्दन, प्रिय भक्तों के शीतल चन्दन।
हे पतित उधारन, जगतारन, पद कमलों में शतशः बन्दन।।1।।

हे जगरंजन भव–भय–भंजन, दुर्जेय, धर्म–धर–संतन्राम,।
कारण–कृषान शशि सूरज के, तूँ अखिल निरंजन परम धाम।।2।।

स्तुत्य आपके चरनों में, करता हूँ शीश धरके बन्दन।
हे पतित उधारन जगतारन, तेरे पद कमलों में बन्दन।।3।।

कह रही लेखनी लीला लिख, बाँणी बीणा वादिन को भज।
गौरी गणेश आवाहन कर, करके पावन मन ममता तज।।4।।

गुरु पद बन्दन रज चन्दन धर, करता प्रवेश प्रभु कथा द्वार।
अंजनि सुत पूजन अर्चन कर, करता अभिबन्दन बार–बार।।5।।

विध्वंश अमंगल करो सभी, हे ऋद्धि–सिद्धि दाता गणेश।
लम्बोदर गिरजासुत प्यारे, शत शत प्रणाम गौरी महेश।।6।।

जगजननि जानकी रामबाम, उद्भव कारिण संहारिणि तूँ।
है पालनहारी परम शक्ति, प्रिय भक्तों की भव उद्धारिणि तूँ।।7।।

माता ममत्व की मेरी सुन, कब से ले कलम–बुलाता हूँ।
करो कृपा मुझ अज्ञानी पर, आशा का दीप जलाता हूँ।।8।।

आजा आजा मेरी मैया, कृन्दन कर टेर रहा छइयां।
पथ हेर रहा हूं बेर–बेर, क्यों देर कर रही तूं दइयां।।9।।

मेरे अज्ञान मरुस्थल में, छलकादे ऐसी सुधा धार।
जिससे पावन हरि कथा लिखूँ, बह चले हृदय में प्रेम धार।।10।।

मन वीणा का मधुरिम सितार, झंकार उठे श्री राम–राम।
अस्तित्वहीन हो जग नश्वर, क्षण भंगुर समझूँ धरा धाम।।11।।
हे जीवन दायी जीवन भर, जीवन में भरदे ज्योति प्रखर।
जगमग हो जागे ज्ञान ज्योति, मैया छैया सिर पै कर धर।।12।।

अवलम्बन ले श्री चरनों का, वीणा बादिन कुछ मेरी सुन।
तेरा पथ हेरू कलम पकड़, लिखने को रमाकथा की धुन।।13।।

मेरे उर अन्तर में आकर, प्रतिभा कवित्व गरिमा भरदे।
उद्‌गारों में माधुर्य भाव, रस छन्दों की गरिमा करदे।।14।।

ब्यन्जित शब्दों के अलंकार, पुष्पित छन्दों का शुभ्र हार।
रसना रसवन्तों से छलके, श्री रघुनन्दन प्रति मधुर प्यार।।15।।

लिखने को बैठा हूं लेकिन, अवलम्ब नहीं कुछ बुद्धी–बल।
सबको करुणेश पुकार रहा, आओ आसन है हृदय स्थल।।16।।

गीत

आपके आचरणों से राम, बने मानवता के श्रंगार।
पतित–पावन है तेरा नाम, जन जन का हो परम उद्धार।।
नमन है मेरा बारम्बार।।17।।

आपने अवध सम्पदा त्याग, किया दण्डक वन को प्रस्थान।
हुआ मन में न हर्ष विषाद, दिया पितु आज्ञा पर ही ध्यान।।
कष्ट सह कोल–भील से मिले, बहाई प्रेम गंग की धार।
नमन है मेरा बारम्बार।।18।।

दीन सबरी कुटिया में पहुँच, निभाई भक्ति भाव की रीति।
चखे आदर से जूठे–बेर, भक्त वत्सल ये, प्रभु की नीति।।
महा पतित को पावन किया, धन्य हैं रघुवर करुणागार।
नमन है मेरा बारम्बार।।19।।

सभी दीनों के संकट हरण, शरण गति देते तारण तरण।
जिसे अपनाते हैं रघुनाथ, मिटे भव से फिर जीवन मरण।।
दीन पर करो दया की दृष्टि, करो मेरा भी बेड़ा पार।
नमन है मेरा बारम्बार।।20।।

कवित्त

जिसका गणेश शेष शारद न पायो पार,
चार वेद श्रुति–पुराण नेति–नेति–गाते हैं।
दनुज देव मनुज सब माया में जिसकी लिप्त,
योगेश्वर ऋषियों के ध्यान में न आते हैं।।
भनत करुणेश बहुत दर्शन के प्यासे भक्त,
कृपा बिन्दु पाते नहीं प्यासे रह जाते हैं।
किलकत वही करुणाकर दशरथ के आँगन में,
दौर–दौर माता के कण्ठ लग जाते हैं।।21।।

२. सती मोह

एक बार त्रेता जुग माहीं। सम्भु गए कुंभज रिषि पाहीं।।
संग सती जगजननि भवानी। पूजे रिषि अखिलेश्वर जानी।।
राम कथा मुनिबर्ज वखानी। सुनी महेस परम सुखु मानी।।
मुनि सन बिदा मागि त्रिपुरारी। चले भवन संग दच्छकुमारी।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

शोभित हिम–शिखरों में सुन्दर कैलाश तुंग,
अंग में भुजंग–भस्म, चन्द्रा छवि छाती है।
बहती सुरम्य–पवन, शीतल सुगन्ध लिये,
शिव–शिव, सन्नाती सी, शिव के गीत गाती है।।
बैठे कृपाला, मृग छाला, वट छाया तले,
डमरू त्रिशूल शीश गंगा लहराती है।
त्यागी समाधी–शिव भजन लगे–राम राम,
सुनके हरिनाम सती, उत्सुक हर्षाती है।।22।।
कहने लगे शम्भु चलो कुम्भज के आश्रम चलैं,
राम कथा सुनकर कैलाश लौट आवैंगे।
कुम्भज सुनाएँगे राम की पुनीत कथा,

उनको बिस्तार पूर्ण भक्ती बतावैंगे।।
ऊबे यहाँ से उठो दक्षिण की यात्रा करैं,
नन्दी सवारी कर तुम्हें भी घुमायेंगे।
सुनकर शिव वचन भवानी मूँ फेर कहैं,
आप जाय कुम्भज पास हम तो न जावैंगे।।23।।
राम कथा आप जो सुनाते मुझे रातों दिन,
उससे भी अधिक कहीं कुम्भज समुझायें क्या।
आप ही श्री राम कथा जाकर समुझिये वहीं,
मैं तो नहीं जांऊ मुझे कुम्भज बतायें क्या।।
आश्रम में यहीं नाथ भजन करूं राम नाम,
दक्षिण तक यात्रा कष्ट व्यर्थ में उठाएं–क्या।
फिर भी सती साथ शिव हठ–पर चलीं बेमन,
बेमन सुनी राम कथा शान्ति उन्हें आए–क्या।।24।।
आश्रम से कथा श्रवण करके श्री भोले नाथ,
नन्दी पर उमा साथ गगन पंथ आते–थे।
गोद में विराजी श्री गौरा महरानी–साथ,
उन्हें भूमितल की बन शोभा दिखलाते थे।।
राघवेन्द्र उसी समय करते नर लीला–फिरैं,
सीता अपहरण दुःख करुणा–दर्शाते थे।
देखा करुणामय दृश्य शंकर नभ मण्डल–से,
स्वामी नर कौतुक पर मन में मुसुकुराते थे।।25।।
पृथ्वी पर उतर शम्भु दूर से प्रणाम किया,
जय हो सच्चिदानन्द मस्तक नबाया था।
लीला समय उचित न ही परिचय बढ़ाना ठीक,
मन से ही राघव की जय हो मनाया था।।
नन्दी समीप सती बैठी यह शम्भु नमन,
देखा भवानी मन संसय–भ्रम–आया था।
स्वामी 'करुणेश' शम्भु दाता है त्रिभुवन के,
समझ न ही पाई शिव सीस क्यों नबाया था।।26।।

तर्ज राधेश्याम

छा गया भवानी के मन में अपने ही भ्रम का अंधकार,
होनी बस समुझ नहीं पाई, समुझाया शिव ने बार–बार।
कोई भी कितना यत्न करे होनी तो होकर रहती है,
विपरीत समय के आने पर पश्चिम को गंगा बहती है।।27।।

गीत

किया भोले ने हृदय विचार, न माने देवी बात हमार।
समय कुछ गड़बड़ है।
अपने रमैया की महिमा बताई। उनकी समझ में एक न आई।
हुआ नारायण नर अवतार। कहा भोले ने बारम्बार।।
लिया नृप दशरथ घर अवतार। यही हैं स्वामी जगदाधार।।
समय कुछ गड़बड़ है।।28।।

कवित्त

पतिव्रता सती ने न मानी पती की बात,
आता विपरीत समय बुद्धि बिगड़ जाती है।
सोचते है सभी लोग अपनी भलाई को,
अपनी ही सोच कभी काँटा बन जाती है।।
होनी की होती है होनहार घड़ी प्रवल,
होनी के पूर्व काम बुद्धि बिगड़ जाती है।
होनी बस सीता का रूप सती धारण किया,
बैठी मग माँहि वहाँ करुणा सुनाती हैं।।29।।
देखत सती कृत छद्म बोले श्री राघव मणि,
आप यहाँ दंडक में पंथ क्या भुलानी है।
सुनते ही राघव प्रश्न सती सहम लज्जा से,
मैंन शिव भोले की बात नहीं मानी है।।
ऐसी नशानी बुद्धि सीता बन परीक्षा ली,
अपनी ही भूल बनी कष्ट की निसानी है।
दूँगी क्या उत्तर मैं जाकर त्रिपुरारी को,
अन्तर के वेत्ता शंभु क्षमाशील दानी हैं।।30।।

एक झूठ पीछ कई झूठें प्रमाण गढ़ौ,
तो भी शुद्ध झूठे सत्य हो ही न पायेंगे।
इसी तरह सत्य बीचु झूठे शब्द जोड़े जायें,
सत्य की कसौटी में वे ठहर न पायेंगे।।
लज्जित पति पास पहुँच बोलीं असत्य वाक्य,
होगा परिणाम प्रेम रूपक मिट जायेगे।
नीचा लज्जामय सिर किये सती कहने लगीं,
आप जो बताते रहे वही हम मनायेंगे।।31।।
ध्यान लगा शम्भु ने चरित सब जाना जब,
सोच रहे भक्ती की लाज अब बचानी है।
होकर उदास शम्भु मन में विचार रहे,
मेरी माँ सीता तो जगत की भवानी है।।
भक्ति रूप निर्मल परमेश्वर की परा शक्ति,
निर्गुण में लीन रूप जैसे दूध पानी है।
मातु रूप धारण कर सती ने परीक्षा ली,
सोचा न समझा कुछ कैसी हठ ठानी है।।32।।

गीत

हुआ अब भोले को बैराग, सती का किया मानसिक त्याग।
गोद में नहीं विठाया, अलग आसन लगवाया।।
लिखा है जो भी बीच लिलार, वही मिलता है कर्माधार।
सती का मन घवड़ाया, अलग आसन लगवाया।।
सती के उठी बिरह की पीर, पती बिन लगा विगड़ने धीर।
शम्भु की अनुपम माया, अलग आसन लगवाया।।
सती के बही युगुल दृग धार, करुण करुणामय मन में भार।
किया जो ओ फल पाया, अलग आसन लगवाया।।33।।

कवित्त

लम्बी उसासें भर सती सोच करने लगीं,
चैन नहीं आठों याम करम थाम रोती हैं।

आँसू से भीगे छोर पीड़ा पति त्याग घोर।
पाश्चाताप करते हुये अपने हाँथ मलती हैं।।
नारी का जीवन धन होता है पति प्रेम,
बिना पति प्रेम सती ज्वाला सी जलती हैं।
भनत 'करुणेश' बिरह व्यथा की अथाह कथा,
सती इसी धारा में डूबती उछलती हैं।।34।।
नारी का धर्म – कर्म, केवल पति पूजा है,
पति से गति प्राप्त हो पति ही श्रंगार हैं।
पती बिना आधा अंग देगा फिर कौन संग,
पती बिना नारी का सूना संसार है।।
आज सती पती प्यार सोच रही बारम्बार,
भोले नाथ क्षमा शील अंततः उद्धार है।
समझ अपराध सती तड़फ रहीं मछली सी,
झूठ बोल शिव से किया छल का व्यौहार है।।35।।
बिना ही बुलाए सती पहुँच गईं पितृ गेह,
शिव का अपमान देख देह भस्म करतीं हैं।
देह तजत हरि से वरदान पाय जन्म लिया,
गिरिराज गृह बाल लीला रत रहती हैं।।
सुनि के भविष्य मुनि नारद से शैलसुता,
शिव को रिझाने वन जाय देह तपतीं हैं।
आशुतोष वरण कर पहुँची कैलाश तुंग,
रामकथा सुनने की अरज शिव से करतीं हैं।।36।।
भोले नाथ कहने लगे सुनिये गिरिराज सुता,
सावधान होकर सुनो संसय भ्रम लाना नहीं।
मेटत भव बन्धन को दुख व ताप–कृन्दन को,
भक्तों से कहना, अभक्त से बताना नहीं।।
जीवन का मूल तत्व राम की अगाघ भक्ति,
श्रद्धा विश्वास साथ सुनिये भ्रम लाना नहीं।
बोले महेश सुमुखि सुनिये श्रीराम कथा,
मेरा उपदेश कहीं फिर से भूल जाना नहीं।।37।।

राम कथा काम धेनु कामना को पूर्ण करै,
राम कथा सात्विकी समाज को सुहाती है।
सुन्दर करतारी है राम कथा हाथों की,
राम कथा संसय भ्रम, पन्छी उड़ाती है।।
कुभंज से सुनी नहीं मन से श्रीराम कथा,
सुने बिना राम कथा सती कष्ट पाती है।
सुनो सज्जन वृंद सब प्रेम साथ राम कथा,
राम कथा दानव को मानव बनाती है।।38।।

३. श्री रामजन्म

जब जब होइ धरम कै हानी। वाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।
दसरथ पुत्र जन्म सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानन्द समाना।।
परमानन्द पूरि मन राजा। कहा बोलाइ वजाबहु बाजा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

अखिल निरंजन नारायण प्रभु निर्विकार,
प्रकट हुये चक्रवर्ति दशरथ भूप घर में।
खेले कौशिल्या की गोदी में लीला कर,
माँगा वरदान भूप मनु ने जो बर में।।
राम लखन भरत रिपुसूदन ये चारो अंश,
प्रकटे रामनौमी को अर्ध दिन प्रहर में।
हर्षित चर–अचर धरणि अम्बर दिशायें हुईं,
परमानन्द दशरथ नृप हर्ष था नगर में।।39।।
कनक कलस तोरन ध्वज चौकें सजाई गई,
मणियों के दीप जले उज्वल प्रभा छा गई।
स्वस्ति पाठ होने लगे सरयू के घाट–घाट,
सुरभित सुगंध्ध पवन मन्द लिये आ गई।।40।।

मंगल गीत गाती हर्षाती लिये कनक थाल,
हर्षित आवाल बृद्ध कनक भवन आ गये।
राम जन्म उत्सव में मानव नहीं देव सभी,
दिनकर भी अपनी गति मग्न हो भुला गये।।41।।
अवध की नवेलीं सहेलीं बधूटीं चलीं,
मोतियों के थाल सजे पूजन को हाँथों में।
महलों के द्वार व झरोखों से लाजा पुष्प,
कन्या वर्षातीं द्विज चन्दन रँगें माँथों में।।
आये दिगपाल देव मानव बन उत्सव बीच,
रिद्धि–सिद्धि स्वागत का थाल लिये हाँथो में।
भनत 'करुणेश' दान घर घर लुटाया गया,
दशरथ का द्रव्य कोष विखर गया पाथों में।।42।।
घूँघट घटा से कभी झलकें चन्द्र बदनी मुख,
चमकें कभी चपला से कर्ण फूल गालों में।
झींगुर सी झुनक बोल नूपुर के झुनुक उठे,
मानो घन घहर उठे, बाद्यों की तानों में।।43।।
गीतों के भिन्न भिन्न दादुर से बोल रहे,
बहती पुरवाई पवन प्रेम के झकीरों में।
साजे साज आई रितु पावस की अवधपुरी,
वर्षे रस राम जन्म उत्सव का खोरों में।।44।।
उत्सव में आए ऋतुराज आज अवध पुरी,
टेसू पलास कुसुम लाली बिखरा गये।
केशर–कचनार–जुही–गेंदा–गुलाब–फूल,
केतकी–कनैर–बाग–सरयू तट छा गये।।45।।
सघन आम्र पल्लवदल बगिया बन उपवन में,
फूलों के बन्दन बार बाँध के सजा गये।
पंचम स्वर कूक कूक कोयल सुनाने लगी,
कलियों से मधुर राग भ्रमर गीत गा गये।।46।।

४. विश्वामित्र आगमन

मुनि आगमन सुना जब राजा। मिलन गयउ लै विप्र समाजा।।
चरन पखारि कीन्हि अति पूजा। मो सम आजु धन्य नहिं दूजा।।
केहि कारन आगमन तुम्हारा। कहहु सो करत न लावउँ बारा।।
सब सुत प्रिय मोहि प्रान की नाईं। राम देत नहिं बनत गुसाईं।
कहँ निसिचर अति घोर कठोरा। कहँ सुन्दर सुत परम किसोरा।।
तव वशिष्ट वहुबिधि समुझावा। नृप सन्देह नास कहँ पावा।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

बैठक यज्ञ शाला में सोच रहे विश्वामित्र,
साधु सन्त–पूजा–पाठ करने नहीं पाते है।
चाहता हूँ विष्णुयज्ञ करना मैं कैसे करूँ,
बेद–मंत्र सुनते ही दैत्य बृन्द आते हैं।।
करते हैं नष्ट–भ्रष्ट समिधा साकल्य सभी,
मान्स रुधिर मदिरा फेंक हम को सताते हैं।
होकर उद्विग्न मन आश्रम मे विश्वामित्र,
बैठे समाधि साध प्रभु को मनाते हैं।।47।।
अन्तर भाव प्रकट हुआ निर्भय हो जायें सन्त,
मानव वन सगुण रूप धारण कर आऊंगा।
दानव दुष्ट गंजन कर भंजन अधर्म करूँ,
सोते हुये भारत को आकर जगाऊँगा।।
मेरी नर लीला को गायेगे सन्त सभी,
सुख दुख के दृश्य सभी जग को दिखाऊँगा।
परम बड़भागी भूप दशरथ के आँगन में,
बालक बन केल करूँ सब को हर्षाऊँगा।।48।।
ऐसा आभास हुआ कौशिक मुनि अन्तर में,
उछल पड़े जय हो नाथ कहते हर्षाते हैं।
आश्रम के सभी शिष्य वृन्द बीच कौशिक जी,

अन्तर का भाव शुद्ध सबको बताते हैं।।
अब तो 'करुणेश' बैचेनी प्रभु दर्शन की,
दन्ड व कमंडल लिये अवधपुरी जाते हैं।
सरजू स्नान कर पहुँचते हैं राज द्वार,
महाराज दशरथ को बात ये सुनाते हैं।।49।।

दाता सिरोमणि भूप आया आज भिक्षा को,
दीजिये दयालू आस बंचित न कीजिये।
आश्रम में मुझको सताते हैं दैत्य बृन्द,
सुनते प्रजा के कष्ट मेरे सुन लीजिये।।
होम–यज्ञ–पूजन हम कुछ भी कर पाते नहीं,
कब तक दुख दारुण सहें हम पर पसीजिये।
दानी शिवि वंसज हैं आप चक्रवर्ति भूप,
भिक्षा में प्यारे राम लखन मुझे दीजिये।।50।।

सुनिये नाथ दूँगा मैं सारा धन धाम कोष,
रानियों समेत स्वयं तन भी दे डालूँगा।
शिवि का मैं बंसज हूँ प्राण भी समर्पण करूँ,
कहिये तो स्वयं चलूँ बचन नहीं टालूँगा।।
चौथे पन पायउ सुत चारों प्राण प्यारे मुझे,
प्राण तो निकालूँ राम लखन न निकालूँगा।
मुझको मुनिनाथ प्राण प्यारे हैं चारों–पुत्र,
शेष आप चाहें जो बचन नहीं टालूँगा।।51।।

मेरे गभुवारे दुलारे राम छोटी उम्र,
कैसे ह्रदय टुकड़े को काट के निकाल दूँ।
छैइयों के जाने से मैया भी होंगी दुखी,
कैसे कनक महल नाथ विष की बेल गाड़ दूँ।।
छौना खिलौना दृग तारे हमारे नाथ,
मुनिवर तुम्हें राम सौंप आँखें ही फाड़ दूँ।
कैसे दुलारे मेरे लड़ेंगे दुष्ट दैत्यों से,
चलता हूँ सैन्य साथ सारे दैत्य मार दूँ।।52।।

ऐ हो नृपाल गाल मारते शिवि बंशी बने,
देने को राम लखन ममता में भूल रहे।
मेरे अनुकूल दान देने को मुखरे तुम,
राजन तुम्हारे वाक्य मेरे प्रतिकूल रहे।।
ज्ञानी बने पर राम साहस समझते नहीं,
आप स्वयं दैत्यों से लड़ने को फूल रहे।
राम लखन युगल यज्ञ रक्षण समर्थ–बीर,
राम बिना आश्रम के यज्ञ पाठ सभी ढ़हे।।53।।

कौशिक के वाक्य श्रवण करके श्री गुरुवशिष्ठ,
आये कहा राजन इन्हें पुत्र सौंप दीजिये।
धनुर्वेद ज्ञाता–विधाता हैं विश्वामित्र,
देगें दिव्य ज्ञान आप अपयश न लीजिये।।
मुनिवर की सेवा से कीर्तिमान होंगे पुत्र,
सौपियें कुमार इन्हें चिन्ता न कीजिये।
मुनिवर के बचन सुन दशरथ बुलाये सुत,
हाथ पकड़ो नाथ इन्हें आशीर्वाद दीजिये।।54।।

५. ताड़का वध

चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई।।
एकहिं बान प्रान हर लीन्हा। दीन जान तेहि निज पद दीन्हा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

पंथ पकड़ आश्रम का तीनों पथिक चलने लगे,
कौशिक सुनाते कथा दन्डक बन श्राप की।
श्रापित भूमि करिये पवित्र राम चरनों से,
मोक्ष हेतु पदवी है पावन शुभ नाम की।।55।।

तर्ज राधेश्याम

कौशिक कुछ चलने पर बोले, इस वन में कृत्या रहती है,
उसके कारण ही हे राघव दुर्गन्ध हवा में बहती है।।56।।

कवित्त

भक्षण कर लेती, कोल भील साधु सन्तों को,
बन के सब जीव जन्तु पच्छियों को खाती है।
हाँथ में त्रिशूल लिये, दौड़ती है गर्जन कर,
करती भयंकर नाँद धरा डोल जाती है।।
खाती नर मान्स त्रास छाई है चारों तरफ,
ताड़क वन रहने से ताड़का कहलाती है।
सावधान राघवेन्द्र चलिये धनु–तानकर,
राघव मणि मेरी भी धड़क रही छाती है।।57।।

निर्भय चलें नाथ, साथ हम धनुवाँण लिये,
आपकी कृपा से आँच आने न पायेगी।
आये तो माँन्साहार करना भुला दूं उसे,
दौड़ी यदि सत्य कहूँ मारी भी जायेगी।
अपने कुकर्मो का होगा फल प्राप्त उसे,
अब तक स्वछन्द रही, अब तो सजा पायेगी।
देखूँ तो कैसी दुर्दांत दुष्ट अबला है,
एक वाँण से ही जम लोक पहुँच जायेगी।।58।।

राम बल परीक्षा का आया आज प्रथम पर्व,
आहट के पाते ही दौड़ी दहाड़ती।
देखा बीभत्स रूप वनके जीव सहम गये,
आँधी सा वेग तीव्र वन को उखाड़ती।
खीसै भयंकर जीभ लोहित सी लाल लाल,
पदाघात करती हुई पादप उखाड़ती।
लाली सी दिखी आँख लाल रक्त देह सभी,
कौशिक की ओर हेर राम को निहारती।।59।।

दौड़ी फन्नाती सन्नाती हुई नागिन सी,

विजली सी टूट पड़ी दाँत पीस ताड़का।
बोली आज जी भर मान्स खा कर अघाउँगीं,
चूसने से हड्डी मजा आयेगा दाढ़ का।
राम मुसुकुराते हुये कहा लखन लाल सुनो,
अवला क्या ऐसी हुआ करती है चांडका।
मारूँ अगर आज तो जाती रघुवंश प्रथा,
देखिये तो कैसा तमासा है राड़ का।।60।।

विश्मामित्र कहने लगे राम नीति कहते हो,
वीर अबलाओं का घात नहीं करते।
अबला यदि अपभ्रन्स वाँणी भी बोले तो,
शिष्ट पुरूष उससे विबाद नहीं करते।
लेकिन यदि अबला में दुर्गुण आतताई के,
उसको मृत्यु दंड बीर देते नहीं डरते।
नीति संदेश सुनि कौशिक संकेत पाय,
तरकस से एक बांण खींच लिया कर से।।61।।

कृत्या इधर गर्जन कर आंधी सी टूट पड़ी,
दाढ़ें चबाती कहे तीनों को खाऊँगी।
पीने से रक्त आज होगी पिपासा शान्त,
आये आनंद आज सब कुछ चबाऊँगी।
जटा नोच बाबा के खीचूंगी बालक दोई,
किसी खोह भीतर बैठ चटनी बनाऊँगी।
अनायास पाकर ये ऐसा दुर्लभ भोज्य,
आज युगुल बंधुओं को जी भर तरसाऊँगी।।62।।

मेरी बात सुनकर तू अब भी हो सावधान,
नारी तूं अवला है धनुष न उठाऊँगा।
मैं हूँ रघुवंशी राम दीनों पर दया करूँ,
वंश की प्रतिष्ठा पर दाग न लगाऊँगा।
मेरी बात सुनकर भी नारी तूं रुकती नहीं,

तेरे अरमानों को धूल में मिलाऊँगा।
मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहते री दुष्टा सुन,
तूं है निर्लज्ज अधिक बात न बढ़ाऊँगा।।63।।
सुनकर श्रीराम बचन हथिनी सी दौड़ पड़ी,
करती घोर गर्जन दाँत पीस रही शान से।
जैसे पतिंगे दौड़ पड़ते हैं दीपक पास,
वैसे श्रीराम निकट दौड़ी अज्ञान से।
राघवमणि कहने लगे अब भी हो सावधान,
प्राण क्यों गवाती है झूठे अभिमान से।
तब तक श्रीराम को संकेत मिला कौशिक का,
ताड़का संहार किया सिर्फ एक बान से।।64।।

६. यज्ञ रक्षा

प्रात कहा मुनि सन रघुराई निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई।
होम करन लागे मुनि झारी। आपु रहे मख कीं रखवारी।।
सुनि मारीच निसाचर क्रोही। लै सहाय धावा मुनि द्रोही।।
बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागर पारा।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

प्रेम से बिभोर हुये कौशिक कहे धन्य धन्य,
राम सीस पर्सन कर आश्रम में आये थे।
मार्ग में सुनाते श्रुति शास्त्रों की धर्म कथा,
आश्रम पहुंचते ही आसन बिछाये थे।।
कृत्या कहानी बखानी मुनि कौशिक ने,
सुनकर शिष्य जुगुल रूप देखत हर्षाये थे।
भोग में मुनिनाथ किये अर्पण कंद मूल फल,
भाव सहित रामचन्द्र लखनलाल पाये थे।।65।।
मिल कर सब ऋषियों ने मंडप सम्पन्न किया,

केला आम पल्लव के तोरन बँधाये गये।
गणपति गौर पूजन साथ कलश प्रतिष्ठा हुई,
सर्व भद्र नव ग्रह के पीठ भी सजाये गये।।
होता होतारा यज्ञ ब्रम्हा का बरण हुआ,
समिधा साकिल्य सप्त सागर बुलाये गये।
बैठे शिष्यन के साथ कौशिक यज्ञ मंडप में,
मंत्र स्वस्ति बाचन के उँचे स्वर गाये गये।।66।।
खड़े यज्ञ मंडप की रक्षा में युगुल बन्धु,
दोनो सिंह हाँथो से धनुष सहलाते थे।
क्रोधित श्री लखन लाल, लाल लाल आँखे किये,
दैत्य दलन करने को बाजू फड़काते थे।।
मन्डप में खड़े हुये राघवेन्द्र शान्त रूप,
शोभा के धाम धनुषधारी मुस्काते थे।
कोमल कर फेरत धनु हेरत हरत सबके मन,
निर्भय कर सन्तों के हौसला बढ़ाते थे।।67।।
बेदमंत्र स्वाहा ध्वनि सुनके सुबाहु दैत्य,
दौड़ा दैत्य दल बल साथ सस्त्र लिये हाथ में।
आते ही लक्ष्मण साथ भीषण संग्राम हुआ,
हुई रक्त रंजित धरा लाशें पटीं पाथ में।।
दौड़ा सुबाहु लिये सैलखंड़ गर्जन कर,
बज्र शक्ति लखन लाल मारी खल माँथ में।
भागे निशाचर जो आगे थे पीछे हटे,
सोया सुबाहु समर भूमी के साथ में।।68।।
इधर यज्ञ मंडप में पहुँचा मारीच दैत्य,
माया प्रवीन दैत्य गर्जा राम–मारूँगा।
लक्ष्मण को मारूँ यज्ञ मडप विध्वंस करूँ,
आज ब्रह्म श्रृष्टि को बिनष्ट कर डालूँगा।।
सुनकर दुष्वचन श्री राघव जी सोच रहे,

मारूँ तो अपनी मैं लीला बिगाडूँगा।
माया मृग बनकर ये आयेगा पंचवटी,
तभी इसे नासिक समीप में पछाडूँगा।।69।।
हर्षित हुये संत वृंद होने लगी शंख ध्वनि,
गूंजी यज्ञ मंडप में जय जय श्रीराम की।
हो कर निर्भीक साधु करने लगे कीर्ति गान,
मंगल मय छाई ध्वनि जय हो श्री राम की।।
धन्य भूप दशरथ व माता कौशिल्या धन्य,
हर्षत हुये रूप देख शोभा श्री राम की।
कोई निष्काम भाव भजते हैं राम राम,
कोई मुनिश्रेष्ठ प्रशंसा करे नाम की।।70।।

७. श्री सीता अवतरण

तब मुनि सादर कहा बुझाई। चरित एक प्रभु देखिअ जाई।।
धनुष जग्य सुनि रघुकुल नाथा। हरषि चले मुनिबर के साथा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

पावस के पूर्व प्रथा मिथिला में कृषकों की,
राजा जनक हल ग्राह स्वयं प्रथम करते थे।
सभी कृषक करते अभिनन्दन भूपमिथिला का,
राजन भी कृषकों की कमी पूर्ण करते थे।।
जिस दिन किसानों का होता यह पुण्य पर्व,
गोचर निशुल्क सब किसानों को मिलते थे।
आया किसानों का मिथिला में कृषक पर्व,
गाते गीत हर्षित मन आज सब विचरते थे।।71।।
रानी सुनैना साथ आये श्री राजा जनक,
कृषकों ने आते ही स्वागत सम्मान किया।
बेदमंत्र गूँज उठे हर्षित सब कृषक जन,

राजन ने हल को चलाना प्रारंभ किया।।
निकला भूमि मंथन पर पृथ्वी से स्वर्ण कुंभ,
कुम्भ से अयोनिज उत्पन्न हुई पुत्री सिया।
अम्बर से देव बृन्द फूल वर्षाने लगे,
हर्षित हो जनक भूप रानी ने पालन किया।।72।।
राजा जनक पुत्री विवाह पूर्व सोच रहे,
पुत्री अयोनिज उत्पन्न परा शक्ती है।
त्रिभुवन में शक्तिमान होगा अयोनिज जो,
व्याहूँ उसी के साथ सीता प्रभु–भक्ती है।।
शिव से अधिक होगा जो तानेगा शम्भु धनुष,
ब्रह्म पहिचान हेतु यही एक युक्ती है।
भनत 'करुणेश' प्रण ठानो विदेह राज,
लक्ष्मी नारायण की जोड़ी वेद उक्ती है।।73।।
सीता नारायण की इच्छा रूप परा शक्ति,
सूर्य और किरणों सा साथ भी निभाती है।
पालन श्रजन श्रृष्टी का करती संहारण भी,
लीलाधर–लीला में लीला दिखाती है।।
नर व नारायण अवतरण में बदरी बनीं,
कृष्णा अवतार में रूक्मिण रूप आती है।
रामावतार में वही जनक बेटी बनी,
सत्य शील शोभा धाम सीता कही जाती है।।74।।
निश्चय किया मिथिलापति सीता विवाह समय,
शम्भु धनुष अजगव जो चढ़ा के दिखायेगा।
सीता बिवाह करूंगा मैं उसी के साथ,
पुत्री के साथ वही त्रिभुवन कीर्ति पायेगा।।75।।
सोच रहे आश्रम में बैठे इधर विश्वामित्र,
देकर पुत्र मुझको भूप कीन्हो उपकार है।
मैं भी उपकार का कुछ बदला चुकाना चहूं,

समझें चक्रवर्ती भूप और समुझे संसार है।।
जबसे कलंकित हुये श्रवण श्राप हत्या से,
तभी से भूपालों ने तोड़ा व्योहार है।
धनुर्भंग राम से कराऊँ अब मिथिला चल,
सीता स्वयंम्बर समय अच्छा विचार है।।76।।
व्यापक निरंजन नारायण अवतार राम,
बाँण एक से ही दुष्ट ताड़का संहारी है।
मेरी मख रक्षा कर मारा सुवाहु दैत्य,
शम्भु धनुष भंजन को राम शक्ति भारी है।।
जान राम सुंदर सुजान अति बल निधान,
कौशिक ने मिथिला की कर दी तैयारी है।
भाषत 'करुणेश' राम लखन से विचार कहा,
चलो आज मिथिला वहां धनुष यज्ञ बारी है।।77।।

८. अहिल्या उद्धार

गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर।
चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

मिथिला नगर आते समय वीहण स्थान मिला,
दूर्वा हरित बेल वृक्ष, सुन्दर थल है ही नहीं।
आते नहीं नजर के पसारे कही पंछी जीव,
जीव जन्तु सूना वन खाली है कुछ भी नहीं।।
उजड़े हुये आश्रम पास पत्थर की शिला पड़ी,
मिट्टी से दवी लगी काई धूल कहीं कहीं।
देख चकित शिला को कहते हैं राघवेन्द्र,
गुरू जी वतावें यहां कैसी है शून्य मही।।78।।

सुनकर अहिल्या कथा राघवेन्द्र कहने लगे,
मुनिवर अहिल्या तो अबला बिचारी थी।
दोषी थे देवराज छलकर विगाड़ा धर्म,
गौतम ने श्राप दिया उनकी मति मारी थी।।
नारियों को पुरूष वर्ग युगों से सताता रहा,
गौतम ने सोचा नहीं बात न सँभारी थी।
पति परायण शुद्ध नारी को तप बल से,
करके पाषाण शिला दया न विचारी थी।।79।।
करें पुरुष पतित काम होते बदनाम नहीं,
नारी पर एक नहीं सौ–सौ इल्जाम हैं।
आज भी समाज पक्ष लेता है पुरूषों का,
नारी बिचारी एक अवला बदनाम है।।80।।
कौशिक से बार बार पूंछ रहे राघवेन्द्र,
कैसे थे गौतम संन्त शान्ती जो धर न सके।
सन्तों का ह्रदय हुआ करता नवनीत तरह,
नारी की ब्यथा नाथ गौतम क्यों हर न सके।।81।।
सृष्टी की सृजनहार नारियाँ है देवी रूप,
पृथ्वी सी धैर्यवान ममता की गागर हैं।
अपने ग्रहस्थी कर्म नारी धर्म पालन करें,
शिशु के प्रतिपालन में करुणा की सागर हैं।।82।।
सावन श्रंगार पति भावन गृह दीपक सी,
उसी को सतायें पुरूष दुर्गुण बताकर के।
भारी मन करके शिला देख रहे करुणा कर,
होने लगे अश्रुपात दुखी दया सागर के।।83।।
कौशिक मुनि कहने लगे धन्य तुम्हें दया सिन्धु,
माया पति राम आप विश्व को नचाते हैं।
काम क्रोध दया लोभ होनी अनहोनी सब,
लीला है अपरम्पार आप ही दिखाते हैं।।

अपनी पद रजसे अहिल्या उद्धार करो,
कहती श्रुति आप पतित पावन कहलाते है।
भनत 'करुणेश' शिला नारी अहिल्या हुई,
कौशिक कहें जय हो, देव फूल वर्षाते हैं।।84।।

९. गंगा दर्शन

चले राम लछिमन मुनि संगा। गए जहाँ जगपावनि गंगा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

गंगा के दर्शन कर कहने लगे विश्वामित्र,
पावन जलधार सूर्य वंशज कहलाती है।
अधमों की तारन तरन कीजिये प्रणाम राम,
करती पाप दूषण नष्ट मुक्ति भुक्ति दाती है।।
मन्जन स्नान किये मिलती है मनको शान्ति,
धारा छलकती हुई मन को लुभाती है।
शीश में जगदीश शम्भु गंगा को धारन कियो,
हिमगिरि की पुत्री यह गंगा कहलाती है।।85।।
देखिये तो कैसी तंरगें उमंग भरीं,
ढुलक रहीं श्रेणियों की बेणियाँ विदारतीं।
ढुलक ढलक ढ़ालो में छलकत छहरात कहीं,
लपकत कगारों के पादप उखाड़तीं।।
घहर घहर करतीं कहीं हर हर हर नाम लेत,
सीधीं सर्रात कहीं झाड़ियों को फारतीं।
जातीं उफनात पति सागर से मिलने को,
व्याकुल हैं विरह पीर धीर न सम्हालतीं।।86।।
देखत हिमालय खड़े बेटी की आतुर गति,
बेटी क्या मेरा घर सूनाकर जायेगी।
कहते हैं तट के सब तरुवर देख जाते हुए,

गंगे बहिन बिछुड़न दे तर्स नहीं खाओगी।।
आयेंगी यादें हमें तेरे फुहारों कीं,
जाते समय यूं ही गीत गाकर रुलाओगी।
पल भर तो ठहर हाय विदरत हम सबका हृदय,
इतना बता देवी हमें कब तक लौट आओगी।।87।।
देखो राम जल के जीव कैसे बिहार करें,
गाते विदाई गीत पंछी कछारन में।
आये विदाई समय सारस मृग जीव सभी,
बगुले ग्राह बन्दर सब घूम रहे पारन में।।
ल्याये भगीरथ नृप सगर वंश तारन को,
महिमा अपार गंग अधमी उद्धारन में।
कीजिये प्रणाम राम मिथिला अब शीघ्र चलें,
आशिष राघवेन्द्र लेव शम्भु धनुष टारन में।।88।।

१०. विश्वामित्र–राजा जनक मिलन

बिश्वामित्र महामुनि आए। समाचार मिथिलापति पाए।।
सहज बिराग रूप मनु मोरा। थकित होत जिमि चन्द चकोरा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

कौशिक मुनि स्वागत में आये श्री जनक राज,
बिप्रन को लेकर पधारे गुरु सतानन्द।
पूजन पदबन्दन चारु चन्दन समर्पण कर,
भूले किशोर देख जनकराज ब्रह्मानन्द।।
दोनों हाथ जोड़ प्रश्न करने लगे कौशिक से,
कहो नाथ किनके ये बालक आनंद कन्द।
इन्हें देख मेरा सब भूला है बह्म ज्ञान,
रागी बना हूं नाथ रग रग में परमानन्द।।89।।

दोनों सुधाकर समाये हृदय सागर में,
जाता रहा ब्रह्म ज्ञान भूल गया देह भान।
युगुल रूप बगिया में देख मैं भटकने लगा,
रागी बना हूं नाथ मेरा सब गया ज्ञान।।
अँखियन समाये जात दोनों किशोर नाथ,
काम को लजाती है इनकी गजगमन शान।
मंजुल मुस्कान अधर गोले कपोल लाल,
कीट मुकुट कुन्डल हाँथ धारे हैं धनुष बान।।90।।
राजन किशोर युगुल भूप चक्रवर्ती के,
बड़े पुत्र श्याम वर्ण राम इन्हें कहते हैं।
गौर वर्ण लखन लाल दोनों छोड़ अवध धाम,
धनुर्वेद शिक्षा हेतु मेरे निकट रहते हैं।।
दोनों कुमार दया करुणा के सागर हैं,
साधु सेवा करते हुये दैहिक कष्ट सहते हैं।
मेरी यज्ञ रक्षा कर संहारा है दैत्य बल,
रूपराशि युगुल बंधु प्रेम पथ विचरते हैं।।91।।

११. मिथिला भ्रमण

नाथ लखनु पुर देखन चहहीं। प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं।।
जौं राउर आयसु मैं पावौं। नगर दिखाइ तुरत लै आवौं।।
जुवतीं भवन झरोखन्हि लागीं। निरखहिं राम रूप अनुरागीं।
कहहु सखी अस को तनु धारी। जो न मोह यह रूप निहारी।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

लेकर गुरु आज्ञा युगुल जोड़ी पधारी नगर,
दर्शन को दौड़ पड़े मिथिला के नारी–नर।
उमड़ पड़ी भीड़ नगर बीथी चौराहों में,
कोई खड़े देख रहे महलों के छज्जों पर।।

आकर श्री राम निकट कहते हैं हाथ जोड़,
चलिये श्रीमान् ठहर लीजे हमारे घर।
युगल बंधु अनुपम छवि चर्चा थी मिथिला में,
करते सब मान पान आखों में आँसू भर।।92।।
मिथिला की मिलकर सहेलीं सब चर्चा करैं,
नगर बीच आज सखी बालक दो आये हैं।
कीट मुकुट कुन्डल नेत्र रंजित घुघँरारे कच,
मुक्ता मणि माल तिलक भाल में लगाये हैं।।
पहिने पीताम्बर लिये हांथों में धनुष बान,
मीठी मुस्कान कोट काम छवि लजाये हैं।
व्याकुल नर–नारी खड़े दर्शन प्रतीक्षा में,
ललक भरी पलकों में आस यूं लगाये है।।93।।
एक ने बताया साथ लाये इन्हें विश्वामित्र,
आये अयोध्या से दशरथ नृप–नन्दन हैं।
दोनों कुँवर बाँके बीर ताड़का पछाड़ी मग,
नाम सखी राम लखन दैत्य दल निकन्दन हैं।।
श्यामल श्रीराम गौर लक्ष्मण है छोटे बन्धु,
दर्शन कर हृदय हर्ष होते स्पन्दन हैं।
एक कहै सीता योग दूल्हा है राम सखी,
मन में हर्षाती करें गणपति पद वन्दन है।।94।।
नगर की नवेलीं कली बेला चमेली सीं,
करने मकरन्द पान राम भ्रमर आ गये।
ललक भरी सखियों की अखियाँ चकोरी सी,
चाह भरी चाहों में चन्दा से छा गये।।
रूप की छवीली छटा मिथिला में छाई घटा,
ये तो चितचोर दाग दिल में लगा गये।
एक सखी पलक बन्द करके मुस्काने लगी,
हृदय में बिठाय मानो चार फल पा गये।।95।।

मिथिला के बालक सुन आये श्रीराम निकट,
बोले मित्र आवो नगर पूरा दिखायेंगे।
हाट बाट होते चले चांदनी चौराहे साथ,
दर्शनीय मन्दिर मठ मेवा खिलायेंगे।।
राजदरवार से चलेंगे मल्ल शाला तक,
उससे भी आगे किशोरी बाग जायेंगे।
बगिया में जाय खस–केतकी–कनेर फूल,
गेंदा–गुलाब रातरानी भी सुघवायेंगे।।96।।
हीरा मणि मोती रत्न देखिये सर्राफ सजे,
भाँति–भाँति वस्त्र रोज बिकते बाजार में।
मीठा मिष्ठान मधुर मेवा हलवाई धरे,
गन्धीगर मस्त करें इत्र की बहार में।।
बैठे फल–फूल साग–सब्जी लिये कुजड़े हैं,
चलिये भीड़ देखेंगे महिला श्रंगार में।
भनत 'करुणेश' भाव निच्छल सब बाल वृन्द,
होते प्रसन्न प्रभु बालकों के प्यार में।।97।।

१२. पुष्प वाटिका प्रसंग

समय जानि गुर आयसु पाई। लेन प्रसून चले दोउ भाई।।
तेहि अवसर सीता तहँ आई। गिरिजा पूजन जननि पठाई।।
एक सखी सिय संगु बिहाई। गई रही देखन फुलवाई।।
तेहिं दोउ बन्धु बिलोके जाई। प्रेम बिबस सीता पहिं आई।।
स्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

चतुर्दिक प्रकोर बीच बगिया किशोरी की,
देखत बाग शोभा को होता आनन्दित मन।
बोलत विहंग मोर चातक चकोर कीर,
अमवाँ की घौरन में कोयल की मीठी धुन।।

कलियों के कुंजों में करते गुंजार भ्रमर,
सुन्दर तड़ाग पास गिरिजा का भव्य भवन।
पहुँचे तेहि काल राम लखन बन्धु पुष्प लेन,
चारों ओर हेर टेर पूंछ रहे माली गन।।98।।
बगिया के माली आय सुनिये हमारी बात,
आये हम पुष्प लेन गुरुबर पठाये हैं।
आज्ञा हो पूजन के लिये पुष्प चुनें हम,
सुनकर विनम्र बचन माली मुस्काये हैं।।
कैसे कहे नाथ हाथ कोमल तुम्हारे देख,
सुन्दर गुलाब फूल काटों से छाये हैं।
कहत मालीगन हमें आज्ञा श्रीमान् करैं,
चुनकर हम लायें देत स्वच्छ हैं नहाये हैं।।99।।
गुरुवर की आज्ञा का पालन हम स्वयं करें,
कंटकमय पंथ की तो बात न विचारते।
बगिया प्रवेश पाय राम लखन मधुर धुन,
सुनते ही चकित चहुँ दिसि को निहारते।।100।।
भैया लखन सुनते हो कैसी उठी मीठी धुन,
पायलों के घुंघरू मुखर रुन झुन सुनाती है।
धनुष भंग पूर्व मुझे लगत गौरि – पूजन को,
सखियों के साथ यहाँ जनक लली आती है।।
कंगन कर खनक झुमक होती है झूंमर की,
सनकें सहनाई सी मधुर सुर सुनाती है।
भैया लखन लाल आज जाने क्यों दाहिन–भुज,
मेरी आँख दाहिनी भी फड़क फड़क जाती है।।101।।
इसी बीच सखी एक कहत जनक लली से,
बाग की बहारों में आकर मैं भटक–गई।
कौशिक के साथ में पधारे जो बालक दो,
श्याम गौर उनकी छबि अँखियन में अटक गई।।
चलो बहिन दर्शन कर गौरी का पूजन करैं,

मैं तो मधुर मूरत को झॉक के लटक गई।
मेरा मन चोरी कर लिया युगुल जोड़ी ने,
ऐसी अनोखी छटा बाग में छिटक गई।।102।।
श्याम घटारूप राम छाये पुष्प बगिया में,
दामिनी सी दमकत दुति गोरी किशोरी की।
काली जो आई पुरवाई वन पाछिल प्रीत,
अँखियन से बरसन लगीं बूंदे जुग जोरी की।।
देख दशा दोनों की सखियाँ मुसुकाने लगी,
मनो काम पूरे हो महिमा है गौरी की।
एक ने आशान्वित हो कहा दूल्हा बने राम,
जिन्होंने हमारी किशोरी–मन की चोरी की।।103।।
सीता किशोरी चकोरी बनी राघव की,
पलकों से राम चित्र ह्रदय में उतारा है।
बन्द पलक पटल किये मन में संतुष्ट होय,
सिया का स्वरूप राम चित्त में निहारा है।।
सखियाँ मुसुकाती हुई ताना सुनाने लगीं,
बगिया में आज कली भ्रमर का नजारा है।
हो गई है बुहत देर अब तो हम मंदिर चलें,
आयें काल फेर आज पूजन की बेरा है।।104।।
चितवत किशोरी चकोरी सी राघव को,
बार बार रूप को निहार बन्द पलकें की।
देखन पखेरू मिस लौट लौट हेर रहीं,
छलकें स्नेह अश्रु आँखे लाल मल के की।।105।।
गौरि भवन जाय बहुरि सीता ये विनय करी,
हाँथ जोड़ माँगू वर मन में जो भाया है।
जान रही घट–घट की शिव प्रिय भवानी तूँ,
यातें युगल सुत माँ नहिं तुमको बताया है।।106।।

गीत

सुनले पुकार मेरी गौरा मैया, जाऊं बलिहार मेरी गौरा मैया।।
जय जगदम्बे, जय हो अम्बे।

करूं मैं विनती बारम्बार। तुम्हारी महिमा अपरम्पार।।
शरण मैं आई अम्बे जय हो जगदम्बे।।
अँखियन बस गयो रूप सबरिया।
सुधि भूली मैया हो गई बावरिया।।
लैयो खवरिया रानी दैयो न विसार।
जय जगदम्बे, जय हो अम्बे।।107।।

१३. धनुष यज्ञ

जिन्हे कें रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

कौशिक राम लखन साथ पहुँचे यज्ञ शाला में,
भाव के अनुकूल राम दर्शन दिखाने लगे।
सन्तों को परब्रह्म सुन्दर स्वरूप दिखा,
दैत्यों को भयंकर जमराज से दिखाने लगे।।
योद्धा धनुर्धारी अभिमानी भूपालो को,
मल्लों को बज्रदेह मल्ल से दिखाने लगे।
माता सुनैना को लगते जामाता राम,
मिथिला निवासियों के मन में समाने लगे।।108।।
स्यानी निहार रहीं जैसे प्रिय बालक हों,
प्यारे दुलारे गभुआरे से दिखाने लगे।
व्याही विचारीं सीस पकड़े पछताने लगीं
मन में कुमारियों के प्रेम भाव आने लगे।।109।।
आये अनेकों देश देशों से राजा सब,
सीता स्वयंवर सुनि मिथिला पधारे हैं।

छुआ नहीं शम्भु धनु रावण वीर वाणासुर,
करके प्रणाम धाम अपने सिधारे हैं।।
देव दनुज मानव नृप वेष रूप छदम किये,
साहस सब धनुष के उठाने से हारे हैं।
भनत 'करुणेश' घमंडी भूप कहने लगे,
ऐसे धनुष हमने तो कई टोर डारे है।।110।।
सज्जन भूप बोले ये दोनों सिंह सावक हैं,
दोनों रण भूमी में काल से दिखायेंगे।
करेंगे प्रचण्ड क्रोध जभी लखन धनुष लिये,
मारिये न गाल तभी होश बिगड़ जायेंगे।।
मारा सुवाह दैत्य ताड़का पछाड़ी इन,
मिथिला से संबंध केवल यही बना पायेंगे।
शम्भु धनुष तोड़ेंगे निश्चित श्रीरामचन्द्र,
देखते रह जाओ राम सीता ले जायेंगे।।111।।
देख सुकुमार रूप राम का सुनैना दुखी,
कोई भी राजन को जाकर समुझाता नहीं।
कोमल किशोर भला तोड़ें क्या शम्भु धनुष,
राजन को प्रण के सिवा और कुछ सुहाता नहीं।।
रावण बीर बाणासुर छुआ नहीं लौट गये,
बालक मराल कभी पर्वत उठाता नहीं।
छोड़ के ये अपना हठ कुछ तो विचार करें,
जानकी के जोग और ऐसा जामाता नहीं।।112।।
सखियां समुझाने लगी रानी सुनैना को,
मिथिला पति अपना हठ पूरा कर मानेंगे।
कोमल किशोर देख आप घवड़ायें नहीं,
मारे दुर्जेय दैत्य यही चाप तानेंगे।।
बकते हैं दम्भी घमंडी भूप आये जो,
धनुष तोड़ देने पर राम शक्ति जानेंगे।
पायेंगे त्रिभुवन की धवल कीर्ति राघवेन्द्र,

होगा विवाह हर्ष मिथिला में सानेंगे।।113।।
कहती सुनैना सखी कैसे धीर धारूं मैं,
कोमल किशोर धनुष कैसे उठायेंगे।
कंज भी मलीन होत इनके कर कंज देख,
रानी कौशिल्या के अश्रु छलक जायेंगे।।
कोई भी राजन पास जाकर बस इतना कहे,
छोड़े ये हठ नतरु काम बिगड़ जायेंगे।
सीता कुमारी के रूप छवि जोड़ी दार,
राम सा सलोना वर विश्व में न पायेंगे।।114।।
करती किशोरी ध्यान गौरा महरानी का,
गणपति मनाती कभी शम्भू को पुकारती।
सोचत पिता को प्रन मोचत दृग अश्रु धार,
हिरणी सी हेर रूप राम को निहारती।।
शम्भु धनुष भंजन को व्याकुल मनाती सिया,
मन के बिचार सिया मन में ही मारती।
भनत 'करुणेश' गुनत बार–बार गणपति को,
प्रेम व्यथा देख सभी सखियाँ विचारती।।115।।

१४ जनक पश्चाताप एवं लखन रोष

अब जनि कोउ माखै भटमानी। बीर बिहीन मही मैं जानी।
तजहु आस निज निज गृह जाहू। लिखा न बिधि वैदेहि बिबाहू।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

देखता हूँ धनुष के उठाने में हारे सभी,
कोई भूपाल शम्भु चाप न हिला सका।
आये हैं मिथिला में बल को दर्शाने यहाँ,
लेकिन बल परीक्षण में कोई भी न आ सका।।
अभी तक बजाते रहे वीरता के झूठे गाल,
धनुष का उठाना दूर तिलभर हिला न सका।

अब तो भूपाल सभी उठो जाओ अपने घर,
मेरी प्रतिज्ञा में रंग न कोई ला सका।।116।।
यदि मैं समझता धरा वीरों से हीन हुई,
शम्भु धनुष भंजन का प्रण ही न ठानता।
पुत्री का व्याह और त्रिभुवन कीर्ति देने को,
वाणी में अपनी यह अपयस न सानता।।
बेटी की माँग का सुहाग भी न मिल सका,
करिके प्रण ऐसा मैं दोषी हूँ मानता।
सभा को निहार जनक अश्रुपूर्ण कहने लगे,
आज से किसी को मैं बीर नहीं जानता।।117।।
सुनि के ये जनक बात बोल पड़े लखन लाल,
सम्मुख रघुनाथ ऐसे बचन न सुहाते हैं।
सर्व श्रेष्ठ ज्ञानी आप ऐसा सब कहते लोग,
लेकिन ये झूठ बात फिर क्यों सुनाते हैं।।
राघव ने धनुष ओर हाथ भी उठाया नहीं,
धैर्य त्याग तब भी जनक व्यर्थ घबडाते हैं।
कोई भी आगत को घर से भगाता नहीं।
फिर भी आप शब्दों की कटुता दर्शाते हैं।।118।।
मैं हूं लघु किंकर श्री राघवकुल भूषण का,
आज्ञा यदि पाऊँ ब्रह्माण्ड को उठा दूं मैं।
शम्भु धनु उठा कर लगाऊँ शतयोजन दौड़,
तोड़ के हिमालय श्रंग धूल में मिला दूं मैं।।
आज्ञा बिन बोल रहा, क्षमा करें आर्य–पुत्र,
करता सौगन्ध सारी श्रृष्टि गिरा दूँ मैं।
तमक पड़े लखनलाल कन्धे से धनुष फेंक,
कर न दिखाऊँ धनुष बाण न चढ़ाऊँ मैं।।119।।
दिनकर मणि दर्शन कर कौमुदी मलीन होत,
अजगव धनु देख सभी राजा मनहार गये।
नीचा मूँ करके कुछ बैठे लौट आसन में,

कुछ तो घमंडी भूप अब भी सीना तान गये।।
लखन लाल बोल सुन राजा कुछ बात करैं,
छोटे मूँ बड़ी बात लछमन बघार गये।
हम तो ऐसी बंदर की घुड़की से डरत नहीं,
बड़े बड़े योद्धा रण हमसे लड़ हार गये।।120।।
कौशिक ने उचित समय सोच कहा राघव से,
उठिये श्रीराम शम्भु धनुष तोड़ दीजिये।
चिन्तित मिथिलेश खड़े अपने प्रण चिन्तन में,
चिन्ता निवारण राम भूपत की कीजिये।।
उठ कर श्री राघव ने चरणन में बन्दन किया,
कौशिक मनावै त्रिपुरारि दया कीजिये।
पृथ्वी को चरन चाप कहते श्री लखन लाल,
सजग रहो दिग्गज धरा डोलने न दीजिये।।121।।
राघव के छूते धनुष दामिन सा दमक उठा,
सारी दिशाओं में तड़ित्शब्द छा गया।
दर्शक गणों की दृष्टि धुर्मिल सी पड़ी तनक,
राघव के हाथों में स्वयं धनुष आ गया।।
कैसे उठाया चढ़ाया धनु राम भद्र,
देखने जो आये थे देखना भुला गया।
अब तो पाखंडी घमंडी भूपालों का,
धनुष भंग होने से मुखड़ा सुखा गया।।122।।
उठकर घमंड़ी भूप फेंटा कस कहने लगे,
धनुष टूट जाने से हार नहीं मानेंगे।
आये जैमाल लिये जनक की दुलारी जब,
उसी समय हम भी धनुष अपने सम्हालेंगे।।
होगा भयंकर युद्ध मिथिला में वीरों का
तृण से भी तुच्छ इन किशोरों को मानेंगे।
'भनत करुणेश' धनुष तोड़े सो वीर नहीं,
हम से संग्राम करे उसे वीर जानेंगे।।123।।

१५. परशुराम आगमन

तेहिं अवसर सुनि सिव धनु भंगा। आयउ भृगुकुल कमल पतंगा।।
देखत भृगुपति वेषु कराला। उठे सकल भय बिकल भुआला।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

कैसे कहें क्षत्रिकुल द्रोही श्री परशुराम,
अतुलित बलशाली प्रभु अंशावतार थे।
हैहय वंशबालो से इनका था वैर भाव,
जिनमें सहस्रबाहु के दानवी विचार थे।।
मिथिला अबध कैकय मगध अन्य भूपालो से,
स्वामी भृगुनन्दन के प्रेमी व्योहार थे।
दैत्य कुल नष्टकर तपस्या को जाने लगे,
साथ लिये धनुहा को भृगुपति लाचार थे।।124।।
धनुर्वेद शिक्षा ली शिव से भ्रगु बन्शी ने,
अजगव ले सीखा ज्ञान इन्हें धनुष प्यारा था।
मिथिला भूपालों से मित्रभाव भृगुपति का,
गये जब महेन्द्रा गिरि यही धनुष धारा था।।
अपनी तपस्या से जब तक मैं लौटूँ नहीं,
मेरा धनुष पूजन करो जनक से उचारा था।
सिया योग्य श्रेष्ठ वर पाने को जनकराज,
शम्भु धनु भंजन सहारा विचारा था।।125।।
बैठे समाधि साध कण्व ऋषि सहस्त्रों वर्ष,
मिट्टी से दबी देह वांमी मे ढ़क गये।
हंस पर सवार ब्रह्म आए वर देने को,
मांगो वरदान तुम तपस्या में पक गये।।
देखा ब्रह्म रंध्रभेद निकला है बांस एक,
उसका निर्माण धनुष अजगव नाम कर गये।
यही धनुष ब्रह्मा से शंभू ने पाया जब,

उनसे ले परशुराम मिथला में धर गये।।126।।
धनुष टूट जाने पर राम मुसुकुराने लगे,
अब तो घमन्डी उपद्रव मचायेंगे।
शायद अमंगल घटा छायेगी मिथिला में,
मंगल गीत गानों में कृन्दन सुनायेंगे।।
धरा रक्त रंजित हो लाशे पट जाएँ पंथ,
कितनों की माँगों के सिन्दूर मिट जायेंगे।
अब तो प्रलंयकारी श्री भृगुपति पधारें यहाँ,
सभी अंहकारियों के होश विगड़ जायेगे।।127।।
मस्तक त्रिपुन्ड शीस जटा जूट कसे हुये,
गौर वर्ण अंग में विभूती लगाये हैं।
कानों में कुन्डल पीठ अक्षय तुणीर कसें,
कन्धे पर धनुष परशु हाथ में उठाये हैं।।
चार जज्ञोपवीत पहन करते हुए वेद धुन,
कटि में बाधम्बर मृग चर्म भी दवाये हैं।
धनुर्भंग सुनकर के वीर रस मुद्रा में,
जपते शिव नाम बीर परशुराम आये हैं।।128।।
देख बाज पंछी को जैसे छुप जाते लबा,
वैसे गुमानी भूप मुखड़ा छुपाने लगे।
देख क्रोध भाव भयभीत हुए मन से सब,
पूंछे बिन राजा नाम उठकर बताने लगे।।
मिथिला नरेश जनक आकर पदवन्दन किया,
अर्चन चार चन्दन कर आरती सजाने लगे।
सिया से कराया नमन भृगुपति के चरनों में,
होके समर्पित स्वयं विनती सुनाने लगे।।129।।
सीता शीश हाथ धर बोले श्री भृगुकुल मणि,
तेरा मन भावन मांग तेरी सजाता रहे।
ऊषा की अरुण प्रभा पावन की रोली रंगे,
पूर्ण चन्द्र हाथों की चूड़ियाँ चमकाता रहे।।130।।

जगती में कीर्ति की पताका सी बनी रहो,
जब लौ भूमि अम्बर है तब लौ युग जोड़ी रहे।
पावन पति भक्ता रहो सतियों में सर्व श्रेष्ठ,
अपने पति चरणों की सर्वदा चकोरी रहे।।
माथे में इन्दु सी चमकती रहे बिन्दी सदा,
खनके कर कंगन चार चूड़ियों की छवि रहे।
पूँछत 'स्वरूप देख जनक से श्री परशुराम,
रूप सुधा सागर ये कौन की किशोरी अहै।।131।।
इसी बीच कौशिक ले लखन राम पहुँचे पास,
देखकर श्रीराम छवि सुध बुध बिसारी है।
तत्क्षण भृगुवंशी धनुष भंजन की सुरति कर,
सब सुधि भुलाय अब अवनी निहारी है।।132।।
दोनों खण्ड धनुष के उठाये श्री परशुराम,
हृदय से लगाय करुण स्वर में पछताने लगे।
आज प्रिय अजगव यह तेरे दो खन्ड देख,
मेरे ममत्व भरे अश्रु छल छलाने लगे।।
ऐ रे जड़ जनक बोल किसने यह तोड़ा धनुष,
क्रोधित लाल नेत्र हुये ओंठ फड़ फड़ाने लगे।
भृगुपति का क्रोध भरा तामसी स्वरूप देख।
आये भूपालों के चेहरे कुम्हिलाने लगे।।133।।
अजगव को तोड़ यहाँ किसने प्रचारा मुझे,
द्रोही हमारा बना बैठा बीर कौन है।
नीचे सिर करके सभी बैठे क्यों मौन धार,
बैरी सहस्राबाहु जैसा अब कौन है।।
छोडूंगा नहीं उसे काल के हवाले करूं,
मेरे घोर परशु का प्रहार बना कौन है।
सुनत ये बचन यज्ञ शाला सब फीकी हुई,
सबको बमविश्वनाथ जमपुर करूं गौन है।।134।।

भृगुपति का क्रोध भरा भीषण प्रचार सुन,
रानी सुनैना के अँसुअन की धार बही।
मौन धार जनक की दुलारी भी दुखी हुई,
गणपति का सुमिरन कर गौरी की शरण गही।।
हाँथ जोड़ मिथिलापति डूबे शोक सागर में,
आरत हरण भोलेनाथ रखियो पत मोर सही।
शोकातुर लोग सभी गमी छाई चतुर दिक्,
बन्द हुये मंगल गीत करुणामय भई मही।।135।।

१६. परशुराम–लक्षमण संवाद

नाथ संभु धनु भंजनि हारा। होइहि कोउ एक दास तुम्हारा।
बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुम्हहि डेराई।।
सुनि मृदु गूढ़ बचन रघुपति के। उघरे पटल परसुधर मति के।
राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर सन्देहू।।
देत चापु आपहिं चलि गयऊ। परसुराम मन बिसमय भयऊ।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

भृगुपति के भय से भयभीत दृश्य देख राम,
करतहिं प्रणाम बही बचनामृत धारा है।
चरणों में वंदन भृगुनन्दन स्वीकार करें,
क्षमा करें हमें नाथ दोष सब हमारा है।।
जैसे रिस जाये नाथ वैसा बताये मुझे,
गर्दन झुकाये मैं आप कर कुठारा है।
सामने मुनिनाथ धनु द्रोही खड़ा हूँ मैं,
शम्भु धनु भंजनहार सेवक तुम्हारा है।।136।।
राम मधुर बाँणी सुन बोले वीर परशुराम,
करके अपराध बना सेवक वो कैसा है।
मेरे पूज्य शंकर के अजगव का भंजनहार,

अपने को सेवक कहे उचित नहीं ऐसा है।।
सेवक तो मैं भी हूँ पूज्य त्रिपुरारी का,
खंड खंड धनुष देख खेद करूँ ऐसा है।
सेवक नहीं तू राम सचमुच गुरु द्रोही है,
मेरा तू दुश्मन सहस्राबाहु जैसा है।।137।।
हेर हेर धनुष खंड भृगुपति के व्यापित क्रोध,
दशनों को दवाये हुये ओठ फड़काने लगे।
बकते हुये अपना बल साहस को बार बार,
हैहय बंश घाती घोर परशु चमकाने लगे।।
राघव नत ग्रीवा किये विनय करैं बार–बार,
देख कर घमंडी भूप मन में मुसुकानें लगे।
उठकर तब सहजभाव खड़े हुये लखन लाल,
भृगुपति समक्ष हाँथ जोड़े यों कहने लगे।।138।।
सुनिये पूज्य भृगुकुल मणि विनती कर पूछ रहा,
कौन सम्प्रदाय ग्रहण करके आप सन्त है।
कोमल नवनीत तरह होते हैं सन्त हृदय,
लगता है आप पूर्ण क्रोध के महन्त हैं।।
अपना प्रताप आप बताते हो नाथ बहुत,
वीरों में श्रेष्ठ आप सुयश के बसन्त हैं।
देखत ये वेश मैं कुछ भी समझ पाया नहीं,
संत हैं कि वीर हैं या विप्र हैं अनन्त हैं।।139।।
क्रोध हीन क्षमा–दया सन्तों के भूषण नाथ,
आप तो प्रचंडतम दहकती हुई आगी हैं।
अब तलक नाथ मैं ये समझ नहीं पाया हूँ,
साधु हैं कि विप्र हैं या त्यागी बैरागी हैं।।
सुनी कठिन करनी किन्तु रूप धरें सन्तों का,
साधना के भक्त मोह ममता के त्यागी है।
वैष्णव वेष धारण कर आप भी तो सन्त बने,
धनुष भंग करुणा सुन लगता अनुरागी है।।140।।

ग्रीवा रुद्राक्ष माल भाल में त्रिपुंड लगा,
सुन्दर जटा जूट बँधे पुष्पों से पागी हैं।
कटि में बाघांम्बर और अंग में भभूत लगी,
जज्ञोपवीत चार ब्रह्म गाँठ लागीं हैं।।
धनुहा टूट जाने से इतना क्रोध करते आप,
भनत 'करुणेश' लिये हाथ अस्त्र बागी हैं।
लेकर कोदण्ड आप दो दो तूणीर कसैं,
साधू हैं या विप्र कहूं लगता बड़े स्वाँगी हैं।।141।।
सावधान बालक तूं विप्र ही समझता मुझे,
मैंने काट हैहय कुल रक्त सर बनाया है।
इक्किस वार क्षत्रि कुल काटे इस फरसे से,
धनुष की प्रत्यंचा से स्वाहा सुनाया है।।
जिते हुये राज सभी दान दिए विप्रों को,
त्यागी हूँ पूर्ण त्याग करके दिखाया है।
सावधान होकर कर ठीकठाक प्रश्न मूर्ख,
देख ये कुठार अभी हाथ न लगाया है।।142।।
लगता है नाथ आप काल लिये साथ साथ,
मिथिला में मेरे पास सीधे चले आये हैं।
आते ही यहां स्वयं वीरता बताते हुये,
आकर धमकाने लगे परशु भी उठाये हैं।।
सुनता दुर्वाक्य देख जज्ञोपवीत विप्र,
सहता हूँ हाथ जोड़ जो भी सुनाये हैं।
रघुकुल पुनीत नीति धारण कर नाथ हम,
सन्त धेनु ब्राह्मण के लिये सिर झुकाये हैं।।143।।
लखन लाल भृगुपति से करते निर्भीक बात,
मिथिला नरेश पौर–पुरजन डर जाते थे।
शान्त रहें लखन चाह सब की थी सभा बीच,
भृगुपति भयंकर क्रोध देखे भय खाते थे।।
भृगुपति जी परशुधार कहने लगे कौशिक से,

कैसा ये मूर्ख तुम सौम्य बतलाते थे।
समझे नहीं मेरा ओजस्वी सुभाव कछु,
बार बार परशु को उठा कर दिखाते थे।।144।।
हाथ जोड़ मधुर वचन बोले श्री रामचन्द्र,
क्षमा करें नाथ लखन समझा नहीं बालक है।
आप क्षमाशील बड़े होकर कुछ दया करें,
छोटों के लिये बड़े होते प्रतिपालक हैं।।
मैं हूँ अपराधी शम्भु धनुष खन्ड कीन्हों जो,
जैसे रिस जांय करें आप नय नागर हैं।
ऐसे अपराध काज दण्ड दीजे मुझे नाथ,
क्षमा करें लखन दोष आप क्षमा सागर हैं।।145।।
जैसे भी जाये रिस वैसा ही करें आप,
सेवक को करें क्षमा या तो दण्ड दीजिये।
छोड़ यज्ञ शाला को कहिये तो जाऊ निकल,
या तो नाथ सेवक को सेवा में लीजिये।।
टूटा धनुष जुड़े नहीं अब तो क्रोध करने से,
बीती जो बात वह विमर्षण न कीजिये।
धारण करें शान्ति आप होवे प्रसन्न–मन,
शरण में पड़ा हूं नाथ मुझ पर पसीजिये।।146।।
बोले श्री परशुराम ऐ हो शांत शील राम,
तेरी प्रिय वाँणी के मधुर स्वर हैं ऐसे।
तेरी सुधा सीकर से शांत हुआ मेरा मन,
देखो व्यंग हँसी बन्धु हँसता है कैसे।।
तेरे मूर्ख बन्धु का गौर अंग काला मन,
जैसे स्वर्ण घट में विष दूषित अनैसे।
बात मान तेरी राम कैसे मन शान्त करूँ,
करता संकेत व्यंग जाये रिस कैसे।।147।।

दशरथ के नन्दन तूँ विप्र ही न समझ मुझे,
विप्र ही नहीं केवल हैहय कुल द्रोही हूँ।
काटे सहस्राबाहु मैंने भुजदंड सहत्र,
देख तूँ कुठार घोर मैं कठोर कोही हूँ।।
सामने खड़ा तूं धनुष तोड़के बहादुर बना,
जाने जगदीश क्यों आज बना मोही हूँ।
तेरे बन्धु लछिमन के सहता दुर्वचन बहुत,
कर तूँ संग्राम आज बना अवरोही हूँ।।148।।
आते आप सन्तों के वेष नाथ मिथिला में,
तो ये लखन बन्धु शीश चरणों में धरता।
पावन पद चर्या भी करता पद चाप चाप,
मार्ग की थकान नाथ पल भर में हरता।।
नाम तो सुना था किन्तु बालक समझ पाया नहीं,
वीर समझ जो भी कहा वह भी ठीक लगता।
वीरों से कभी नाथ डरते हमलोग नहीं,
वैसा ही करें नाथ जैसे मन भरता।।149।।
विप्र मान कर ही नाथ सुनता कठोर वाक्य,
चरणों से मारे मुझे तो भी दवाऊँगा।
विप्र गऊ सन्त देव सब की प्रतिष्ठा करूँ,
प्राणियों के सेवा धर्म कर्म भी निभाऊँगा।।
मैं क्या नारायण भी भृगु की थी सही लात,
उसी भाव लेकर मैं आप को मनाऊँगा।
कहते मुझे नाथ आप वार वार लड़ने को,
विप्र भृगुवन्शी मान अब ही सह जाऊँगा।150।।
मैं हूँ सूर्यवंशी इच्छाकू लड़ें असुरों से,
देवराज वाहन बन काकु में विठाये थे।
देवासुर युद्ध समय इन्द्र का बढ़ाया मान,
तब से काकुस्थ नाम पदवी भी पाये थे।।

योद्धा मुचुकुन्द भूप वे भी सूर्यवन्शी थे,
देवतों के साथ सभी दैत्य दल हराये थे।
आप भृगुवंशी मैं वीरता बताऊँ क्या,
इन्द्र को पराजित कर यज्ञ अश्व लाये थे।।151।।
रघु के प्रपौत्र भूप दशरथ हैं महारथी,
इन्द्र आमंत्रण पर अमरपुरी जाते हैं।
जब भी देवराज को सताते है असुर बृन्द,
आदर सम्मान साथ मघवा बुलाते हैं।।
विप्र भक्त हरिश्चन्द्र शिवि व दिलीप रहे,
विप्रवर तन्तु कोष रघु से ही पाते हैं।
हम है नाथ ऐसे रघुवंशी सब विप्र भक्त,
वंश नीत मान माथ आपको नवाते हैं।।152।।
थोड़ा सा कोप छोड़ मेरी भी सुनो नाथ,
पूज्य पाद कौशिक की सेवा में आया हूँ।
मिथिला नरेश का संदेश पाए आए हम,
गुरुवर की आज्ञा से धनुष भी चढ़ाया हूँ।।153।।
क्षत्री वही है जिसे क्षात्र धर्म प्यारा हो,
रण का प्रचार सुने दौड़े विचारे ना।
जाकर रण प्राँगण में मारे या मरे स्वयम्,
प्राण भले चले जायें पीछे पग धारै ना।।
मैं हूँ रघुवन्शी रण से घबड़ाता नहीं,
तब तक हूं क्षमाशील जब तक प्रचारे ना।।
लेकिन मैं तपशील ब्राह्मण से हारा हूँ,
पूज्य भृगुनाथ मुझे रण को ललकारैं ना।।154।।
गूढ़ बचन रघुवर के सुनते ही भृगुनाथ,
अन्तर पट खुले हुआ ज्ञान का संचार है।
दूँगा ये धनुष जो चढ़ाएँ प्रत्यंचा को,
समझूंगा यही राम ब्रह्म अवतार है।।155।।

देते ही धनुष राम रघुपति के हाँथों में,
भृगुपति कर कमलों से अपने आप चला गया।
अंशावतारी की भूली अव्याहत गति,
भूप यज्ञ शाला में देखते ही ढल गया।।
अभी तक किया था नष्ट हैहय का वंश तेज,
वीरता का पूर्ण तेज भृगु से निकल गया।
तेज बल निशानी सब राम में समानी जाय,
सन्त बने परशुराम क्रोध सब निकल गया।।156।।

१७. श्रीराम-विवाह

कह मुनि सुनु नरनाथ प्रबीना। रहा बिबाहु चाप अधीना।।
टूटतहीं धनु भयउ बिबाहू। सुर नर नाग बिदित सब काहू।।
तदपि जाइ तुम्ह करहु अब, जथा बंस व्यवहारु।
बूझि विप्र कुलबृद्ध गुर, बेद बिदित आचारु।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

अजगव भंजन होते महीप, हर्षित अंतर चिन्तन छूटा।
मिथिला में चर्चायें घर-घर, धनु रामलला हाँथों टूटा।।157।।

गन्धर्व-अप्सरा अम्बर से, मैथली बधूटीं गान करें।
मांगलिक चारु चन्दन-प्रसून, लाजा-अक्षत कण कोर झरैं।। 158।।

कलगीत गान गातीं सखियाँ, बाजे विभिन्न स्वर बाद्य यंत्र।
विरदाबलि पढ़ते भाट वृंद, ऋषि बिप्र उचारें बेद मंत्र।।159।।

आये मिथिलापति के समीप, प्रोहित स्वामी श्री सतानन्द।
संशोधन पाणिग्रहण किया, गुरुवर मुस्कुराते हुये मन्द।।160।।

यह लग्न पत्र लो हे राजन, इसको कौशलपुर पहुँचायें।
श्री चक्रवर्ती लेकर बरात, अविलम्ब अवधपुर से आयें।।161।।

लिख पत्र साथ में लग्नपत्र, दे कौशल भेजे चार दूत।

चारों मृदुभाषी नीति कुशल, चारों थे आनन्दित अकूत।।162।।

चिन्तन करते श्री राम–राम, चारों पावन पथ चलते थे।
चारों पदार्थ के अधिकारी, स्लिथ स्नेह सम्हलते थे।।163।।

स्नान किया सरयू तट पै, कौशल नरेश–ड्योढ़ी आये।
इनको परिचायक परिचय ले, दरबार भूप के ले आये।।164।।

आते ही दूतों ने विनम्र, जय जीव कहा परणाम किया।
आये मिथिला पति आज्ञा से, अस कह नृप हाथ में पत्र दिया।।165।।

स्नेह पगे दशरथ नृपाल, कुछ भी कह सकना भूल गये।
प्रिय राम लषन स्मृति मग्न, गत स्मृतियों में फूल गये।।166।।

गुरुवर बशिष्ट कर कमलों में, दे लग्न पत्र को पढ़वाया।
श्री गुरुवर ने नृप दशरथ को, विस्तृत बिबरण कर समझाया।।167।।

मुस्क्याके बोले श्री वशिष्ठ, करिये बरात की तैयारी।
घिर आये घन आनन्द भरे, रसवन्ती रस बूंदे झारी।।168।।

मुद मग्न हुलसतीं माताये, गूंजा गीतों से कनक भवन।
गातीं कल गीत 'बना–बनरी', परिचायक महिलायें परिजन।।169।।

राज कक्ष से आँगन तक, द्वारे नक्कारे दमक उठे।
साजे मतवारे गज कारे, हौंदों के हीरे चमक उठे।।170।।

चतुरंगिन सेना गज–स्यंन्दन, ले खड़ग तेग बर वीर चले।
घोष हुआ गह गह निशान, हो रहे सकुन शुभ भले भले।।171।।

थी देवपुरी सी अवधपुरी, सुरनाथ सरीखे अवधपाल।
वरयात्री सेना चतुरंगिन, क्षत्री धनुधारी तेग ढ़ाल।।172।।

आगे कुल गुरुवर का स्यंदन, तपतेज बृहस्पति के समान।
पीछे थे महारथी दशरथ, देवाधिप से योधा महान।।173।।

नृप वैभव से लज्जित कुबेर, थीं रिद्धि सिद्धियाँ साथ साथ।
मंगलमय सारे ग्रह नक्षत्र, बरदायक गणपति बरद हाँथ।।174।।

भर भोज्य वस्तुयें कावर में, चल पड़ीं कहारों की टोलीं।
विप्रन्ह को दान दक्षिणा दे, भर रहे भिक्षुओं की झोलीं।।175।।

यह दान देख लज्जित कुबेर, था अष्ट सिद्धियों का प्रभाव।
आनंद विलोदित बरयात्री, उमड़े उत्साहित भरे चाव।।176।।

जिस पथ से चलती थी बरात, वह पथ पावन हो जाता था।
नभ पथ से झरते पुष्प देव, पथ पुष्प कीर्ण हो जाता था।।177।।

जब मिथिला पति ने श्रवण किया, आ रहे अवधपति ले बरात।
पथ सरिताओं में सेतु बँधे, की भोज्य–व्यवस्था भाँति–भाँति।।178।।

पथ चलते सब आनंदित मन, नियराया श्री मैथिल प्रदेश।
आवाहन कर गण मान्य बृन्द, आदेश दिया मिथिला नरेश।।179।।

आये कौशल पति ले बरात, स्वागत की कर लो तैयारी।
सज्जित कर लो सम्पूर्ण साज, हो भली भाँति शिष्टाचारी।।180।।

अगवानी करने मिथिलापति, स्वागत सज्जा ले साथ चले।
गुरु सतानन्द सब विप्र बृन्द, श्रेष्टी समाज थे भले भले।।181।।

कौशिक मुनि को सन्देश मिला, आये श्री दशरथ कौशल से।
चलिये प्रिय राम लषन दोनों, करिये दर्शन श्री गुरुवर के।।182।।

दर्शन पाते ही युगल बन्धु, कर जोरे नम्र प्रणाम किया।
चिरंजीव भव कीर्तिमान, मुनिवर ने आशीर्वाद दिया।।183।।

श्री विश्वामित्र महामुनि के, चरनों में दशरथ कर जोरे।
भवदीय कृपा से हुआ धन्य, हे महामान्य आशिष तोरे।।184।।

दोनों सुपुत्र बात्सल्य भरे, हे तात तात कह लिपट गये।
युगचरणों को स्पर्श किया, दशरथ गोदी में समिट गये।।185।।

मुग्धा मयूरनी से प्रसन्न, नृप देखी श्यामल रूप घटा।
रूपसि सागर में सराबोर, दर्शनकर श्यामल गौर–छटा।।186।।

तत्क्षण अभिमंत्रित मंत्रों से, कर कमलों में बाँधा कंकन।
पीली पगड़ी खर्जूर मोर, बासन्ती जामा सियरे तन।।187।।

गुरुवर ने दीं चन्दन खौरें, प्रतिमा पीली पीली पगन्त।
अँखियों में अनुरंजित अंजन, पीताम्बर साजे ज्यों बसंत।।188।।

समधी समधी के लाल वस्त्र, सजगये बराती सभी मगन।
चारों पुत्रों के लिये भूप, सजबाये घोड़े श्याम करन।।189।।

मिथिला में भी गुरु सतानन्द, बाँधा सीता के कर कंकन।
पीली पियरी पीले भूषण, पीली चुनरी सम्पूर्ण श्रृजन।।190।।

दुलहिन जगजननि भवानी का, नव निधियों ने श्रृंगार किया।
आनंदित मात सुनैना ने, न्यौछावर मुक्ता हार दिया।।191।।

द्वारे में शिष्टाचार समय, बर यात्री वर सम्मान हुआ।
सौपें आभूषण बसन बिबिध, गीत गान जिवनार हुआ।।192।।

माणिक मणि मंडित मंडप छवि, रत्नन रंजित छवि दर्शनीय।
निर्मित सब निपुण सिल्पियों से, दिक्चतुस्खम्भ स्पर्शनीय।।193।।

था राजभवन सुरपति जैसा, नत होतीं सम्यक् उपमायें।
सेवा में तत्पर रिद्धि सिद्धि, सम्पूर्ण अलौकिक सेवायें।।194।।

चौतर्फा वेदी कनक कलस, सर्वतो भद्र नवग्रह गणेश।
षोणस मातायें चतुस्कोण, साकल्य हवन आहुति विशेष।।195।।

पढ़ते ऋषिवर सब वेद मंत्र, भाँवर फेरीं सब हो के मगन।
सीताराम विवाह पूर्ण सुनि, मिथलावासी प्रमुदित जन–जन।।196।।

नृप आज्ञा हुई रनवासों से, त्रय, बहिनें मंडप में आईं।
मान्डवी, उर्मिला, श्रुतकीर्ती, दासियाँ भवन से ले आईं।।197।।

श्री भरत साथ मान्डवी वधू, उर्मिला लखन की युग जोड़ी।
शत्रुघ्न साथ श्रुतिकीर्ति वधू, गठबन्धन वेद ध्वनी छेड़ी।।198।।

नृप द्वारा कन्यादान हुआ, पश्चात् किया वेदी पूजन।
ध्रुव दर्शन करके सप्तबचन, भू स्पर्शन लावा पर्सन।।199।।

पाई दक्षिणा रिषि बिप्रो ने, गोदान ब्याह सम्पन्न हुआ।
कन्याओं का कर दान मान, मिथिलापति का कुल धन्य हुआ।।200।।

१८. जनकपुर से बारात विदाई

चली बरात निसान बजाई। मुदित छोट बड़ सब समुदाई।।
देखन हेतु राम बैदेही। कहहु लालसा होहि न केही।।
जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि। निज छवि निदरहिं मदन बिलासिनि।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

तारक मुक्ताऐं मलिन हुईं, लाली विखेरता अरुणोदय।
"करुणेश" किरण रवि प्रभा उठी, मठ मंदिर में गूँजी जय–जय।।201।।
नभ मण्डल में उड़ चंचरीक, बृन्द बृन्द कर रहे कलख।
खिल उठा क्षितिज का छोर छोर, प्रातः क्रीड़ाओं का अभिनव।।202।।

छन्द

सरित्सर हुलसी हर्ष हिलोर, प्रफुल्लित चातक चकवा मोर।
भूप दशरथ के बन्दी बृन्द, जगावें जागो नवल किशोर।।203।।

उधर मिथिला पति की निधिचार, किया माताओं ने श्रृंगार।
नगर नर नारि भूप घर जुड़े, बिदा के होन लगे ब्योहार।।204।।

बेटियाँ छोड़ चली पितुगेह, देखकर व्याकुल हुये बिदेह।
सुनैना के नैनों भर अश्रु, हिलकियों में हिलुरा स्नेह।।205।।

भूप दशरथ से कहें वशिष्ट, चलै मिथिला से अवध बरात।
पाहुनी पूरी कर मिथिलेश, मिले समधी से समधी गात।।206।।

तर्ज राधेश्याम

रिषियों ने बेदोच्चार किये, शंखध्वनि जय जयकार हुई।
शिविका में सज्जित चार वधू, दूल्हे बरात तैयार हुई।।207।।

बन्दन अभिनन्दन साथ–साथ, सम्यक ऋषियों के पद बन्दन।
कुछ दूर विदाई करने को, मिथिलेश सजाये नव स्यन्दन।।208।।

आयोजित मिथिला से पयान, यात्रा नियराया अबध धाम।
सबके उद्वेलित हर्ष हृदय, मागध बन्दी जन पूर्ण काम।।209।।

गाजे बाजे के साथ भूप, लौटे बरात बाहन लेकर।
कौतूहल मय करते किलोल, नट नागर सब तन मन देकर।।210।।

दुलहिन सी लगती अबधपुरी, दुलहिन सीता के आने से।
घर घर में चौके चारु छटा, ध्वजतोरन के फहराने से।।211।।

झालर झलक मुक्ताओं की, प्रत्येक भवन में कनक कुम्भ।
लाजा अक्षत झरते प्रसून, देदीप्तमान थे स्वर्ण खम्भ।।212।।

देदीप्त प्रभा से कनक भवन, सम्पूर्ण अयोध्या धरा धाम।
तुलना में क्या थी देवपुरी, जिस पुर में राजे सियाराम।।213।।

अणिमा मणिमादिक रिद्धि सिद्धि, परिवर्तित रूप फिरैं घर घर।
था अछय कोष नृप दशरथ था, धन धान्य स्वयं जाता था भर।।214।।

नट मागध बन्दी बिरद भाट, नापित ब्राह्मण केवट कहार।
सब याचक गण परिपूर्ण हुए, उपहार दक्षिणा बार बार।।215।।

चल पड़ीं बधूटीं बृन्द बृन्द, भर भर मोतिन से कनक थाल।
मुसकाती गातीं गीत गान, परछन को आईं कनक हाल।।216।।

तीनों सासें बहुवें निहार, उपहारों की बौछार करें।
आशीर्वचनों से मन प्रसन्न, श्री गौरी सास्वत मांग भरें।।217।।

चारों बहुओं के हांथ पकड़, ल्याईं दशरथ के आंगन में।
महिलायें कन्या बाल बृद्ध, इठलाती गाती प्रांगण में।।218।।

हर रोज नया उत्सव स्वरूप, सज कर आता अवधेश धाम।
जब से आईं चारों बहुवें, थे राजन के परिपूर्ण काम।।219।।

चारों बहुवें सज्जन सुशील, चारों रूपसि किसलय कोमल।
चारों में शिष्टाचार श्रेष्ठ, चारों में उज्वल भाव विमल।।220।।

चारों बिशिष्ट सुत दशरथ के, चारों स्वभाव सम भातृ भाव।
चारों में धर्म कर्म अर्जन, चारों में था प्रियतर प्रभाव।।221।।

छन्द

भूप को प्राप्त पदारथ चार, चार से जुड़े चारु ब्योहार।
भला क्या होगी उसको कमी, राम से जिसके चार कुमार।।222।।

तर्ज राधेश्याम

जो ब्याह राम का भक्तिभाव, श्रद्धालु प्रेम से गाँयेंगे।
वे पाप क्षरण कर जीवन के, सौभाग्य मुक्ति धन पायेंगे।।223।।

बालकाण्ड समाप्त

राम–सीता विवाह

श्रीगणेशाय नमः

श्रीराम कथा

अयोध्याकाण्ड

१. श्रीराम राज्याभिषेक तैयारी

बेगि बिलम्बु न करिअ नृप, साजिअ सबुइ समाजु।
सुदिन सुमंगलु तबहिं जब, राम होहि जुवराजु।।
मुदित महीपति मन्दिर आए। सेवक सचिव सुमंत्रु बोलाए।।
कहि जयजीव सीस तिन्ह नाए। भूप सुमगंल बचन सुनाए।।
जौं पाँचहि मत लागै नीका। करहु हरषि हियँ रामहि टीका।।
मंत्री मुदित सुनत प्रिय बानी। अभिमत बिरवँ परेउ जनु पानी।।
बिनती सचिव करहिं कर जोरी। जिअहु जगतपति बरिस करोरी।।
जग मंगल भल काजु विचारा। बेगिअ नाथ न लाइअ बारा।।
नृपहिं मोदु सुनि सचिव सुभाषा। बढ़त बौंड़ जनु लही सुसाखा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

समय चक्र का चक्र निरंन्तर, चलता ही रहता है पल पल।
जैसे बचपन युवा बुढ़ापा वैसे श्रजन विनाशों के फल।।1।।

परिर्वतन बस अन्तरिक्ष में, चांद सितारे आते जाते।
रजनी की तारक मुक्ताएँ, रवि किरणों से आँख छुपाते।।2।।

प्रकृति परी में भी परिर्वतन, ललित लतायें झूम रही हैं।
कृन्दन कर "करुणेश,, ग्रीष्म में, शुष्क धूल कण चूम रहीं हैं।।3।।

श्रृष्टि क्रिया सास्वत अनादि यह, हो आई भविष्य में होगी।
अपरम्पार अविधा माया, समझ न पाये ज्ञानी योगी।।4।।

इसी तरह लो अवध पुरी में, परिवर्तन होने वाला है।
रामराज का हर्ष सुधा कण, हुआ सभी को विष प्याला है।।5।।

अपनी सोच कहो कब किस की, पूरी हुई कहाँ हो पाई।
होनहार होती है बैसी, जैसी हमने क्रिया बनाई।।6।।

चक्रवर्ति को श्रवण पिता का, श्राप भला निष्फल क्यों होगा।
कर्मों का फल ही देता है, भोग रोग संयोग वियोगा।।7।।

भरत शत्रुहन युगुल बन्धु, कैकय नरेश ने बुलवाये।
कितने दिन वहाँ व्यतीत हुए, नहीं अबध अब तक आये।।8।।

यहाँ अबधपति हर्षित हैं, कब आयेगा वह शुभ अवसर।
जब गुरु वशिष्ठ कर कमलों से, अभिब्यक्त करेंगे रामतिलक।।9।।

जन जन मनमें ब्यापी उमंग, अबधेश बने कब श्रीराम।
चक्रवर्ती चित ऊब गया, त्यागूँ शासन सुख साम दाम।।10।।

सज्जन सुशील प्रिय पुत्र राम, न्याय नीत ब्यौहार कुशल।
सुन्दर सुशील करुणानिधान, मधुरिम स्वभाव मन अति निर्मल।।11।।

कर चुका सभी मैं राज्य भोग, निर्वहन किया क्षत्रित्व धर्म।
अब त्यागूं बृद्ध अवस्था है, सोचूं अन्तिम क्षण मुक्ति मर्म।।12।।

गुरवर बशिष्ठ बोले राजन, मैं ज्ञान दृष्टि से जान रहा।
शासन समर्थ श्रीराम भद्र, उनको सब लायक मान रहा।।13।।

है ज्येष्ठ श्रेष्ठ सब पुत्रों से, युवराज यही हो नीति वचन।
श्रुति पालक हैं अरि धालक हैं, श्रीराम दयामय नील गगन।।14।।

श्रीराम भद्र बोले गुरुवर, यह नीत वचन निर्णय कैसा।
क्षमा करें होती अनीत यह, मेरे प्रति निर्णय ऐसा।।15।।

बोले वशिष्ठ प्रिय राम भानु, कुल प्रथा सत्य ये नाता है।
छोटों को सत्ता नहीं बड़े, का तिलक किया जाता है।।16।।

छन्द

सोच बस राधव हत उल्लाश, भरत बिन भाई राम उदास।
राज्य सुख कैसा लघुन विहाय, बनी अन्तर स्वासें निश्वास।।17।।

तर्ज राधेश्याम

स्वार्थ भरा जिनके हिय में, ऐसे परमार्थ करेंगे क्या।
अपना हित हर्ष भरा जिनके, दुःख दर्द पराया हरेंगे क्या।।18।।

टूटा हो जिनका खुद धीरज, वै अन्य पर धीर धरेंगे क्या।
अपनी ही पीर से पीड़ित हैं, वे और की पीर सहेंगे क्या।।19।।

आनंद अयोध्या में उमड़ा, सुर ससक गए यह दृश्य देख।
शरण सरस्वती की आए, विनती करते अवरेट मेट।।20।।

अवधपुरी आ वीणाबादिनि, मति फेरी कुबड़ी दासी की।
बन गई विचारी अपयश भाजन, अब सबकी उपहासी सी।।21।।

यह कुबड़ी कैकय से दासी, रूप अयोध्या आई थी।
कैकय नरेश ने पुत्री की, सेवा के हित पहुँचाईं थी।।22।।

यह शपथ स्वयम्बर समय हुई, जो पुत्री से बेटा होगा।
उसका होगा अधिकार पूर्ण, युवराज बने वह पद लेगा।।23।।

नृप कैकय जनता के समक्ष, दशरथ ने था स्वीकार किया।
राज्याभिषेक के पूर्व नृपति, दशरथ ने अब तक ध्यान दिया।।24।।

दो बचन कैकई के अब तक, राजा दशरथ से थे उधार।
बस इनका लाभ उठाने को, मथ पड़े मन्थरा के विचार।।25।।

यह जान मन्थरा कसक उठी, राघव अभिषेकी कठिन बात।
खन्डित होगी कैकेई की, सम्मान प्रतिष्ठा पदाघात।।26।।

युवराज मात श्री कौशिल्या, कैकेई होगी अब चेरी।
निश्वासें फूंस रही पल–पल, दावै दशनन को मूं फेरी।।27।।

कैकेई के सुख जाने पर, मेरा भी होगा घोर पतन।
खन्डित कर दूं मैं भूप दर्प, सोचूंगी ऐसा तीब्र यतन।।28।।

चलती हूं करने को सचेत, छल प्रणय बिह्वला जो अचेत।
री सोच भवन बिष बेल उगी, भूपत हित तेरे प्रति अहेत।।29।।

भूपति के भरा विषमता बिष, सम भाव कहां क्या होता है।

ननिहाल पड़ा है भरत पुत्र, मन मेरा रानी रोता है।।30।।

नर द्वारा नारी छली गई, फिर भी नारी तो नारी है।
यह चक्रवर्ती का कूट प्रेम, तूं मान रही हितकारी है।।31।।
कैकेई मंन्थरा मंत्र सुना, आवेसित होकर कुनख उठी।
विपरीत पती की बातें सुन, दासी चुप रह कह ठनक उठी।।32।।

छन्द

भरत से कम क्या मुझको राम, राम मुझको ही कहते अम्ब।
बात से तूं करती मत–भेद, राम मम जीवन के स्तम्भ।।33।।

कुबड़ी तुझको लगा पिसाच, काट लूँगी मैं तेरी जीभ।
बढ़ाना मत ऐसा बकवास, नतरु भोगे दारुन दुख दीभ।।34।।

मंन्थरा ने फिर फेंका जाल, रचाया और नया डम्फान।
हिलकती हुई हिलकियाँ भरै, कूटती कर्म अरे भगवान।।35।।

तुम्हारे लिये रात दिन मरूँ, तुम्हारे निष्कपटी हैं भाव।
राम जब बन जाये युवराज, देखना फिर सौतेला चाव।।36।।

भूल जायेंगे तुमको भूप, करेंगे कौशिल्या से प्यार।
करोगी रोकर पश्चाताप, कहोगी अब जीवन बेकार।।37।।

मुझे क्या मैं चेरी ही रहूँ, होऊँगी पटरानी क्या कभी।
तेरे भविष्य के लिये कहूँ, सम्हल जा समुझाती हूँ अभी।।38।।

इस दुख से पीड़ित दुखिया, मैं गई ज्योतिसी के ढ़िग काल।
बतलाया मुझे अबध के अवस, बनेंगे निश्चित भरत भुवाल।।39।।

पली जीवन भर तेरे साथ, तुम्हारा कैसे हो कल्यान।
राजमाता कौशिल्या बनी, तो होगा तुमको कष्ट महान।।40।।

भूप का मिथ्या शिष्टाचार, उन्हें बस कौशिल्या से प्यार।
समझती नहीं आय बिन भरत, बधावे बजने को तैयार।।41।।

अनेकों सौत कथाएँ बखान, बातें सब उल्टी सीधी गढ़ी।
समय का ऐसा हुआ विधान, समझ में कैकेई के चढ़ी।।42।।

समय का होता है जब फेर, तभी सब होते हैं अन्धेर।
मंथरा का सुन मन्थन मंत्र, कैकेई फूँस उठी मूँ फेर।।43।।

२. कैकेई का कोप भवन

साँझ समय सानन्द नृपु, गयउ कैकई गेहँ।
गवनु निठुरता निकट किय, जनु धरि देह सनेहँ।।
कोपभवन सुनि सकुचेउ राऊ। भय बस अगहुड़ परइ न पाऊ।।
सुरपति बसइ बाहँबल जाकें। नरपति सकल रहहिं रुख ताकें।।
सो सुनि तिय रिस गयउ सुखाई। देखहु काम प्रताप बड़ाई।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

आज दशा रानी की भूषन बिहीन दीन,
बिन्दी बिहीन छीन सिन्दुर छवि भालकी।
अलकें विखेर कर्ण कुन्डल सब गिरे पड़े,
रंजित दृग अंजन नहीं कंठीमणि भाल की।।
अधरों से बार–बार निश्रत निश्वास फूंस,
जैसे पड़ी महा नाग भामिन विष ब्याल की।
भामिन के हाल देख भूपति बेहाल हुये,
कम्पित तन उतरा मन भूले पद चालकी।।44।।

कंजन कर कंगन नहीं अंगन आभूषण एक,
आभा बिहीन दीन हीन सी निहोरती।
झालर टूट झूमर की कटि में करधौनी नहीं,
टूटी पग पायल पड़ी बिछियाँ उतारती।।
सधवा है किन्तु आज विधवा सी बनी पड़ी,
सारे आभूषण फेंक बस्त्रों को फारती।
कहते ''करुणेश'' रूप सारा कुरूप किये,
बोलै न डोलै तन तनक न बिचारती।।45।।

सवैया

देख कुरूप स्वरूप महाँ, राव समीप गये रहिकै।
प्राण प्रिये केहि हेतु रिसात, शान्त हुये इतना कहिकै।
सहलाते हुये बहलाने लगे, आशक्त बने मुद में चहिकै।
अवधेश कहें कुछ बोल प्रिये, रूठी है क्यों नाहक दहिकै।।46।।

छन्द

राव को देखा अति आशक्त, उठी रानी बहियाँ झकझोर।
क्रोध अन्तर ऊपर से नेह, दृष्टि थी जैसे चन्द्र चकोर।।47।।

सुना है मैने हे प्रिय प्रान, आप रघुकुल में है विख्यात।
भले संकट में पड़ें प्राण, न झूठी होगी निकली बात।।48।।

कहा राजा ने कहती सत्य, सत्यवादी हूँ मैं बेजोड़।
चाहती हो क्या मुझसे कहो, अन्यथा करती हँसी हँसोंड़।।49।।

पूछते हो जैसे अनजान, आपको ज्ञात नहीं भूपाल।
यही है रघुवन्शिन की रीत, बनो दाता फिर देते टाल।।50।।

करो मत चिकनी चुपड़ी बात, जाइये कौशिल्या के पास।
उसी का पुत्र तुम्हे प्रिय राम, मुझे क्या मैं हूँ नाथ उदास।।51।।

माँगती हो क्या तुम बरदान, मुझे क्या देने मे आपत्ति।
तुम्हारा ही है पूरा राज्य, भरत की है सारी सम्पत्ति।।52।।

बरोरू बर माँगो मूँ खोल, उपेक्षा की कब तुझसे कभी।
राम की शपथ करूँ सत बार, दान में तन मन धन दूँ अभी।।53।।

तुम्हारे लिये सभी धन भृत्य, सुनिश्चित कर अपने बरदान।
रहूँगा तेरा ही कृत कृत्य, न होने दूँ तेरा अपमान।।54।।

करूँ क्या मैं तुम पर विश्वास, सत्यवादी बन भूले आप।
करनी–कथनी क्या है समान, समझती मिथ्या सभी प्रलाप।।55।।

कहा था कभी स्वयम्बर समय, कैकइ सुत को दूंगा राज।
सुत को भूल गये प्रिय नाथ, राम को बना रहे युवराज।।56।।

आप यदि हैं रघुवंशी नाथ, कीजिये अपने वचन प्रमान।
भरत को देउ अवध का राज, यही मम है पहला बरदान।।57।।
क्षमा करिये हे कौशल नाथ, दूसरा बर मांगू कर जोर।
आप हैं सत्यव्रती महाराज, दूसरा वर है कछुक कठोर।।58।।

अवध से निष्कासित हों राम, पिता की आज्ञा पालन करें।
विपिन में चौदह वर्ष कठोर, तपस्वी बनके वन में रहें।।59।।

अवध को छोड़ छोड़ दें अन्न, करैं न बस्ती नगर प्रवेश।
जाएँ राज साज को त्याग, उदासी रूप सन्त सा वेष।।60।।

बाघिन सी थी कैकई गरज, सुनी बूढ़े दशरथ गजराज।
सहम कर थरथर कंपित देह, गिरी ज्यों ताड़ रूख पर गाज।।61।।

कटी कदली सम भूपत गिरे, विम्ब मुख सूखा हुआ विवर्ण।
शुष्क अधरों में थी निश्वास, धूल धूसर हो जैसे स्वर्ण।।62।।

चक्रवती सुख पूरण चन्द्र, ग्रहण सा कैकेई बरदान।
अवध में घिरी घटा दुख घोर, बरसने लगे कठिन परवान।।63।।

हुआ भूपत का मुख निस्तेज, बुझे सब आशाओं के दीप।
मृत्यु सा धरे भयंकर रूप, फुफकती रानी वहीं समीप।।64।।

कूल्हते भूपति कहने लगे, विनयबत वाणी विह्वल शीर्ण।
दूसरा वर क्या तूने लिया, किया है मेरा हृदय विदीर्ण।।65।।

अकड़ कर कैकेई ने कहा, दिखावा ही था मुझ पर प्यार।
राम जब इतना प्यारा तुम्हें, बने क्यों वर के लिये उदार।।66।।

बने हो रघुवंशी तुम व्यर्थ, फेर लो अपने मूँ की बात।
मरण तुम मेरा निश्चय जान, अवध से जायँ न राम प्रभात।।67।।

३. श्रीराम वन गमन भूमिका

होत प्रातु मुनि वेष धरि, जौं न रामु बन जाहिं।
मोर मरनु राउर अजस, नृप समुझिअ मन माहिं।।

परेउ राउ कहि कोटि बिधि, काहे करसि निदानु।
कपट सयानि न कहति कछु, जागति मनहुँ मसानु।।

(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

आज भूप दशरथ को नागिन भई काली रात,
बीतत बिताये नहीं बात–बात बढ़ती है।
रघुवर ममत्व सोच अँखियन से झरत अश्रु,
आरत दुख दीन दशा घटे नहीं घटती है।।
बैठी रिसानी गुर्राती है सिंहिनी सी,
रानी कटुवाणी के बज्र वाक्य पढ़ती है।
बचन ब्रज आहत कराहत अवधेश भूप,
हृदयहीन सबला बन अवला सिर चढ़ती है।।68।।

तर्ज राधेश्याम

हो गया भोर दिनकर किरणें, सहलाती सी धरती आंगन।
इस ओर अवध का जन मानस, उद्वेलित सब हर्षित तन मन।।69।।

नर नारि मनीषी ज्ञानवन्त, आ वाल बृद्ध व साधु सन्त।
हो रही परस्पर चर्चाएँ, श्रीराम बने अब अवधकंत।।70।।

दैवी बिधान का पता किसे, क्या होता है क्या हो जाये।
परिवर्तन अपना नर्तन कर, आनन्द किरकिरा कर जाये।।71।।

छन्द

हुआ वस यही भयंकर हाल, हर्ष को डसा कर्ष का ब्याल।
भद्र श्रीरामचंद्र को भूप, बुलाया महलों में तत्काल।।72।।

राधेश्याम

पितु आज्ञा पर प्रिय राम पुत्र, सत्वर महलों की ओर चले।
रंचक भर हर्ष बिषाद नहीं, कर्तव्य बोध मर्याद पले।।73।।

अनाशक्त निर्लिप्त भाव, आते ही प्रथम प्रणाम किया।
माँ कैकई के चरण पड़े, दोनों का आशीर्वाद लिया।।74।।

छन्द

पलटकर देख पिता को दीन, तड़पते जैसे जल बिन मीन।
पड़े अवनी पर अवनीपाल, मणी बिन जैसे अहि हो दीन।।75।।

नृपति का मुखड़ा तेज विहीन, बुझ रहा आशाओं का दीप।
निराशा की श्वासें उश्वास, खींचते बारम्बार महीप।।76।।

वहीं पर कैकेई थी कुटिल, बनी ज्यों शुष्क कटीला काठ।
बिछाती कटुता के कटु कोट, सुनाती सीख मन्थरा पाठ।।77।।

देखते ही राघव को भूप, गिरे धरणी पर हुए अचेत।
देख पितु दीन दशा रघुनाथ, राम कह भर भर श्वाशें लेत।।78।।

इन्हें क्या कष्ट हुआ हे अम्ब, बात क्या कैसे तात अधीर।
कौन पीड़ा से तड़पन हुई, देख कर छूट रहा है धीर।।79।।

बताती हूँ सुनिये प्रिय राम, तुम्हीं पर है नृपाल की प्रीत।
प्रीत बस भूपति से यह समय, करा सकता है सब अनरीत।।80।।

प्रीत बस सूर्यवंश का सुयश, मिटा देंगे ऐसा अनुमान।
मोह में तेरे हैं प्रिय राम, न देंगे वे मेरा वरदान।।81।।

जानती हूँ मैं तुमको राम, पिता के हो तुम सच्चे भक्त।
करो इनकी आज्ञा प्रतिपाल, चहे कितनी भी होवे शख्त।।82।।

दिए भूपत ने दो बरदान, अभी तक मुझको रहा न ज्ञान।
प्रथमतः भरत बनै भूपाल, दूसरा आप करैं प्रस्थान।।83।।

तपस्वी बन दण्डक वन जाय, अन्न चौदह वर्षों न खाय।
करो न बस्ती नगर प्रवेश, उदासी वृत्ति लेहु अपनाय।।84।।

प्रेम के वशीभूत भूपाल, नहीं दें पायेंगे आदेश।
आप ही सोच समझ के राम, मेट दो यह भूपति का क्लेश।।85।।

नहीं तो तुम पर प्रेम अगाध, करा सकता है कुल अनरीत।
न जाने क्यों भरतादिक छोड़, तुम्हीं पर है नरपति की प्रीत।।86।।

आपकी स्वीकृति पर ही राम, राव की हार समझ या जीत।
आपके हाथों ही अब बात, न जाने दो रघुकुल की रीत।।87।।

धारिये वल्कल बेष विशेष, जाइये दण्डक वन श्रीराम।
पिता की आज्ञा पालन होय, इन्हें यूँ करने दो विश्राम।।88।।

सुना भूपति की आँखें खुलीं, बोले करो ना ये उपहास।
राम बिन जी न सकूं पल एक, इन्हें रहने दो मेरे पास।।89।।

निछावर हो जाये सर्वस्व, राम बिन निकल जाँयेंगे प्रान।
भरत को ही दूंगा युवराज, भूल जा तूं दूजा बरदान।।90।।

अभागिन रोक न जाँयें राम, राम जल पावन मैं हूँ मीन।
तड़प कर निकल जायेंगे प्रान, राम के ही जीवन आधीन।।91।।

राम ने कहा तात हे तात, धर्म ध्वज धीरज धारण करो।
मोह में मेरे होकर ग्रस्त, सत्य मर्यादा से न टरो।।92।।

त्याग कर अवध पुरी सुख साज, रहूंगा वन में चौदह वर्ष।
उदासी जीवन ले सन्यास, कष्ट क्या होगा मुझको हर्ष।।93।।

मातु दें मुझको आशीर्वाद, भरत भैया को देना राज।
बन्धु–बान्धव सब सुख से रहें, दण्डक वन जाता हूँ आज।।94।।

४. माँ कौसल्या सेॅ अनुमति

तात जाउँ बलि बेगि महाहू। जो मन भाव मधुर कछु खाहू।।
पितु समीप तब जाएह मैआ। मइ बड़ बार जाइ बलि मैआ।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

श्रीराम सर्व सुख धाम चले, आये कौसल्या मात भवन।
था मनमें हर्ष विषाद नहीं, मुस्कान मधुर मीठी चितवन।।95।।

रघुनन्दन माँ अभिनन्दन कर, कौसल्या आशीर्वचन कहे।
प्रिय राम तुम्हारे सिर शास्वत,यश कीर्ति अवध का ताज रहे।।96।।

नित्य क्रियाओं से निवृत्य, हे वत्स करो शिव आराधन।
सज–धज के आने लगे सभी, श्री गुरुजन वा हर्षित पुरजन।।97।

जुड़ गया सभी पूजन विधान, आ गया सप्त सागर का जल।
कब देखूँ तेरा राज तिलक, उत्सुकुता होती है पल–पल।।98।।
गूंजे मृदंग डफ शहनाई, उड़ रही अवध सुरभित सुगन्ध।
आनन्द मगन प्रिय राम सभी, राज्याभिषेक का है प्रबन्ध।।99।।

देखो आनंदित सभी बृन्द, ड्योढ़ी में जय–जय बोल रहे।
हर्षाभिभोर प्रिय लखन पुत्र, अभिसिन्चन को रंग घोल रहे।।100।।

देखो प्रिय बहिन सुमित्रा भी, अर्चन हित थाली सजा रही।
श्रंगार किये परिमल कुमकुम, सिय जावक मेंहदी रचा रही।।101।।

मृदु मुस्काते रघुवर बोले, हो गया हमारा राज तिलक।
मिल गया राज दन्डकवन का, माँ कैकेई की पूर्ण ललक।।102।।

अवधेश बनेंगे भरत–बन्धु, ऐसा पितु से बरदान लिया।
उनको ही सौंपा राज–काज,मुझको दण्डक प्रस्थान किया।।103।।

क्या कहा राम कैसी विपत्ति, हर्षित कंजन कैसा तुसार।
जो पुत्र मानती थी अपना, उस मां का ही निर्मम प्रहार।।104।।

अवधेश बने प्रिय भरत पुत्र, वह भी तो छोटा बेटा है।
तुमको वन–बीहड़ की आज्ञा, यह प्रेम सरासर खोटा है।।105।।

माता–पितु से दस गुनी श्रेष्ठ, मेरी आज्ञा वन मत जाओ।
तुम भी देखो प्रिय बन्धु तिलक, मत बीहड़ का पथ अपनाओ।।106।।

यदि मात–पिता ने दी आज्ञा, तो अवध तुम्हें सत–कानन है।
सुत–संस्कृति का निर्वहन करो, रह जाय कैकेई का मन है।।107।।

माँ विस्मृत कर तूं विगत–बात, मुझको दण्डक वन जाने दो।
अति छोटी चौदह वर्ष बात, अपना पितु धर्म निभाने दो।।108।।

छन्द

जानता हूँ प्रिय भरत सुभाव, निश्चल प्रेम सनेह अटूट।
न रखना उसके प्रति दुर्भाव, समझना उसको पुत्र अकूट।।109।।

भरत मुझको अतिशय प्रिय मात, भरत की अब सारी सम्पत्ति।
धरै मत मेरी चिन्ता चित्त, भरत पर आये नहीं विपत्ति।।110।।

तर्ज राधेश्याम

छलक पड़े दृग अश्रु बिन्दु, चिन्तन कर पिय का तपसी वेष।
दण्डक वन जाने की गाथा, सुन सिय को हुआ महान क्लेश।।111।।

माता कौसल्या के समक्ष, टूटे लज्जा भय के बन्धन।
करुणामय स्वर में पुकार उठी, हा छोड़ चले राघव नन्दन।।112।।

ठहरो–ठहरो हे प्राणेश्वर, मैं भी भूषण पट त्याग रही।
छाया बन वन–वन साथ चलूं, पति चरणों में रति लाग रही।।113।।

दुर्दिन की दुखी व्यथाओं से, खण्डित हो जाती लोक लाज।
राघव कौसल्या के समक्ष, बोले प्रिय भामिन सुनो आज।।114।।

वन पथ कंटका कीर्ण कुशा, बीहड़ बृश्चिक विषधर अनेक।
सिर त्राण रहेगी पर्ण कुटी, त्रण सैया होगी नहीं नेक।।115।।

पद कोमल कंज तिहारे भला, पथ कंटक हैं किस भांति चलौ।
ग्रीषम वर्षा हिम सिहरन में, सिख मानो प्रिये मत व्यर्थ गलौ।।116।।

दिन जातन बेर न लागत है, अवधेश के महलन में विहरो।
अवलम्ब बनो पितु मातु प्रिये, हठ ठानो नहीं पुर में ठहरो।।117।।

पिय की शुचि सीख सुनी सिय ने, दृग लाल हुए अशुँवा भरकें।
मुँह फेरिकें हेर रही पिय को, नख रेख खिचें धरनी धरिकें।।118।।

दृग रंजित अंजन लीक वही, छा गई कपोलन में बहिके।
ज्यों इन्दु पै श्यामल राहु ग्रसे, अवनी पै पड़ी पद को गहिके।।119।।

बिखरी अलकैं झलकैं पटसे, दृग मंजुल अश्रु प्रवाह चला।
कर कंजन से विछुरे कंगना, पुट शुष्क हुए विधु बिम्ब ढला।।120।।

कवित्त

प्राणनाथ प्राण बिना देही न रहती ज्यों,
स्वर बिन ज्यों रागनी पान बिन सुपारी है।
राज भवन रानी बिन पानी बिन कूप जैसे,
चन्द बिना रजनी की शोभा अँधियारी है।।
कमल बिना जल की ज्यों शोभा न होती नाथ,
वैसे ही नाथ पती बिना शून्य नारी है।
छोड़ते क्यों नाथ साथ लीजिये रघुनाथ आज,
दासी का दोष क्या जो बात ये उचारी है।।121।।

छोड़ दूँ अवध पर छोडू न पत्नी धर्म,
छाया सी चलूँ साथ वन में निभाऊँगी।।
सुख–दुख में पत्नी कब छोड़ती पती का संग,
संग–संग स्वामी वन कष्ट मैं उठाऊँगी।
सेवा करूंगी पथ श्रम में चरन चाप,
बैठ कहीं छांव तरे अंचल डुलाऊँगी।
साथ नहीं लोगे तो प्राणनाथ मेरा प्रण,
वन को साथ नाथ प्रान अपने पठाऊँगी।।122।।

बल्कल आप धारण करैं पहिनूं मैं रेशम पट,
भारतीय संस्कृति यह नारी का धर्म नहीं।
शुष्क तृण पत्रों में आप करैं भूमि सयन,
सयन करूँ सैया क्या होगी मुझे शर्म नहीं।
नारी नारित्व यही छाया सी चलूँ साथ,
वर्षा हिम सहूँ ग्रीष्म होगी मुझे गर्म नहीं।
विरहा भयभीत सिया राघव पद बन्दन कर,
विह्वल आवेश क्लेश होता कुछ नर्म नहीं।।123।।

छन्द

सिया का देखा प्रेम अपार, राम जी करने लगे विचार।
साथ ना लूँ तो तजेगी प्रान, कहा कानन को करो प्रस्थान।।124।।

खड़े थे लखन शान्त गम्भीर, श्रवण कर बातें हुए अधीर।
देख दोनों का तपसी वेष, वहा अँखियों से छल–छल नीर।।125।।

भयंकर हुआ हृदय सन्ताप, सम्हाला अपना तर्कस चाप।
अश्रु छलकाते कहने लगे, दास को क्या कहते हैं आप।।126।।

बन्धु भाभी का बल्कल वेष, दृष्टि गत होते हुआ क्लेश।
त्याग पट भूषण मैं भी चलूँ, हो रहा मेरे मन आवेश।।127।।

अनुज होकर अनुगामी रहूँ, अधिक क्या और आपसे कहूँ।
सहें जो आप बिपिन के कष्ट, आपका सेवक बन मैं सहूँ।।128।।

करूँ प्रच्छालन पद की धूल, खनन कर ल्याऊं वन से मूल।
देखकर दर्शन रहूं प्रसन्न, जाऊँगा सभी अवध सुख भूल।।129।।

सत्य कहता कर शंकर साख, बिपिन में दैत्य उठायें आँख।
सभी को पल में करूँ बिनष्ट, भले ही होवैं दो दस लाख।।130।।

आपके बिना अवध में धुवाँ, लगेंगे यमघट पनघट कुँआ।
रुदन कर दौड़ें स्वान स्रगाल, मन्थरा मन में ही सुख हुआ।।131।।

अवध क्या मैं हूँ स्वयम् अधीर, उठेगी बन्धु बिरह की पीर।
व्यथा से व्यथित हृदय में चोट, दिखाऊँ कैसे चीर शरीर।।132।।

प्रिय बचन कहे तब राम, अवध में रहिये करके यतन।
तात वर देकर दुख से अन्ध, तुम्हीं हो आश्रय मूलक नयन।।133।।

जब तक न आयें भरत भ्रात, तभी तक करो सभी प्रतिपाल।
उर्मिलादिक महिलायें दुखी, अवध का जन–जन मन बेहाल।।134।।

आपसे विनय करूँ अनुरोध, तात सुन आया मुझको क्रोध।
जिन्होंने सब सुख किया बिनाश, नहीं कुछ होता मन को बोध।।135।।

कवित्त

मेरे सिद्धांत लखन नहीं ये क्रोध उचित,
गुरु जन पर रखना स्नेहिल सम्मान दृष्टि।
अंगुली उठाने का अपना अधिकार नहीं,
रूठें न माता–पिता रूठे सम्पूर्ण श्रष्टि।।136।।

छन्द

राम ने देखी बंधु की पीर, खड़ा सब नाते तोड़ अधीर।
लखन को होता तनक न धीर, वन चलने को कहा रघुबीर।।137।।

कवित्त

माता सुमित्रा की आज्ञा ले आइये,
वन के प्रस्थान हेतु कारण बताइये।
वधू उर्मिला से बताना मैं जाता हूँ,
आओ लौट शीघ्र समय व्यर्थ न बिताइये।।138।।

बन्धु तो वही जो रखते बन्धुत्व प्रेम,
नीरस या सरस समय पूर्ण साथ देते हैं।
भाई से भाई का होता कटु भाव नहीं,
बन्धन अपनत्व साथ अपने सिर लेते हैं।
सोच रहे माता का कैसा हो मनोभाव,
मातु पास जात लखन साँसे भर लेते हैं।
भनत 'करुणेश लखन पहुँचे सुमित्रा पास,
माता सिख पाय राम साथ चल देते हैं।।139।।

मंत्री सुमन्त को बुलाय कहा भूपति ने,
रथारूढ़ राम लखन सिया को ले जाइयो।
ऋषियों के आश्रम में चौदह दिन वास करा,
सबको समुझाय अवध वापस ले आइयो।।
होय न विलम्ब तात तलफौं मैं राम बिना,
करिकें कोई जतन शीघ्र सुतन्ह को ल्याइयो।
भरता रहूं दर्शन की आशा से श्वासें मैं,
कहना हे राम बृद्ध पिता को बचाइयो।।140।।

५. श्री राम का वन प्रस्थान

चढ़ि रथ सीय सहित दोउ भाई। चले हृदयँ अवधहिं सिरु नाई।।
(श्रीरामचरित मानस से)

तर्ज राधेश्याम

उड़ चले अवध से जन रंजन, आगे पीछे रथ खंजन से।
चीख उठा सब जन समाज, गिरते पड़ते व्याकुल तन से।।141।।

मानव ही क्या गज हय–साला, हाथी घोड़े चिग्घाड़ उठे।
शुक मैना पिंजड़ों में तड़फे, वन जाते राम पुकार उठे।।142।।

झेलेंगे कैसे ये वन में, वर्षा हिम आतप की ज्वाला।
जिन सुकुमारों को बोझिल है, गले पड़ी पुष्पों की माला।।143।।
आँखों से देखा नहीं गया, ये सुख माता कैकेई को।
कैसी पखान की मूरत है, मन मलिन मंथरा दाई जो।।144।।

कोई कहता दें दोष किसे, बिधि वाम विलक्षण है माया।
जिसने सारे सुख छीन लिये, ये दुर्दिन सबको दिखलाया।।145।।

सोचा था आ रहा बसंत, ग्रीषम की ज्वाला भभक उठी।
कोमल कलियों के डसने को, भावी बन रानी लपक उठी।।146।।

छा गया अवध में अन्धकार, इन सुकुमारों के जाने से।
धूमिल गलियाँ व कनक भवन, अँधियारा दुख के छाने से।।147।।

हा राम चले वनवासी बन, हम सभी साथ में जायेंगे।
वन में ही रहकर सेवा कर, चौदह वर्ष बितायेंगे।।148।।

रथ के पीछे आ वाल बृद्ध, कृन्दन करके विलखाते हैं।
बन गये बावले से ब्याकुल, गिरते उठते पछताते हैं।।149।।

रथ चलने में सम्पूर्ण दिवस, होकर व्यतीत सन्ध्या आई।
तमसा तट पर विश्राम किया, समझाया सबको रघुराई।।150।।

प्रभु माया से जनता विमुग्ध, फिर खोज मार रथ हाँक दिया।
सिय साथ बन्धु वर लछिमन के, तमसा तट से प्रस्थान किया।।151।।

पहुँचे पावन गंगा तट पर, श्रंगबेरपुर मन भाया।
राजन निषाद पहुँनाई से, तरुवर तर आश्रय पाया।।152।।

प्रातः प्राची में घोल रही, अरुणाई का ऊषा अबीर।
उस समय राम रघुनन्दन ने, मंगवाया बट का दुग्ध झीर।।153।।

मुख मंडल में अलकें विखेर, लट जटा बनाये दुग्धडार।
मंत्री सुमंत्र ने देखा जब, वह चली दृगों से अश्रु धार।।154।।

बोले मंत्री सुनिये कुमार, कौशल पति ने जो कहा करो।
चौदह दिन का आदेश हुआ, मत जटा–जूट का वेश धरो।।155।।

मंत्री सुमन्त रघुनन्दन को, अनुनय करके यूं समझाया।
बोले बहोरि बधु सीता से, जो कौसल्या ने बतलाया।।156।।

बोले बिनम्र स्वर रघुनन्दन, हे तात आप है पिता तुल्य।
इतना ही कह देना जाकर, है धर्म नहीं कुछ सत्य तुल्य।।157।।

शिवि–दधीच–हरिचंद भूप, रघुकुल की कथा सुना देना।
मैं भी उस वंश का वंशज हूँ, बस इतनी बात बता देना।।158।।

तपसी वन चौदह वर्ष रहूँ, पितु आज्ञा न ठुकराऊँगा।
सम्पूर्ण अवधि को पूरी कर, फिर शीघ्र अवध मैं आऊँगा।।159।।

६. श्रीराम केवट संवाद

मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु न जाना।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

देख के गंग तरंगन को, गम्भीर सुतीर बिहारिन हैं।
पय पान किये स्नान किये, जग के सब पाप निवारिण हैं।।160।।

तीनों तपसी अभिसिन्चन कर, नत मस्तक गंग प्रणाम किया।
उस पार तरण के हेतु राम, तट के केवट का नाम लिया।।161।।

केवट देखा माधुर्य रूप, नत हुआ हर्ष से हर्षित मन।
प्रमुदित प्रमोद आमोद भरा, कर तीन तपस्वी के दर्शन।।162।।

प्रिय केवट नौका ले आओ, उस पार करो गंगा प्रवाह।
उत्सुक दण्डक वन जाने को, सम्पूर्ण करो अन्तस्थ चाह।।163।।

प्रभु सुनता हूँ जन श्रुतियों से, जादू है चरणों की रज में।
मानव कर देती पत्थर को, नैया तो लकड़ी बंशज में।।164।।

वन गई अहिल्या श्राप सिला, नौका नारी वन जायेगी।
मेरी नारी इस नारी की, घर में झन्झट मच जायेगी।।165।।

नौका से करता तरणि तरण, नौका से ही कुटुम्ब पालूँ।
हो गई कदाचित नाँव नार, प्रभु आज्ञा इस कारण टालूँ।।166।।

यदि निश्चित प्रभु को तरणि तरण, करके गंगा तट जाना है।
तो हे सर्वेश्वर सर्व प्रथम, चरणों की रज धुलवाना है।।167।।

सौगन्ध करूँ नृप दशरथ की, तब तक नहिं नाव बिठाऊँगा।
जब तक ना चरन धुलायेंगे, मैं नौका नहीं चलाऊँगा।।168।।

चाहे मारें वरु तीर लखन, मृत हो जाऊँ दरकार नहीं।
पद पद्म पखारे बिना नाथ, नैया खेना स्वीकार नहीं।। 169।।

प्रेमाग्रह देखा रघुपति ने, मुसुकाने भामिन बन्धु हेर।
प्रिय बचन कहे करुणा निधान, पच्छाल चरन मत कर अबेर।।170।।

केवट प्रसन्न हर्सोद्वेलित, जल भरा कठौता ले आया।
सस्नेह चरन प्रच्छालन कर, यह भक्त बत्सला प्रभु दाया।।171।।

अखिल निरंजन जन रंजन, योगी जन ध्यान न पाते हैं।
ब्रह्मादिक नारद–शारद शिव, सब नेति–नेति यश गाते हैं।।172।।

स्मरण मात्र से ही होता, इस भव सागर से जीव पार।
नर लीला करते नारायन, कैसे गंगा की तरें धार।।173।।

केवट करता पद प्रच्छालन, नभ से लख देव बृन्द हर्षे।
कर भाग्य प्रशंसा भूरि–भूरि, मालायें पुष्पों की वर्षें।।174

७. मुनि भारद्वाज से मिलन

प्रात प्रातकृत करि रघुराई। तीरथराजु दीख प्रभु जाई।।
मुदित नहाइ कीन्हि सिव सेवा। पूजि जथा विधि तीरथ देवा।।
तब प्रभु भरद्वाज पहिं आए। करत दंडवत मुनि उर लाए।।

(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

निषाद भी को साथ लिए चले श्री राघवेन्द्र,
संगम स्नान–ध्यान पूजा त्रिपुरारी की।
गंग की तरंगे उमंग भरीं उछल रहीं,
पाप पुंज दूर करें महिमा असुरारी की।।
उठकर वनवासी राम लेके कोदण्ड हाथ,
भरद्वाज आश्रम जाने की तैयारी की।
देख सभी तापस वेष भानुकुल भूषण का,
साधु सन्त बोल उठे जै हो धनुधारी की।।175।।
शिष्यों सहित भरद्वाज मुनि को प्रणाम किया,
आशिर्वचन कहके मुनि आसन बिठाये हैं।
कहने लगे मुनिवर, कैसा तपस्वी वेष,
भूपति आदेश हेतु कारण बताये हैं।।
हृदयेश्वरी सीता साथ राघवमणि लखन सखा,
मुनिवर समर्पित भोग कन्द मूल पाए हैं।।176।।
विगत विश्राम राम बैठे कुश आसन पै,
भरद्वाज बोले आज सुफल तप त्याग है।
पूर्ण जप योग सिद्धि मन के मनोरथ भी,
दर्शन कर राम हुए पूरा अहोभाग्य है।।
अन्तर की कामना व मन की अभिलाषा पूर्ण,
फिर भी प्रभु आपसे आज एक मांग है,
काम क्रोध लोभ मोह ममता सब त्याग दिए,
नाथ बढ़े दिन–दिन श्री चरनन अनुराग है।।177।।

भरद्वाज शिष्यों साथ राम सुयश गान किया,
हाथ जोड़ राम कहें मुनिवर आप धन्य हैं।
करके आतिथ्य भाव भोजन कंद मूल दिये,
कीर्ति गान करते व्यर्थ आप ही सामर्थ हैं।।
रघुवर मुनीश वाक्य सुनके परस्पर सुख,
भनत करुणेश, यही समता का अर्थ है।
रात्रि विश्राम कर प्रात फिर नहाय गंग,
करिकै प्रणाम चले दण्डक वन पंथ है।।178।।
थकित होंहिं सुन्दर छवि देखत वनवासी वृन्द,
सुनके प्रसन्सा रूप दौड़त हैं काम छोड़।
देखत दोउ बन्धु सिय सफल करै नयन सब,
राहगीर सभी देत अपनी ही राह मोड़।।
अन्तर अनुराग भरे भागत हैं पीछे लगे,
बाल बृद्ध संग लगे घर का ममत्व तोड़।
मगन प्रेम विह्वल सब लेते हैं लोचन लाभ,
क्षण भर ठहरिये नाथ कहते दौड़ हाथ जोड़।।179।।
दुखित देख कहन लगे इनके पग त्राण नहीं,
वस्त्र और भूषणहीन भूमि सयन करते हैं।
भोजन में कन्दमूल वन के फल फूलों से,
क्षुधा शान्त करके वीर वन में बिचरते हैं।।
वर्जित प्रवेश गांव पुर में कहीं जाते नहीं,
वर्षा हिम आतप दिन रात सहन करते हैं।
दोनों बन्धु पत्नी साथ जाते हैं दण्डकवन,
दर्शक बृन्द इन्हें देख हाय राम कहते हैं।।180।।
एक कहै जग की सुविधायें यदि इन्हें नहीं,
ब्रम्हा ने व्यर्थ सभी उपक्रम बनाये हैं।
आतप सन्ताप हिम शीतल घोर वर्षा की,
कोमल सुकुमार सहैं सहमें कुम्हिलाये हैं।।

शोभा के धाम राम लखन सीय तीनों पथिक,
अँखियन समायें कोट काम को लजायें हैं।
सभी नर नारी देख हर्षे फिर दुखी होंय,
सनै सनै चलत पथ जमुना तट आये हैं।।181।।

८.श्रीराम की वन यात्रा

वे पितु मातु कहहु सखि कैसे। जिन्ह पठए बन बालक ऐसे।।
राम लखन सिय रूप निहारी। होहिं सनेह विकल नर नारी।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

कहता निषाद करबद्ध प्रभो, चल कर आगे वन पंथ कठिन।
झाड़ी तृण कंटक काँस कुशा, करते सब भ्रम पंथी का मन।।182

यदि आज्ञा हो कुछ दूर चलूँ, है मुझे मार्ग का पूर्ण ज्ञान।
सौभाग्य समझता हूँ अपना, हे भानु वंश वन कमल भान।।183

तीनों तपस्वियों से आगे, पथ शोधन करता था निषाद।
इनके कोमल पद देख–देख, होता था केवट को विषाद।।184।।

वन बीहण के उत्तुंग श्रंग, ओझिल पथ भीषण झाड़ी थी।
तीखे कंकड़ कुचले काटे, पग–पग निषाद ने भाषी थी।।185।।

पद कंकला कांटे छील रहे, तन चीथें तीखी साखायें।
रघुनन्दन का मन दुखी हुआ, देखी सीता की विपदायें।।186।।

दीन दयालहि लागि दया, मन्थर चाल थकी सियकी।
रघुनाथ हृदय करुणा से भरा, प्रभु जाननहार सवै हियकी।।187।।

तरु अंचल छांव में जा बैठे, आओ यहाँ लघु बन्धु–सिया।
देखो छटा झर–झर निर्झर, कब इसने कहाँ विश्राम किया।188।।

कैसी भी परिस्थिति हो जग में, उल्लास रहे हत आश न हो।
दोनों नश्वर हैं सुख या दुख, क्षण भंगुर जीव निराश न हो।।189।।

अल्हादित रहें बिसाद न हो, श्रम साहस में अवसाद न हो।
मन को इतना श्रम शील करो, लक्ष्य कभी बरबाद न हो।।190।।

जो भी समय सामने आये, सास्वत हो ईश्वर का बोध।
कभी सत्य व धर्म त्याग कर, कीजे मत असत्य का शोध।।191।।

अति विनम्र बोला निषाद स्वर, अभी दिवस थोड़ा श्रीराम।
इस पठार उस पास बसा है, विपिन कोल भीलों का ग्राम।।192।।

तनिक और पथ चलिये उठिये, वहीं रात्रि विश्राम करें।
सभी किरातों से परिचित हूँ, वहीं व्यवस्था पूर्ण करें।।193।।
प्राची में लख रवि स्वर्ण कलश, प्रातः पूजन कर चले राम।
सिय राम चरन के चिन्ह बचा, चलते लक्ष्मण कोदण्ड थाम।।194।।
है वेष तपस्वी तीनों का, वल्कल धारी सिर जटा जूट।
तेजोमय वपु युग भ्राता के, साहस भुज दण्डों में अटूट।।195।।

सौन्दर्य सुशोभित जनक लली, पद कोमल कंट बराय चले।
विधु विम्ब मलीन भयो श्रमसे, प्रच्छालत स्वेदहि हाथ मले।।196।

रघुनन्दन देखि दशा सिय की,करुणा अति हुई करुणाकर को।
श्रमसे विश्रान्त को शान्ति हितै, बैठे बट छाँव घरी पल को।।197।।

छिति छौनी छटा तरुपीत लता, लखि राघव सुनाने लगे हैं कथा।
चित चिन्तन से हिय क्लेश मिटै, सुनके सिय होय न मार्ग व्यथा।।198।।

धरि धीरज बंधु चले पथ पै, श्रम सीकर बिन्दु श्रवैं लट में।
पर्वत श्रेणी को देख रुके, विश्राम किया तरुवर तर में।।199।।

कोल–भील आवाल बृद्ध, सब जुड़ आये रघुवर समीप।
कथा समस्त–निषाद कही, इनके पितु हैं दशरथ महीप।।200।।

विस्तार पूर्वक बतलाई, कैकेई की वरदान कहानी।
सुनके सभी किरातों के उर, हुई हृदय में ब्यथा गलानी।।201।।

एक कहैं कैसे पितु माता, जिनने यह बनवास दिया।
हुआ हृदय पाषाण बरावर, नहिं इनके प्रति न्याय किया।।202।।

देख मधुर छवि कोमल सुन्दर, आतप श्रम से कुम्हिलाने।
गए निकट सब हाथ जोड़कर, लगे परस्पर बतियाने।।203।।

एक कलश भर शीतल जल ले, कहे नाथ धोयें सिर हाथ।
क्या हम सेवा करें आपकी, हाथ जोड़कर नावहिं माथ।।204।।

महिलायें जुड़कर भीलों की, सीता के समीप आती हैं।
रूप माधुरी छटा देखकर, बतलाती कुछ शर्माती हैं।।205।।
बतलातीं साहस बटोर कर, स्वामिन् अविनय क्षमा करें।
हम वनचर निपट गवारिन हैं, जान सभी पर दया करें।।206।।

श्यामल गौर किशोर युगल, ये कौन तुम्हारे हैं दोनों।
किनके ये राज दुलारे हैं, किस माता के प्यारे दोनों।।207।।

प्रश्न श्रवण कर सीता को, संकोच हुआ माँ धरणी का।
उत्तर कैसे दूँ प्रश्न जो है, कोल भील की घरनी का।।208।।
जो धनुष चढ़ाये खड़े हुये, वय किशोर तन के गोरे।
लखनलाल इनको कहते हैं, ये बहना देवर मोरे।।209।।

हँसकर कहने लगी एक, इनका तो नाम बताती हो।
साँवले सुंदर कौन हैं यें, क्या कहने में शर्माती हो।।210।।

घूंघट का पट डाल सिया, कर चितवन भौंह किनारे से।
श्री रघुनन्दन ओर हेर, अपना पति कहा इसारे से।।211।।

भीलों के खोहे खर्वट हों, जिस ओर राम जी जाते थे।
वहीं भीड़ लग जाती थी, दर्शक कर मल पछताते थे।।212।।

९.श्री राम बाल्मीकि संवाद

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु, तुम्ह सन सहज सनेहु ।
वसहु निरन्तर तासु मन, सो राउर निज गेहु ।।
एहि बिधि मुनिबर भवन दिखाए। बचन सप्रेम राम मन भाए।।
कह मुनि सुनहु भानुकुल नायक। आश्रम कहउँ समय सुखदायक।।
(*श्रीरामचरितमानस* से)

कवित्त

दिव्य–छटा कानन की देखी सिय लखन राम,
पहुँचे मुनि वालमीक आश्रम के सामने।
गहवर गिरि कानन के वन्य जन्तु घूम रहे,
बोलत बिहंग बृन्द, शोभित अभिराम से।।
आश्रम के आस पास मर्कट क्रीडायें करैं,
कोकिल की कूक होय पंचम की तान में।
बैठे मुनि वाल्मीक शिष्य सुनैं रामकथा,
सीय लखन साथ जाय बन्दन किया रामने।।213।।
आसन बिठाये मगाये मुनि कन्दमूल,
अहो भाग्य कौशलेन्द्र आश्रम पधारे हैं।
अब तक किया है जो साधन तप पूजा पाठ,
दर्शन से सफल सभी जोग जप हमारे हैं।।
पालक जन रंजन दुख भंजन हो कृपा सिन्धु,
दण्डक वन वासी मुनि आपके सहारे हैं।
दीन दुख भंजन लोक रंजन आप राघवेन्द्र,
धर्म कर्म रक्षण वलु वाहु में तुम्हारे हैं।।214।।
राज्य त्याग दण्डक वन आने का कारण सब,
ज्ञात हुआ मुझको सब आप के प्रभाव से।
होता अवतरण सदा पालन मर्यादा धर्म,
लीलाधर लीला आप करते विधान से।।
गा गा लीलायें भक्त होगें भव सिन्धु पार,
शरणागत होते जो निश्छल अभिमान से।
ऐसी कृपासिन्धु कृपा करिये अकिन्चन पर,
मन के आधार तुम्हीं प्यारे हो प्रान से।।215।।
सुनकर विनम्र बाक्य मुनिवर के राघवेन्द्र,
बिहँस कहें हाथ जोर धन्य हुआ नाथ में।
दर्शन पदपसनकर सुकृत हुये फलीभूत,

आप निर्देशित करैं जाऊं किस घाट मैं।।
पावे उद्वेग नहीं तापस मुनि सन्त जहाँ,
चाहता निवास करूँ सीय लखन साथ में।
सुनि के श्रीराम बचन बोले श्री बाल्मीक
आप सर्व व्यापी से कहूं क्या लजात में।।216।।
मुनिवर ये चाहता हूँ कुछ दिन निवास करूँ,
आप ही बतावें कहाँ कुटिया बनाऊँ मैं।
बाल्मीक कहन लगे व्याप्त आप कण–कण में,
जहाँ आप न हों वो कहाँ से बताऊँ मैं।।
कथा श्रवण प्यासे कान दर्शन के लोभी नेत्र,
उनके हृदय वास करो ठांव समुझाऊँ मैं।
सरल हृदय काम क्रोध लोभ से विहीन जो,
ऐसे मन मन्दिर में रहिये मनाऊँ मैं।।217।।
जिनके हृदय धर्म निरत कोविद विद्वान संत,
मातु–पिता भृत्य मित्र जानैं सद्भाव को।
श्रद्धा विश्वास भाव भक्ती में लीन रहें,
तोसी सन्तोषी शान्त समुझैं प्रभाव जो।।
स्थिर चित्त लीन रह क्षण क्षण प्रभु चरनन में,
अहंकार हीन सदा निच्छल मन भाव से।
कहत बाल्मीकि वहीं करिये निवास राम,
सीय लखन सहित धनुष बाण लिए हाथ में।।218।।
योगी तपस्वी तन कसते तपस्या से,
साधक अनेक सिद्ध योगी जिस वन में।
पावन मन्दाकिन की बहती पवित्र धार,
कानन गिरि हरित भूमि शोभा ललाम के।।
बोलत मयूर कूक कोयल कीय बृन्द–बृन्द,
खोजते मुनि वृंद जहाँ परम विश्राम को।
सर्व व्याप्त व्यापक प्रभु कण–कण निवासी हैं,
कहत वाल्मीकि जाएँ कामद गिरि धाम को।।219।।

१०. चित्रकूट निवास

रमेउ राम मनु देवन्ह जाना। चले सहित सुर थपति प्रधाना।।
कोल किरात वेष सब आए। रचे परन तृन सदन सुहाए।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

विन्ध्य के सुपुत्र दो कामद गोबर्धन थे,
कठिन तपस्या कर प्रभु से वर मांगा था।
कामद ने मांगा चरन मुझ पर निवास करें,
शोभित कर कमलों में गिरधर वर साधा था।।
कामद वर हेतु राम कामद सिर बासी बने,
भनत 'करुणेश' यही कूट ने अराधा था।
चित्रकूट छाए प्रभु आये सब देव बृन्द,
दर्श से प्रफुल्लित मन हर्ष तब अगाधा था।।220।।

तर्ज राधेश्याम

वन बेली कुन्ज लताओं में, पक्षी कुल करता था कलरव।
खोहों में बैठे वन्य जन्तु, कोलाहल का करते अभिनव।।221।।

मकरन्द पान करते मधुकर, चूसें पराग गुंजार करें।
चित्रकूट में जीव जन्तु, सब बैर भाव भूले बिचरे।।222।।

मन्दाकिन मन्द–मन्द लहरें, ले सर–सर स्वरित स्वरों से सश्वर।
पुलकित करती अन्तरमन सब, चित्रकूट पावन स्थल पर।।223।।

मनुज वेष धारी सुर आये, कुटिया का निर्माण किया।
यज्ञ हवन कर वेद मंत्र से, हुये प्रवेशित राम–सिया।।224।।

वनवासी आ बाल बृद्ध सब, कामद गिरि मिलने आये।
दिव्य रूप का दर्शन करके, पुलकित तन मन हर्षाये।। 225।।

हाँथ जोड़ कर भील–किराती, वोले सुनिये राजकुमार।
भेंट समर्पण करें तुम्हें क्या, परम अकिन्चन मूर्ख गंवार।।226।।

चिथड़ों से कंकाल लपेटें, उदर भरण की बात नहीं।
चक्रवर्ति के कुंवर कहो क्या, हम भी जीवन जियें यहीं।।227।।

राघवेन्द्र मुस्काके बोले, सच कहते मैं देख रहा हूँ
कोषाधिप इस समय भरत हैं, मैं तुम जैसा ही लेख रहा हूँ।।228।।

जब मैं अवधराष्ट्रपति हूँगा, तब सारी सुविधायें दूँगा।
मैं भी तब तक तुम सा जीवन, जीकर तुम सा ही व्रत लूंगा।।229।।

सुनकर सभी देव बृन्दों ने, पुष्प बृष्टि जयकार मचाई।
धन्य–धन्य रघुवीर–कृपालू, दीनबन्धु दाता रघुराई।।230।।

चित्रकूट के तपस्थलों से, सुनके सन्त बृन्द सब छाये।
दैत्य बृन्द दारुण दुख देते, रक्षा करो शरण में आये।।231।।

सब ऋषियों के साथ राम जी, अनुज जानकी साथ पधारे।
तपसी साधक सिद्ध सभी के, अभिवन्दन कर चरन पखारे।।232।।

आशीर्वचन झरे ऋषियों के, जय जय सन्तों के हितकारी।
जय जय जय रघुवन्श सिरोमणि, धर्मधुरन्धर जय असुरारी।।233।।

११. श्री सुमंत्र का अयोध्या लौटना

चले अवध लेइ रथहि निषादा। होहिं छनहिं छन मगन विषादा।
सोच सुमंत्र बिकल दुख दीना। धिग जीवन रघुवीर बिहीना।।

(श्रीरामचरितमान से)

तर्ज राधेश्याम

मोती चुगते से हंस छोड़, तीनों वन कष्ट सरोवर में।
चल पड़ा अवध रोता सुमंत, ज्यों द्यूत हार लौटे घर में।।234।।

बिखरे अरमान सभी उरके, क्या नृप को मुख दिखलाऊँगा।
प्रश्न करेंगे राम कहाँ, पत्थर बन कर रह जाऊँगा।।235।।

करुणेश करुण करुणा रोई, हीं हीं कर रोये राम अश्व।
रथ सूना लख पन्थी रोये, रोई पृथ्वी आकाश विश्व।।236।।

रजनी कुरूप तम में सुमंत, सरयू तट आया बंचक सा।
यमपुरी सरीखा कनक भवन, थर–थर कम्पित लख रंचक सा।।237।।

ध्वज तारन थे सब झुके पड़े, बन्दी मागध सब खड़े मौन।
मंत्री सुमंत जय जीव कहा, दशरथ बोले हे राम कौन।।238।।

जलहीन मीन मणि बिन फ़णीद्र, ऐसे ही भूप तड़पते हैं।
निश्वासें भरते हाय राम, भूपति अधीर दम भरते हैं।।239।।

बोले मंत्री से राम कहाँ, मुझको पहुँचा दो राम जहाँ।
हा राम बिना आराम नहीं, हैं राम जहाँ आराम वहाँ।।240।।

धर बज्र हृदय मंत्री बोले, जैसे तपसी बन राम गये।
मैं आया लौट बताने को, न जिव्हा में गल ब्राण भये।।241।।

सुनते ही राजन की आँखे, हो गईं तिरोहित भटक गईं।
स्वाशों में आशा की कलियाँ, श्रीराम चरन में अटक गईं।।242।।

भूपति यों तड़प–तड़प कहते, हा राम गये हा राम गये।
कुम्हिलाई कनक भवन कुन्जन, हा राम गये हा राम गये।।243।।

मिट गया सभी उल्लास हास, पट गया दुखों से कनक भवन।
घट गई रागनी रंग भरी, मच गया घोर करुणा कृन्दन।।244।।

राम राम रट लगा प्राण तज, चले गए अब अवध नाथ।
हा सत्य वचन के प्रति पालक, कर गए नाथ हम को अनाथ।।245।।

गुरुवर बशिष्ट आये तत्क्षण, शिक्षण दे पुनर्विचार किया।
रिपुसूदन भरत बुलाने हित, मंत्रीवर को आदेश दिया।।246।।

१२. श्री भरत का अयोध्या आगमन

एहि बिधि सोचत भरत मन, धावन पहुँचे आइ।
गुरु अनुसासन श्रवन सुनि, चले गनेसु मनाइ।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

गुरु वशिष्ट आदेश प्राप्त कर, भरत अवध द्रुत गति आये।
अपसकुन हो रहे बार बार, चिन्तित मन आँसू भर आये।।247।।

नीरवता देखी सरयू तट, उपवन बन बेली प्रभाहीन।
हतप्रभ था सारा अवध नगर, दयनीय दशा नर कान्तिहीन।।248।।

चहल पहल का था अभाव, मुरझाये मुख थे जन परिजन।
कान्ति हीन सब शोकग्रस्त, ड्योढ़ी दरवाजे राजभवन।।249।।

पुरजन परिजन सब मन मलीन, राष्ट्र पताका झुका हुआ।
छा रहा चतुर्दिक सन्नाटा, गीत गान भी रुका हुआ।।250।।

पुलकित थी केवल कैकेई, जब किया भरत अंतः प्रवेश।
रह गया चित्रवत पुत्र खड़ा, देखा ना था वैधव्य बेष।।251।।

आ गये लाल मम हृदय खण्ड, सानन्द सभी ननिहाल तो है।
आनंदित मेरे मात–पिता, जन–परिजन सब सुख हाल तो हैं।।252।।

वहाँ कुशल सानन्द सभी जन, कहो अवध का कुछ बृतान्त।
आनन्दित मातायें अग्रज, अनुज सहित प्रिय मेरे तात।।253।।

प्रिय बेटे सब ठीक यहाँ, पर स्वर्ग सिधारे तेरे तात ।
भरत गिरे क्षिति काँप उठा तन, हाय पिता करुणा मय गात।।254।।

आहें भर–भर कह रहे भरत, माँ बतलाओ विस्तृत कारण ।
काल के गाल गये हैं पिता श्री, कौन व्यथा जो हुआ सिधारण।।255।।
वैसे ही थी जीर्ण अवस्था, सहन किया न राम बियोग।
उठ न सके सैया से छणभर, राम विरह पीड़ा का रोग।।256।।

क्या थी ऐसी बात बताओ, जिससे भैया राम सिधारे।
किस कारण वस विवस हुये वे, उन्हें तात प्राणों से प्यारे।।257।।

आद्योपान्त बताओ मैया, पिता मरण सम्पूर्ण कहानी।
कैसे हुआ बियोग बन्धु से, यह विपत्ति आई अनजानी।।258।।

सिर्फ तुम्हें युवराज बनाने, की बातों से लागी ठेस।
भोजन पानी छोड़ भूपके, मन में भड़क उठा विद्वेस।।259।।

दूसर वर वनवास राम का, उदासीन व्रत धर वन जाये।
चौदह वर्ष व्यतीत करें यू, तदुपरान्त अयोध्या आयें।।260।।

बस इतना ही ठीक अभागिन, जाओ अब आगे मत बोल।
हाथों से कर बन्द कर्ण पुट, रहा भरत तन क्रोध में डोल।।261।।

छन्द

लगा बज्र सा घात हृदय में, जल उठे सारे तन के रोम।
कुमति तूं बैठ दृष्टि से दूर, देख कर तुझे जल रहा व्योम।।262।।

भैया का वनवास मांग के, भई नहीं तुझको कुछ पीरा।
जरी न तेरी जीभ अभागिन, परे न तेरे मुँह कीरा।।263।।

जिन्होंने शैशव से ही तुझको, अम्ब कह कही न दूजी बात,
उसी राम भैया के संग में, किया तूने यह निर्दय घात।।264।।

इससे आगे और कहूँ क्या, पुत्र हूँ तेरा लगती लाज।
तात गये साकेत शोक नहिं, दुख है वनवासी रघुराज।। 265।।

रही तूं निज सुत का सुख ताक, कौशल्या के सुत का सुख छीन।
न समझी मेरे मन का प्रेम, राम सागर तो मैं हूँ मीन।।266।।

भरत उठ कौशिल्या गृह गये, गये माता चरणों में लोट।
मुझे शंकर की शपथ है माँ, न मेरी किन्चित सम्मी खोट।।267।।

उठा कौशिल्या प्रिय–भरत, लगाकर कण्ठ परस के शीश,
जानती हूँ मैं अच्छी तरह, बात के साक्षी है जगदीश।।268।।

देखकर राम भवन को शून्य, भरत रोये करुणाकर जोर।
विकल स्मृति में भरते आह, आँशुओं से भीगी दृग कोर।।269।।

शोक का पारावार अपार, दृष्ट लख डूवा सभी समाज।
श्रवण कर नाविक नैया सरिस, पधारे गुरु वशिष्ट महराज।।270।।

जगत यह नश्वर है प्रिय–भरत, सोच तज करो पिता का दाह।
सम्हालो राज काज सर्वस्व, यही पुरजन परिजन की चाह।।271।।

प्राप्त कर गुरु वशिष्ट आदेश, भरत ने किया पिता कृत कर्म।
विलखकर बोले फिर कर बद्ध, सुनो सब मेरा भी यह धर्म।।272।।

मनाने भैया को मैं प्रथम, प्रात जाऊँ कानन की ओर।
क्षमा कर दें मेरे अपराध, न इसमें मेरी सम्मति थोर।।273।।

सर्व सम्मति से ये तय हुआ, प्रशन्सा करें भरत हो धन्य।
धन्य है भ्रात भाव का प्रेम, न होगा ऐसा बन्धु अनन्य।।274।।

१३. श्री भरत का चित्रकूट प्रस्थान

चलत प्रात लखि निरनउ नीके। भरतु प्रानप्रिय भे सबही के।
मुनिहि बंदि भरतहि सिरु नाई। चले सकल घर बिदा कराई।।

(श्रीरामचरितमानस से)

छन्द

वाहनी चतुरंगिणी विशाल, अयोध्या का सम्पूर्ण समाज।
सभी चलने के साजे साज, जहां थे राघवेन्द्र रघुराज।।275।।

श्री वशिष्ट गुरूदेव साथ में, अरुन्धती भी चलीं।
राजरानिन सहित वे जो, सुकुमारिता में पलीं।।276।।

प्रतिष्ठित मध्य निम्न सब व्यक्ति, यथोचित वाहन हुये सवार।
बिपिन में राम दरस को चले, हृदय में उमड़ रहा था प्यार।।277।।

वन्धुवर भरत शत्रुघ्न ने किया पैदल कानन प्रस्थान।
वाहन चढ़े मनाने पै, उचित यह नहीं सेव्य की शान।।278।।

श्रमित पग सेवक भूमि कठोर, कांट कँण कोमल पग में गड़े।
राम चरनो में मन की लगन, भरत चरणों में छाले पड़े।।279।।

भरत चतुरंग वाहिनी देख, हुआ चिन्ता से ग्रस्त निषाद।
मात ने वन निष्कासित किया, पुत्र क्या करने चला विवाद।।280।।

अगर ऐसा ही है तो आज, न्याय का मैं लूंगा प्रतिपक्ष।
करूँगा जब नौकायें पार, धार में बोरूं सैन्य ततक्ष।।281।।

प्रथमतः साम–दाम से काम, भरत का समझूँ अर्न्तभाव।
करूँगा तब तैसा व्यौहार, वैर या प्रेमभाव अलगाव।।282।।

लगेगा तदनन्तर जो उचित, उसी को दूँगा कार्य स्वरूप।
सुहृद वन मिलने गया निषाद, स्वयं उपहार भेंट ले भूप।।283।।

राम का भक्त समझ कर इसे, भरत ने भेंटा भुजा पसार।
प्रेम से पुलकित हुआ शरीर, भरत की उमड़ उठी दृग धार।।284।।

भरत की प्रीत–रीत पहिचान, परस्पर पकड़ हाथ से हाथ।
चला दिखलाने वो स्थान, जहां विश्राम किया रघुनाथ।।285।।

धूलकण लिए भूमि से भरत, अश्रु भर ली मत्थ्ये में टेंक।
कहें क्या हुआ कंठ अवरुद्ध, मोह से हटने लगा विवेक।।286।।

नम्र स्वर कहते वचन निषाद, धैर्य अब धारण करिये मित्र।
कर्म गति लक्ष अलक्ष अदृश्य, कर्म में विधि की गती विचित्र।।287।।

रात रोते समुझाते गई, बात बातों में हुआ विहान।
भरत का मोह न मन से गया, पराजित हुआ मित्र का ज्ञान।।288।।

जग तारिणी को करके तरन, सैन्य सह भरत किया प्रस्थान।
हुये स्ताचल अस्त दिनेश, मिला तब भरद्वाज स्थान।।289।।

वन्द पद भरद्वाज के भरत, सैन्य सह सबने किया प्रणाम।
गड़े खेमे तिरवेणी तीर, सभी ने किया रात्रि विश्राम।।290।।

सभ्यजन सहित शत्रुघ्न भरत, साथ में चले महर्षि वशिष्ठ।
गये मुनि भारद्वाज समीप, राम प्रति चर्चा हेतु प्रतिष्ठ।।291।।

भरत की प्रभु चरनों में प्रीति, भक्ति भूषित श्रद्धा के भाव।
देख कर भरद्वाज मुनि कहें, धन्य है तेरा बन्धु लगाव।।292।।

राम हैं नीति–प्रीति के सेतु, तुम्हारे प्रति स्नेह महान।
नहीं कुछ माता से दुर्भाव, किया था उनने यही बखान।।293।।

त्रिवेणी में करते स्नान, देख के धवल श्याम युगधार।
पढ़ा था जब मैंने संकल्प, तभी देखा था भरत दुलार।।294।।

मंत्र पढ़ भरत खण्ड जब कहा, भरत सुनु विलख उठे रघुनाथ।
तुम्हारे प्रति उनका अनुराग, प्रीतिमय पावन गंगा पाथ।।295।।

तुम्हारी राम भक्ति प्रिय भरत, बनी साधक जन को उपदेश।
राम के प्रति मन की अनुरक्ति, देखकर मिला पुण्य सन्देश।।296।।

आशिष लेकर भरत समाज, किया कामद गिरि को प्रस्थान।
सैन्य के पंथ प्रदर्शन हेतु, चले दो मुनिजन संत सुजान।।297।।

उधर श्री सीता देखा स्वप्न, भरत आये ले साथ समाज।
रात्रि के विगत क्षणों का दृष्य,श्रवण कर दुखी हुये रघुराज।।298।।

तत्क्षण पहुँचे कुछ कोल भील, दौड़े स्वासें भरते डरते।
हे राम प्रलय की ज्वाला सी, सेना आती हलचल करते।।299।।

अश्व गज उष्टों की चिग्घाड़, भग्न है पच्छिन के संगीत।
पर्वतों के खन्धर कर शून्य, भगे सब वन्य जन्तु भयभीत।।300।।

रथी गज पैदल अश्व सवार, उठाये कौशल सैन्य निशान।
भरत क्या हुये युद्ध उन्मत, सत्य नहीं एसा अनुमान।।301।।

श्रवण कर बोले लखन सकोप, कथन यह हो सकता है सत्य।
अकन्टक करूँ अवध का राज,सैन्य दल लाना नहीं असत्य।।302।।

न चिन्तित हों भैया श्री राम, निपटना उनसे मेरा कार्य।
राज्य पा हुआ भरत को गर्व, गर्व सर्वस्व मिटा दूं आर्य।।303।।

लखन के अरुण हुये तब नेत्र, दसन दावें फड़कें भुजदण्ड।।
सम्हाले तरकस तीर सुजान, हाथ में उठा लिया कोदण्ड।।304।।

मधुर मुस्काने राघवचन्द, लखन कहते हो जो वह सत्य।
बात कुछ सोच समझ के कहो, भरत भ्रातृत्व भाव भी सत्य।।305।।

भले भू नभ मण्डल चढ़ जाये, चहे नभ भू मंडल में आये।
भरत का राज्य प्राप्त अभिमान,न किन्चित मन का प्रेम डिगाये।।306

भरत का मैं हूँ प्राणाधार, मुझे भी भरत पर प्यार अपार।
भूलता मुझको पलभर नहीं, भले ही भूले सब संसार।।307।।

भरत भारत की भक्ति विभूति, मुझे भी भरत–भक्ति पर गर्व।
भरत की तुलना में संसार, न होगी वसुधा की निधि सर्व।।308।।

उसी क्षण आया दौड़ निषाद, बताया भरत भाव तत्काल।
समन करने को मन का खेद, मिलन हित आये दोनों लाल।।309।।

नेह बस सभी अवध नरनारि, मात सब गुरु वशिष्ट द्विज–बृन्द।
आप सब के प्रिय मनहर पुष्प, अवध दल गुंज भृंग मकरन्द।।310।।

पीठ ढ़िग आय भावमय भरत, लोट भू करते दण्ड प्रणाम।
ग्लानि बस भरत झुकाये शीश, पाहि शरणागत हे श्री राम।।311।।

लिपट कर श्री चरणों में भरत, हिलकियाँ भर–भर प्रेम बिभोर।
राम ने हृदय लगाये बन्धु, आँसुओं से भीने दृग कोर।।312।।

हृदय नभ छाई करुणा घटा, अवध के मुग्ध हुये जनवृन्द।
कण्ठ गद गद वाणी से भरे, हुये आमोदित सब मुनि चन्द।।313।।

मात अरुन्धती साथ वशिष्ठ, देख के राघव लषन ततक्ष।
गिरे चरणों में सीता सहित, दिया गुरु आशिर्वचन प्रत्यक्ष।।314।।

आज सब माताओं से प्रथम, किया कैकेई मात प्रणाम।
कौशिला और सुमित्रा वंद, मिले आगन्तुक जन से राम।।315।।

वंद पद विप्रवृन्द के राम, दिया पुरजन परिजन सम्मान।
देख मातायें विधवा भेष, राम का भूल गया सब ध्यान।।316।।

कारुणिक करुणा कृन्दन हुई, तात हा चले गये जग छोड़।
अभागा मैं था देख न सका, गये हम सब से नाता तोड़।।317।।

उतर कामदगिरि से रघुनाथ, किया तर्पण मन्दाकिन आय।
जगत प्राणिन के तारण–हार, पिण्ड दे पितु की क्रिया बनाय।।318।।

सभी ने कर विधिवत स्नान, वनोचित कन्द मूल जलपान।
अवध जन सेना सहित निषाद, किया सब ऋषियों ने सम्मान।।319।।

उसी क्षण सेना सहित–समाज, पधारे मिथिला पती विदेह।
श्रवण कर हुये प्रफुल्लित सभी, प्रेम बस भूल गये तन गेह।।320।।

सुनैना कौशिल्या से मिलीं, सुमित्रा को अभिबन्दन किया।
किन्तु कैकेई के निकट पहुंचने, में कुछ चिन्तन किया।।321।।

कौशिल्या विवेक मय कहा, होनहारी है बिधि के हाथ।
सुख दुख अथवा मिलन वियोग, कर्म फल हैं सभी के साथ।।322।।

नहीं कुछ कैकेई का दोष, बना करता है प्राणि निमित्त।
आपके लिये बराबर सभी, भेद से खिन्न न करिये चित्त।।323।।

देख पुत्री का साध्वी वेष, ह्रदय में हुआ भयंकर दाह।
सुनैना नैनो में भर नीर, श्वसन कर निकली मूँ से आह।।324।।

जनक सह सतानन्द महराज, कुल गुरु श्री बशिष्ट से मिले।
देखकर मिलन राम का लोग, रहे स्तब्ध चित्र से लिखे।।325।।

१४. चित्रकूट दरवार

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं। सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।
भरत मुदित अवलंब लहे तें। अस सुख जस सिय राम रहे तें।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

उठ खड़े हुये करबद्ध भरत, सुनिये सब गुरु जन नम्र विनय।
अयोध्या हों परिवर्ति बन्धु, श्री सिया लखन सह अरूणोदय।।326।।

राज्य प्राप्ति उद्देश्य नहीं, मैं क्षमा याचने आया हूं।
सम्पूर्ण तिलक की सामग्री, तीरथ जल अर्चन लाया हूँ।।327।।

श्री गुरुवर समझें उचित समय, तो राज्य तिलक वन में कर दें।
कौशलपुर का सम्पूर्ण राज, यह ताज साज सिर पै धर दें।।328।।

छन्द

अभागी कुल कुचक्र मैं बनू, न होगा मुझको यह स्वीकार।
भरत तो रहे राम का भक्त, मुझे श्री चरनों से ही प्यार।।329।।

यही कहती है निश्चल बुद्धि, राम ही हैं जीवन का सत्य।
अवध का वैभव राज्य समाज, राम के बिन क्षण भंगु असत्य।।330।।

उपस्थित दोनों कुल गुरुदेव, पितावत बैठे श्री मिथिलेश।
सभी मातायें श्रेष्ठ वरिष्ट, मुझे क्या होता है आदेश।।331।।

भरत बकतव्य श्रवण कर राम, धन्य है भ्रात भाव स्नेह।
प्रेम ही होता कर्म प्रधान, उसे क्या धरा धर्म व गेह।।332।।

सभी हैं मर्त्य लोक के मर्त्य, धान्य धन है नश्वर संसार।
व्यक्ति का जीवित है व्यक्तित्व, परस्पर शुभ चरित्र व्योहार।।333।।

बड़े छोटों पर करते प्रेम, कनिष्ट से होय वरिष्ट सम्मान।
इन्हीं सद्भावों से गार्हस्थ, धर्म धारण में है कल्यान।।334।।

हुआ जब अधिकारों का हनन, परस्पर होते तभी विरोध।
प्रेम हो जाता अन्तर्ध्यान, नष्ट कर देता चिंतन बोध।।335।।

क्रोधवश वही मूढ़ अज्ञान, तोड़ते मर्यादा की भींत।
तभी सब होते नष्ट विचार, नष्ट होती मर्यादा प्रीत।।336।।

तात मर्यादा को मैं समझ, करूँ प्रति पालन चौदह वर्ष।
रह तापस वन तपसी साथ, इसी ब्रत में है मुझको हर्ष।।337।।

भरत ने नम्र स्वरों में कहा, आप जो कहते बात यथार्थ।
किन्तु मैं हुआ कलंकित नाथ, मुझे भी करिये आप कृतार्थ।।338।।

सभी हम सूर्यवंश अवतंस, पिता श्री के चारों अवंतस।
सभी का बंधा परस्पर प्रेम, कहूं क्या तुमसे व्यर्थ प्रशंस।।339।।

तपस्वी बनूँ शत्रुघ्न सहित, बिताऊँ वन में चौदह वर्ष।
भ्रातृवर करें अवध अधिपत्य, तभी मेरे मन होगा हर्ष।।340।।

श्रवण कर हर्षित हुआ समाज, कहें सब भरत धन्य हो धन्य।
रानियों सहित कहें मिथिलेश, कोई न एसा बन्धु अनन्य।।341।।

पूज्य पद गुरुवर दें आदेश, भरत संकल्पित दृढ़ विश्वास।
सोच में पड़े देवता बृन्द, न होगा निश्चर वंश बिनाश।।342।।

मौन धारण कर पूज्य बशिष्ट, सोच में पड़े कहें क्या कहें।
उतरे पृथ्वी का कैसे भार, राम यदि लौट अवध में रहें।।343।।

राम श्री नीति प्रीति के पाल, ज्ञात कर गुरुवर का संकोच।
कहा प्रिय भरत सुनो धर धैर्य, मुझे पितु आज्ञा का है सोच।।344।।

जिन्होंने प्रतिपालन कर वाक्य, किया प्राणों का भी उत्सर्ग।
न विचलित होने दूँ संकल्प, यही दंडक वन मुझको स्वर्ग।।345।।

नीत से करो अवध का राज्य, प्रीति से पुर परिजन प्रतिपाल।
स्वर्ग से होंगे तात निहाल, इसी में सबका है खुशहाल।।346।।

भरत ही बने अवध युवराज, वन में रहूँ मैं चौदह वर्ष।
तात की इच्छा होगी पूर्ण, उन्हें भी होगा इच्छित हर्ष।।347।।

रहेगी रघुबन्सिन की बात, बात कारण ही ये आघात।
भरत प्रिय मानो मेरे वचन, जाव पुर भैया दल वल साथ।।348।।

श्रवण सुन शान्त हुआ जनबृन्द, भरत के छलक पड़े दृग कोर।
राज्य सुन करुणा क्रन्दन किया, हाय मैं कितना क्रूर कठोर।।349।।

बन्धु वर कंटक कुश में फिरै, वनू मैं तख्तासीन महान।
हाय ये कैसा है विधि नयाय, श्रवण करते हैं पत्थर कान।।350।।

बोध न हुआ भरत को जान, राम ने एसा मन अनुमान।
पादुका दीन्हीं करुणा सिन्धु, भरत ने लीन्हीं प्रान समान।।351।।

हुआ प्रस्तावित पूर्ण विचार, प्रश्न था तीरथ जल जो शेष।
विर्सजन इसे कूप में करो, दिया यह ऋषिवर ने आदेश।।352।।

सभा का यह उज्जवल स्तम्भ, रहेगा भरत कूप के नाम।
करे जो श्रद्धा से स्नान, उसे शरणागति देगें राम।।353।।

किया मन्दाकिन में स्नान, अवध तिरहुत दल साजा साज।
हुआ मिथिलापति का प्रस्थान, साथ में गुरवर शिष्य समाज।।354।।

भरत श्री रघुवर सानुज भेंट, सभी माताओं के पद–टेक।
साज दल अवध पुरी को चले, सैन्य गज वाहन चले अनेक।।355।।

अवध में आकर शुभ दिन देख, पादुका सिंहासन पधराईं।
भरत ने ले, गुरुवर आदेश, भूमिगत आसन गाँव जमाईं।।356।।

भरत का पढ़े सुने जो लेख, राम प्रति जगे प्रेम विश्वास।
सतायें उन्हें न कलि के दोष, कहत 'करुणेश' रहें प्रभु पास।।357।।

अयोध्या काण्ड समाप्त

राम–लक्ष्मण और शबरी

श्रीगणेशाय नमः

श्रीराम कथा

अरण्य काण्ड

१. जयन्त की कुटिलता

सीता चरन चोंच हति भागा। मूढ़ मंदमति कारन कागा।।

(श्रीरामचरितमानस से)

छन्द

मन्द गति मन्दाकिन का नीर, चल रही शीतल सुरभि समीर।
मत्स जल जन्तु मगर हैं भूरि, ललित द्रुम लता लहकते तीर।।1।।

रँगीले रंग–बिरंगे फूल, फूल में भ्रँमरा बलियाँ झूल।
हो रहा भन भन भ्रमर प्रसार, महकते सुन्दर फूल दुकूल।।2।।

विन्ध्य श्रेणी तट दोनों ओर, कूकती कोयल कीर चकोर।
डोलते डाल डाल कपि वृंद, बोलते पंछी नाचत मोर।।3।।

किया द्वादस वर्षों विश्राम, विराजे कामद गिरि श्रीराम।
सिया के संग संग दोउ वीर, किया प्रस्थान लिया शिव नाम।।4।।

पहुँच स्फटिक शिला रघुनाथ, धनुर्धर बीर लखन भी साथ।
श्रान्त सीता को देखा राम, छलकता शिला समीपी पाथ।।5।।

शिला पर जा बैठे रघुनाथ, चाँपती चरन सिया धर हाथ।
अवध की स्मृतियों में लीन, कथा कह समुझाते श्री नाथ।।6।।

लखन थे वीरासन में खड़े, कसे तूणीर लिये कोदन्ड।
लक्ष्य दृढ़ प्रहरी का निर्भीक, शौर्य साहस में परम प्रचंड।।7।।

उसी क्षण आभूषण प्रत्यंग, सजाये पुष्पों के श्रीरंग।
किया सब फूलों का श्रृंगार, भुलाने सिय को अवध प्रसंग।।8।।

जगत्जननी शोभा की खान, हुईं दैदीप्य स्वरूप महान।
दूर से देखा दृश्य जयन्त, सका न परब्रह्म पहचान।।9।।

देव माया का किया प्रसार, लिया रूप कौवे का धार।
झपट सीता चरनों में चोंच, नखों से निर्दय किया प्रहार।।10।।
भूलने मिथिला–अवध प्रसंग, मग्न मन करते थे विश्राम।
छलकते हुये रक्त कण दिखे, उठे तत्क्षण श्री लीलाधाम।11।।

सींक सर राम किया संधान, बना कौवे को भीषण बान।
भगा सत्वर गति नीच जयन्त, बिकल संकट में हुआ महान।।12।।

सन्त नारद ने शिक्षा दीन, हुआ जब सब सहाय से हीन।
राम के चरनों में आ गिरा, प्रभू ने अभय बान से कीन।।13।।

प्रभू का आद्याहारी बान, सदा होता अमोघ संधान।
काक का एक नेत्र कर हरण, बचाये शरणागत के प्रान।।14।।

२. सीता–अनुसूया मिलन

बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिब्रत धर्म छाड़ि छल गहई।।

(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

दन्डकनिवासी उदासी मुनि ब्रहम्लीन,
देखत बनबासी वेष चर्चा चलाते हैं।
बैखानस वैष्णव सिद्ध साधक संन्यासी सब,
राम के समीप आय सेवा दर्शाते हैं।।
योगी संन्यासी संत ब्रह्म ज्ञान परम हंस,
योगी यती राम भक्त तापस कहे जाते हैं।
भाषत 'करुणेश' सभी अति प्रसन्न चित्त,
करते आतिथ्य प्रेम फूल–फल खिलाते हैं।।15।।

तर्ज राधेश्याम

दन्डक वन बीथिन में विचरत, चलते पंथानी अग्र पंथ।
श्रापित वन होता श्राप मुक्त, मुनि मंडल मन लहरे वसन्त।।16।।

उत्पन्न ब्रह्म नेत्रों से मुनि, तपनिष्ठा विद अत्री स्वामी।
इनकी अर्धांगिनी अनुसूइया, सर्वस्व समर्पित अनुगामी।।17।।

लखपड़ा दूर से विन्ध्य शिखर, गगनाचल छूती श्रेणी को।
मध्यस्थल में आश्रम पावन, अघ ओघ नशावन वेणी जो।।18।।

आश्रम से ही प्रश्रवित नीर, पयश्वनी कहैं या मन्दाकिन।
वन जन्य जन्तुओं का विहार, पापघ्नी ज्यों गंगा साकिन।।19।।

एक बार भीषण अकाल, जल दुर्लभ था पाना कन कन।
ऋषि त्याग चले उजड़े आश्रम, तर्पण हो कैसे जल–जीवन।।20।।

अनुसूइया आश्रम गये संत, करबद्ध कहा जल को तरसे।
माँ त्राहि त्राहि पानी के बिन, तू दया करे तो जल वर्षे।।21।।

ढुलका ममत्व माँ स्तन से, पयधार चली पैश्वनी वही।
नभ मंडल से जयकार हुई, माँ के सतीत्व की साख रही।।22।।

देखा आते मुनि वेष राम, सब दौड़ पड़े स्नेह पगे।
दोनों वनवासी मुनिवर के, चरनों में धर के शीश लगे।।23।।

सबको आसन दे पधराया, वाँणी से वन्दन अभिनन्दन।
नैवेद्य समर्पण कन्द मूल, अर्चन कर फिर चावल चन्दन।।24।।

हे लीला धारी ललित रूप, भगवन भक्तों के भय हारी।
लीलायें ही भव की नैया, गा गा कर तरते नर नारी।।25।।

हम कुमुद कुंज तुम चारु चन्द, हे पाप हरण कदली भयन्द।
लीलायें गाते वेद–वृन्द, लीला पराग के हम मिलिन्द।।26।।

कुटिया में जाकर वैदेही, अनुसूइया माँ के चरन परीं।
पुलकायमान स्थिलिथ शरीर, दृग धाराओं की धार झरी।।27।।

आशिर्दे माँ बोलीं, बेटी, तू धन्य पतिब्रत दर्शाया।
वनवासी पति का साथ दिया, तू ने कौशल सुख ठुकराया।।28।।

नारी सुहाग की पूरी बृति, पति सेवा ही नारी की गति।
पति सेवा पावन साँवन सा, पति चरनौं में नारी की रति।।29।।

पति त्याग सर्व सुख निकल पड़े, तूँ ने भी त्यागा राज भवन।
छाया बन के वन कष्ट सहे, यह पतिब्रता का शुभ लक्षण।।30।।

आशिर देती हूँ मुक्त कंठ, तू जनक लाड़िली धन्य धन्य।
युग–युग सौभाग्यवती भव तूँ, पति प्रेम पगे सास्वत अनन्य।।31।।

सुन पतिव्रता के त्रय लक्षण, उत्तम मध्यम लघु समझाये।
कुछ आभूषण उपहार दिये, धर शीश सिया ने अपनाये।।32।।

मुनि सहित सती अनुसूइया ने, मन अन्तर आशीर्वाद दिया।
तीनों वनवासी वन्दन कर, आश्रम से उठ प्रस्थान किया।।33।।

गीत

विहरत श्री रघुवीर तीर मन्दाकिन के,
साथ में लछमन वीर–तीर मन्दाकिन के।
कूकती कोयल पीकै मोर। मधुर स्वर चातक भ्रंग चकोर।।
तीर मनदाकिन के।

झर रही सरिता झर झर नीर। चल रही शीतल सुरभि समीर।।
तीर मन्दाकिन के।

तपस्वी कुटिया मिलीं तमाम। भजन करते हैं राजाराम।
तीर मन्दाकिन के।।34।।

३. बिराध बध

मिला असुर बिराध मग जाता। आवतहीं रघुवीर निपाता।।
(श्रीरामचरितमानस से)

छन्द

मार्ग में आश्रम मिले तमाम, माल ले भजते सीताराम।
मनायें वनवासिन को दौड़, आइये क्षणिक कुटी में राम।।35।।

भक्त–भय हरण साधना साध, यहाँ आता है नीच बिराध।
हिलाये भक्ति भाव को घोर, बताये क्या–क्या कष्ट निहार।।36।।

कवित्त

सुनते ही दौड़ा विराध दैत्य शूल लिये,
गर्जन तड़क विधुत्सी पर्वत थर्रा गये।
सरिता गति मन्द हुई, पादप सी डोली भू,
धीरज अधीर हुआ पक्षी फर्रा गये।
हेरत वनवासिन की ओर घोर–घोर दृष्टि,
क्यों रे तुम मेरी वन सीमा में आ गये।
देख्यो भयंकर विशाल रूप सीता ने,
सूखे कपोल गोल अरुणि मुर्झा गये।।37।।

सीता को खींच नीच हँसन लगा अट्हास,
अब तो इस सुन्दरी को बीहड़ ले जाऊँगा।
दौड़े यदि रक्षा को मारूँ त्रिशूल हूल,
पी के रक्त दोनों की चटनी बनाऊँगा।
नोच नोच अन्तावली माला सजाऊँ मैं,
रक्त चूस दोनों का प्यास भी बुझाऊँगा।
करुणा विलाप करत सीता पुकारे नाथ,
प्रभू कहैं धैर्य धरो नीच को नसाऊँगा।।38।।

राम ओर दौड़ा दैत्य बकता दुर्वाक्य नीच,
शिलाखण्ड पादप प्रहार किये जोर से।
गर्जना का घोर शोर छाया नाँद भूतल में,
धरती नीलाम्बर तक ध्वनित हुआ जोर से।
फेंका त्रिशूल धूल धूसर रवि अंधकार,
दन्तन की पंति चमक जिव्हया चचोर से।
भनत 'करुणेश' कठिन लीन्हों कोदण्ड प्रभु,
दैत्य वधन कीन्हों तब चीखो अति जोर से।।39।।

हर्षित महारानी सिया आईं समीप राम,
दुर्दान्त कवंध मार मग में सिधारे हैं।
नभ से प्रसून वर्ष हर्षित भए देव वृन्द,
श्रापित वन भूमि दण्ड पग पग उधारे हैं।
सन्तों के रक्षक प्रभु दुष्टों को तक्षक से,
पालक श्रुति धेनु संत दशरथ दुलारे हैं।
एसे कृपाधाम दयासागर नयनागर राम,
आँगे सरभंग ऋषि आश्रम सिधारे हैं।।40।।

तर्ज राधेश्याम

आश्रम से कुछ दूर पड़ी थी, शुष्क मनुज हड्डी की ढ़ेरी।
नाथ दुर्दशा यह सन्तों की, कीन्ही दैत्यों ने है घनेरी।।41।।

भक्तों की दुर्दशा देखकर, राघव के आँसू भर आये,
निर्भय रहो करूँगा रक्षण, प्रण करता हूँ भुजा उठाये।।42।।

सूर्य देव साक्षी वचनों के, पृथ्वी निशिचर हीन करूँगा।
ठहर नहीं सकते अब जग में, जब अपना कोदण्ड धरूँगा।।43।।

४. सुतीक्षण जी का प्रेम

बहुत दिवस गुरु दरसन पाएँ। भए मोहि एहिं आश्रम आएँ।।
अब प्रभु संग जाउँ गुर पाहीं। तुम्ह कहँ नाथ निहोरा नाहीं।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

आवत वनवासी सुतीक्षण की दृष्टि परी,
मोदित मन नर्तन करि आसनी बिछाये।
बाढ़ी पुलकावली हर्षित हैं रोम रोम,
प्रीत रीत विह्वल दृग आँसू भर आये।
गुरुवर अगस्त्य ध्यान पूरन मैं बचन आज,
दर्शन कराऊँ जाय उचित समय पाये।
बोले कर जोर मुनि चलिये प्रभु मेरे साथ,
संग में सुतीक्षण भी आश्रम तक आये।।44।।

देरवत मुनि कुम्भज शिष्य ल्यायो श्रीराम साथ,
धन्य प्रिय सुतीक्ष कह मुनिवर सिहाने।
तेरी भाव–भक्ति की कब तक प्रशंसा करूँ,
देखत वनवासी राम नेत्र मम जुड़ाने।
सोइ सखा सोइ मित्र सत्य हितकारी सोइ,
दर्शन कराये प्रभु सोइ सगो माने।
सुतीक्षण पर कृपा कीन्हीं रघुनन्दन ने,
मुनिवर अगस्त्य शिष्य यश को बखाने।।45।।

सवैया

राम कथा बिन वाणी वृथा, हंस बना क्यों गुमान करै।
भव स्वार्थ सनी तूँ करे करनी, जग जाल अनेक में भूले फिरै।
करनी कर नेक बने मरनी, जग ज्वाल कराल जरै क्यों मरै।
कृपालु कृपा करिहैं श्रीराम, जब प्यासे पपीहा सी टेर धरै।।46।।

रघुनन्दन कष्ट निकंदन हे, आय अगस्त्य के ठाँव पधारो।
निर्धन के धनी जग के जीवन, भाग्य सुभाग्य बनो है हमारो।।
पद पंकज पर्स करूँ नत हों, प्रभु दीनदयाल है नाम तिहारो।
बसो मेरे मन सिय बंधु समेत, भव घोर घटा में भयो उजियारो।।47।।

विनती कर मुनिवर कहन लगे, भव–भोर भये है दिवाकर पाये।
छाई छटा भ्रम जाल मिटा, कीन्ही कृपा जो अगस्त्य लौ आये।
सुन राम कृपालु दयालु प्रभु, हेर कै नाथ मधुर मुसुकाये।
लख निश्छल भाव प्रभू रघुनाथ, मुनीश अगस्त्य को कंठ लगाये।।48।।

कवित्त

मुनिवर अगस्त्य दिये सायक अमोघ अस्त्र,
मोदित मन भेंट रूप दीन्हे श्रीराम को।
लीजै रघुनायक ये दैत्य दलन लायक हैं,
विजय के प्रदायक है भीषण संग्राम को।
मन्त्रोपचारित कर अक्षय तूणीर दिया,
वन्दन कर विदा कीन्ह पंचवटी धाम को।
मागि के बिदा क्लेश हारी धनुर्धारी चले,
देखत वन वीहण की शोभा ललाम को।।49।।

तीनों वनवासी उदासी चले पंचवटी,
कुम्भज के आश्रम से निकले मुसुकाते हैं।
कन्धे कोदन्ड पृष्ठ अक्षय तूणीर कसे,
शोभनीय दरस देख देख गीत गाते हैं।
जनक की दुलारी सुकुमारी की शोभा देख,
भील बाल वृन्द सभी शोभा बतियाते हैं।
ऐसे वनबीहड़ बीच कंटक ककरीला पंथ,
बिना पादत्राण के कैसे चल पाते हैं।।50।।

एक कहैं कितनी सलोनी मृग छौनी सी,
चन्द्रमुखी कुंजन पद डोलत मुनिवेष में।
दामिन सी दमकत द्युति चमके चन्द्र मंडल सी,
उपमा मनुहार नहीं ब्रह्म श्रृष्टि देश में।
देखत ही इनकी गति धाता की भूली मति,
लेश नहीं दया इन्हें डाल के क्लेश में।
देख नर नारी अश्रुमोचत दृग साबन से,
माता को दोषी कोई कहते नरेश में।।51।।

५. पंचवटी निवास

चले राम मुनि आयसु पाई। तुरतहिं पंचवटी निअराई।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

गोदावरि तीर नीर निरखत हैं तीनों यती,
उज्ज्वल जल राशि मध्य लहरों का नर्तन।
शोभनीय कानन में बिहरत पंचानन मृग,
बहिण कहीं हरित गिरि श्रेणियों का दर्शन।
अमवाँ की पुंजन वन पुष्पों के कुंजन बीच,
कोकिल कल गीत कूक केकी की छिन छिन।
पंचवट समीप रची लखन लाल पर्णकुटी,
आए कृपा सिन्धु वास करने को कुछ दिन।।52।।

राजत श्रीराम ब्रह्म सीता आदिशक्ति साथ,
धीर वीर लखन तीर तर्कस ले हाथ में।
सरिता के तीर नीर निर्मल समीर बहे,
उठतीं हिलोरों की छलकें पय पाथ में।
बैठे कुशासन में आसन लगाये राम,
कहते वेदान्त कथा सीता के साथ में।
भनत 'करुणेश' प्रभापुंजे बिखेंरे द्युति,
पंचवटी पावन पुनीत युगल घाट में।।53।।

आस–पास कुटिया के सीता लगाये पौध,
गोदावरी नीर सींच नित प्रति नहलातीं थीं।
तुलसी दल सींच कहीं ललित बेल बेली को,
खोद आल व्याल चक्र थाला बनातीं थीं।
लखन लाल खोद खोद लाते थे कन्द मूल,
सीता नैवेद्य प्रथम राम को लगातीं थीं।
सुर नर हितकारी क्लेश हारी साथ बन्धु सिया,
पंचवटी सुषमा को मोहक बनातीं थीं।।54।।

शूर्पणखा मोहित हुई देखत श्रीराम रूप,
स्थिलित शरीर नीर अँखियन से छलके।
कैसे अंक भरि के मैं हृदय से लगाऊँ राम,
सोचत है खड़ी नीर ढुलके हिय हुलके।
कैसे असम्भाव्य बात सम्भव बनाऊँ मैं,
भूली देह भान ज्ञान हृदय पटल दल के।
बार बार देख रूप अंग में अनंग व्याप्त,
तंग काम पीड़ा बस, लचक रही ललके।।55।।

सोचती मुझ कृत्या पर रीझेंगे राम कहाँ,
माया असुर आश्रय से बनूँ रूप रावरी।
कुन्चित कच तन्वी तन अंग अंग रूप राशि,
दामिन द्युति दन्त पन्ति यौवना सुभावरी।

झनकत पगपायल मन घायल है कामवस,
नागिन सी ताक रही पास फूंक ठाँवरी।
बोली लीलाधर से कुँवारी सुकुमारी मैं,
करिये स्वीकार भाती मूरत ये साँवरी।।56।।

सर्वदेय राघव मणि भक्तन को कल्प वृक्ष,
मुक्ति त्याग माँग रही कृत्या है काँच को।
मैं हूँ कुमारी आज लाज त्याग बात करूँ,
किन्तु बद मिथ्या छले रघुवर रघुराज को।
सीता की ओर हेर राम कहें भामिन सुनु,
मैं हूँ एक पत्नीव्रत भटकूँ बिन ताज के।
जाओ लखन बन्धु पास पूर्ण करै तेरी आस,
वे ही कुँवर तेरे संग निभा सकें साज को।।57।।

गौर्य वर्ण निरखत निहारत है हाँथ जोड़,
बन्धु से निराश हुई आपै अपनाइये।
मेरे अनुहार प्यार मन के मनुहार तुम्हीं,
हृदय में समानी छवि हृदय से लगाइये।
चितवन चकोरी सी चाह आह भरती है,
स्वाँति बिन्दु बनो लखन दिल न दुखाइये।
व्यथित मन विनय करूँ त्यागने पै नाथ मरूँ,
मरणासन्न रोगी को सुधारस पिलाइये।।58।।

छन्द

लखन ने विनय दई ठुकराय, पहुँची पुनः राम के पास।
राम ने कही वही फिर बात, लेती क्रोध भरी निस्वास।।59।।

राम का पाय लखन संकेत, किया कृत्या पर हल्का वार।
रुदिन कर भागी तब तत्काल, बहाती नाक से रक्ताधार।।60।।

६. खरदूषण वध

नाक कान बिनु भइ बिकरारा। जनु स्रब सैल गेरु कै धारा।
खर दूषन पहिं गइ बिलपाता। धिग धिग तब पौरुष बल भ्राता।।
(श्रीरामचरित मानस से)

छन्द

वही लोहित की लाली धार, धार से रंजित दुष्टानार।
निकटतम खर–दूषण के पास, कृन्दा क्रन्दन करे पुकार।।61।।

उसासें श्वासें भरे समीर, गुहा नेत्रों से छलके नीर।
बधूटी नागिन सी फन्नाय, क्रोध ज्वाला से जरे शरीर।।62।।

फुलाये सीना बैठे तान, व्यर्थ में विश्व विजेता बने।
देख लो नाक कान कट गये, बस्त्र भी रक्त रंजिता सजे।।63।।

सुनाया पंचवटी का हाल, हाल कहने से हुई बिहाल।
साथ में सुन्दर ललना लिये, सुना है नृप दशरथ के लाल।।64।।

कथा सुनकर दारुण गम्भीर, क्रोध से तड़प उठे दोउ वीर।
देखते हम त्रिभुवन में कौन, हुआ है हमसे बढ़के वीर।।65।।

किया दुस्साहस इतना कौन, बताती नहीं खड़ी क्यों मौन।
काट दोनों के सिर लूँ अभी, बहादुर हो अपने मैं जौन।।66।।

फड़कते लड़ने को भुजदण्ड, शत्रु दलने को शौर्य प्रचण्ड।
बनूँगा प्रलयंकारी ज्वाल, उठाऊँ जब अपना कोदण्ड।।67।।

बिरूपी किया शत्रु वे कहाँ, चले तूँ हमें दिखाये वहाँ।
बिछा देंगे लाशो पर लाश, मिटा दें विप्लव कर सब जहाँ।।68।।

क्रोध से भीषण किया प्रचार, हुये चौदह सहस्र तैयार।
चलो तब तक न लो विश्राम, न जब तक हो दुश्मन संहार।।69।।

सैन्य से आगे अशुभा चली, बताती पंचवटी की गली।
सलभ ज्यों दौड़े दीपक ओर, तूलि ज्यों पावक से मिल जली।70।।

दूर से रूप अलौकिक देख, हुआ दूषण को प्रेम अनूप।
वीर वर नहीं प्रहारो अस्त्र, कहे खर ये हैं मन हर भूप।।71।।

कहें सब जो थी सेना साथ, दया से द्रवित हुये क्यों नाथ।
देखते ही हो गये अधीर, त्याग कोदन्ड गिराया हाँथ।।72।।

मानता दोउ अपराधी घोर, तदपि वध लायक नहीं किशोर।
विश्व में इनसा रूप–अनूप, देखते ही मन दहला मोर।।73।।

हमारा इतना ही आदेश,रहेगा पूर्ण यथावत् प्यार।
रहें ये पंचवटी में अभय, दन्ड में दे दें अपनी नार।।74।।

कहा प्रतिहारी जा सन्देश, हँसे कौशल पति राम नेरश।
कहो तुम हम मृगया को फिरैं, खोजते तुम जैसे आखेट।।75।।

जानकी लेकर जाओ लखन, कहे ये बचन राम रघुनाथ।
जाना पंचवटी से दूर, लड़ूँ में खर–दूषण के साथ।।

हुआ रण भीषण–दारुण घोर, अकेले ही रघुनाथ किशोर।
हुआ सब दैत्यों का संहार, हाय नकटी की पीड़ा घोर।।76।।

७. शूर्पणखा रावण संवाद

खर दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहिं को मारइ बिनु भगवंता।।
सुर रंजन भंजन महि मारा। जौं भगवंत लीन्ह अवतारा।।
तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

हाय नासिका कर्ण विहीन मैं, भ्राता खर–दूषण चले गये।
चौदह सहस्र अंगरक्षक भी, रणस्थली में दले गये।।77।।

क्या सोचा क्या हुआ विधाता, टूटी आशा अब मैं निराश हूँ।
लेकिन अभी सुरक्षित लंका, जाती अब लंकेश पास हूँ।।78।।

मेरा मधुर सुहाग छीनकर, जिस रावण ने आग लगाई।
उस रावण लंका वैभव की, तपसिन द्वारा करुँ सफाई।।79।।

कर्म कूटती करुणा करती, लंकाधिप की ओर चली।
धिक्कारे गाली प्रचार कर, राक्षस कुल को गली गली।।80।।

सयनागार बन्धु के पहुँची, सुप्त पड़ा ज्यों काला भूधर।
शीश पीटती बन्धु वक्ष पर, चीख मचाती करुणा कर कर।।81।।

जाग जाग अब रे निशंक तूँ, मद्यपान करता सोता है।
होश नहीं दुश्मन छाती पै, आँख खोल लख क्या होता है।।82।।

खर दूषण चौदह सहस्र दल, रण भूमी में मरे विचारे।
तूँ निश्चिन्त यहाँ मद पीता, नाक कान भी कटे हमारे।।83।।

मृग सावक नैनी पिक बैनी, रूप राशि सुन्दरी ललाम।
साथ लिये दशरथ के बेटे, राम लखन बतलाते नाम।।84।।

पंचवटी में बिना प्रयोजन, मेरे नाशा कान विदारे।
हाय सभी आरक्षी योद्धा, दण्डक रणभूमी में मारे।।85।।

उठो बन्धुवर वीर शिरोमणि, परम सुन्दरी को हर लाओ।
धधक रही प्रतिशोध ज्वाल को, भैया मेरी पीर बुझाओ।।86।।

सुना सभी वृतान्त बहिन से, रावण हृदय धुधकी धर की।
म्लानि छा गई मुख मंडल में, बाईं आँख भुजा भी फरकी।।87।।

सोच रहा है खर–दूषण भी, थे मेरे समान बलधारी।
विशम्भर के बिना श्रृष्टि में, कौन सके संग्राम पछारी।।88।।

बुद्धि सुनिश्चित की रावण ने, मैं अब जाकर बैर करुँगा।
उद्धारण कर दैत्य वंश का, बयरु भाव कर भव से तरूँगा।।89।।

भक्ति भाव कुछ नहीं हमारे, स्वयं तामसी है तामस मन।
हर लाऊँ उनकी पत्नी को, पहुँच गया मारीच भवन।।90।।

८ मारीच प्रसंग

दसमुख गयउ जहाँ मारीचा। नाइ माथ स्वारथ रत नीचा।।
(श्रीरामचरित मानस से)

तर्ज राधेश्याम

मायावी मारीच भवन जा, किया पूर्व जाते ही बन्दन।
परम स्वार्थी लंकापति ने, किया छद्म से करुणा क्रन्दन।।91।।

कर्मकूट के अभिनय करता, बोला मेरा अब दो साथ।
समझाया विनम्र वाणी से, मेरी विजय तिहारे हाँथ।।92।।

निज माया से बनो स्वर्ण मृग, तुरतहिं पंचवटी में जाओ।
चित्त सिया का आकर्षण कर, वनवासी को दूर भगाओ।।93।।

छद्म रूप से सन्त बनूँ मैं, भिक्षुक बन सीता ले आऊँ।
अपमानित जो किया बहिन को, खर दूषण का बैर चुकाऊँ ।।94।।

सहम गया मारीच श्रवण कर, राम पराक्रम से घबराया।
बिन फर मारा बाण यादकर, शत योजन तक मुझे हटाया।।95।।

उस योद्धा से छद्म करुँ मैं, तो क्या जीवित बच पाऊँगा।
इसकी कथनी नहीं करुँ तो, इससे भी मारा जाऊँगा।।96।।

निश्चित किया विचार हृदय में, माया मृग का रूप धरुँ।
मरना है दोनों प्रकार से, तो रघुनन्दन हाँथ मरूँ।।97।।
मायावी माया प्रसार से, पंचवटी में बना स्वर्ण मृग।
रोमावलि स्फुरण कर रहा, चारों दिक फेरे चंचल दृग।।98।।

कभी कुलाचैं भरे चौकड़ी, गोदावरी तीर तक जाये।
कभी सिमिट छाया में लेटे, कभी चिटक कर पुच्छ हिलाये।।99।।

हरित सादबलि तृण दल अंकुर, पृष्ठ घिसे वट वृक्ष छांव में।
उधर सिया को उद्बोधन कर, बैठे थे प्रभु कुटी धाम में।।100।।

इधर हिरण दल में विक्रीड़ित, माया मृग हर छद्म दिखाता।
कभी उचकता प्रस्तर ऊपर, पंचवटी में भी आ जाता।।101।।

दौड़ लगाता हुआ दुष्ट मृग, तत्क्षण पंचवटी में आया।
देखा आद्य शक्ति श्री सीता, नर लीला का लोभ दिखाया।।102।।

इतना तो हर कोई समझता, क्या कभी स्वर्ण मृग हो सकता।
लेकिन लोभ वंचना में ही, वह शुभचिन्तन खो सकता।।103।।

होता है अवतरण धरा पर, मानव को ही शिक्षा देने।
सोचें लोभ पतन का कारण, आपत्ती के लोभ खिलौने।।104।।

राम लला की लीला समझो, जीना है तो लोभ–त्याग दो।
लेना है विराग भवनिधि से, तो विराग में पूर्ण भाग दो।।105।।

इतनी ही शिक्षा इस मृग की, हे प्राणी अब सत्वर जागो।
बनो उदात्त हृदय दीनों पर, मायावी मृगया से भागो।।106।।

लोभ न होता माया मृग का, तो सीता अपहरण न होता।
संदेश यही इस प्रभु लीला का, लालच में जीवन क्यों खोता।।107।।

मानव शिक्षण या संरक्षण, हित लीलाधर लीला करते।
लोभ त्यागने से ही हित है, लोभाभूत पाप पग धरते।।108।।

परम शक्ति महारानी सीता, कहतीं सुनिये दीन दयाल।
येन केन विधि वध कर मृग को, नाथ लाइये स्वर्णिम छाल।।109।।

जिसकी माया को ब्रह्मादिक, नारद शारद पार न पायें।
परम हास्य प्रद वे मायापति, माया मृग पर बाण चलायें।।110।।
दीख रहा मृग छुप जाता है, आगे से पीछे आता है।
पंचवटी से दूर–दूर तक, भटक–भटक के भटकाता है।।111।।

पंचवटी से दूर पहुँचकर, तककर तीर राम ने मारा।
हा लक्ष्मण हा लक्ष्मण कहकर, माया मृग मारीच पुकारा।।112।।

९. श्री सीता हरण

लछिमन कर प्रथमहि लै नामा। पाछें सुमिरेसि मन महँ रामा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

पंचवटी तक गुंज उठा स्वर, हा लक्ष्मण की करुण पुकार।
बड़ा विलक्षण दैन्य भाव था, माया मिश्रित दीन प्रचार।।113।।

दहल गई वैदेही सुनकर, क्या प्रिय प्रियतम टेर रहे हैं।
प्यारे लखन दुलारे को क्या, रक्षा के हित हेर रहे हैं।।114।।

बोलीं निहोर कर देवर से, जाइये भ्रातृवर ओर लाल।
भीषण कष्टों से ग्रसित बन्धु, अब उठो जाव मम अग्या पाल।।115।।

किन्चित मुस्कुराते हुये लखन, कहते क्या उन पर विपदा है।
जिनकी भृकुटि भंगिमा से, पल भर में प्रलय हो सकता है।।116।।

वे घोर विपिन में सौंप गये, माता जी तेरी रखवारी।
देखो कितने निश्चर फिरते, तुम रहो अकेली भय भारी।।117।।

आदेश हुआ जो रघुवर का, मैं उसको प्रथम निभाऊँगा।
पंचवटी को सूना कर माँ, नहीं कभी भी जाऊँगा।।118।।

कटु वचन कहे कुछ सीता ने, सुन लखन वीरवर काँप गये।
चक्राव्रत रेखा कुटी चाक, अन्दर रहना कह चले गये।।119।।

देखा रावण ने शून्य कुटी, आया मायावी साधु वेष।
भिक्षुक बन भिक्षा याच रहा, भयभीत तदपि कुटिया प्रदेश।।120।।

ओ ममतामई मधुरा माता, भोजन को भिक्षा दान करो।
मैं हेर रहा हूँ क्षुधित पंथ, हे मातु क्षुधा की पीर हरो।।121।।
कुछ कन्द मूल फल खाद्य लेय, अंचल भरके सीता आईं।
रेखा के अन्दर अंचल भर, माता देने को हर्षाईं।।122।।

वैज्ञानिक रेखाविद रावण, सोचे यदि अन्दर जाऊँगा।
तो अजर अमर होने पर भी, अविलम्ब भस्म हो जाऊँगा।।123।।

बोला देवी तेरी भिक्षा, रेखा से बँधी नहीं लूँगा।
तू बाहर आकर भिक्षा दे, न आई श्राप तुझे दूँगा।124।।

हे यतिवर क्षमा करें मुझको, रेखा के बाहर आती हूँ।
मत श्रापित करना मुझे आप, युग पाणि जोर समझाती हूँ।।125।।

कोई कितना हो यत्नशील, होनी होकर के रहती है।
जब होनहार हो पूर्ण प्रबल, सब उलटी करनी होती है।।126।।

रेखा के बाहर आते ही, अपहरण किया खल ने बलात्।
हे सुन्दरी मैं लंकेश्वर, लंका को चलो अब मेरे साथ।।127।।

वनवासी का मोह त्याग, मैं विश्व विजेता रावण हूँ।
त्रय लोक कांपता है मुझसे, देवाधिप गर्व नशावान हूँ।।128।।

आवाहन से पुष्पक विमान, आया सीता को बैठाया।
दक्षिण दिशि चलने को प्रेरित, करने पर निशिचर हर्षाया।।129।।

१०. जटायु रावण युद्ध

काटेसि पंख परा खग धरनी। सुमिरि राम करि अद्भुत करनी।।
(श्रीरामचरित मानस से)

तर्ज राधेश्याम

करुणा निधान हा रघुनन्दन, प्राणनाथ हो कहाँ हमारे।
हा अबला सीता के स्वामी, हा मेरे प्राणों के प्यारे।।130।।

लिये जा रहा दुष्ट निकन्दन, ज्यों मलेच्छ बस गऊ विचारी।
टेर सुनो प्रभु देर करो मत, दौड़ो रक्षा करो हमारी।।131।।

सुने जटायू ने आरत स्वर, सीता की पुकार पहचानी।
लाज बचाने को अबला की, शौर्य शक्ति जग उठी पुरानी।।132।।

वृद्ध हुआ तो भी मैं जाकर, इतना तो पुरुषार्थ करुँगा।
हृदय विदारूँगा उस सठ का, मारुँगा या स्वयं मरुँगा।।133।।

उठा वायु गति पंख फुलाये, रे रे दुष्ट कहा जाता है।
ठहर ठहर रे अधम अभी ये, वृद्ध जटायू आता है।।134।।

पहुँच गया पुष्पक के ऊपर, चोंच पकड़ सीता ले आया।
बेटी भय मानो न किंचित, मैं इस शठ का करुँ सफाया।।135।।

पवि प्रहार सी चोंच मार के, शस्त्र धनुष प्रत्यंचा तोड़े।
क्षत्र मुकुट सब नष्ट भ्रष्ट कर, दौड़–दौड़ दस मस्तक फोड़े।।136।।

वज्र पखेरु पंख फुलाये, करता रघुनन्दन का प्रचार।
क्रोधित गिद्धराज थे भीषण, घायल किया दुष्ट को मार।।137।।

कर विदीर्ण सारा वक्षस्थल, फाड़े वस्त्र पर्ण ज्यों शीर्ण।
लंकाधिप कंपित कदली वत, सासाहत हो गया विदीर्ण।।138।।

कामी कायर क्रूर अधम सठ, गाली देकर के धिक्कारे।
बज्र सरीखे पंख मारके, चोंचों काट सकल तन फारे।।139।।

बार बार सीता सम्बोधन, बेटी निर्भय रहो खड़ी।
खल को करके खंड खंड मैं, पीड़ाये दूँ बड़ी–बड़ी।।140।।

आयुध विहीन लंकेश हुआ, धनु प्रत्यंच भी खंड खंड।
भुज दण्ड मीस के दंत पीस, करता फिर साहस प्रचंड।।141।।

शिव दत्त उठाया चन्द्र हास, ज्यों चमके चन्दा का प्रकाश।
काटे जटायु के युगल पंख, कर घोर गर्जना अट्हास।।142।।

११. श्रीरामजी का विलाप

आश्रम देखि जानकी हीना। भए बिकल जस प्राकृत दीना।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

हे बन्धु किया क्या आकर तुम, सूनी कर आये पंचवटी।
न जाने क्यों मन अकुलाये, अनहोनी घटना कहाँ घटी।।143।।

आकर प्रभु गोदावरी देखी, सूनी–सूनी थी पंचवटी।
उजड़ा सा प्रांगण व आंगन, वेदना हृदय अटपटी उठी।।144।।

लीलाधर लीलायें अपार, कृन्दन कर करुण पुकार उठे।
हा प्राण बल्लभे हा सीते, दृग अश्रु बहे चितकार उठे।।145।।

होतीं अतीत की स्मृतियाँ, शोक व्यथाओं का चिन्तन।
श्रीराम दिखाते नर लीला, गत धैर्य हुये सीता के बिन।।146।।

देखे सीता कर निर्मित, तुलसी के थाले आलबाल।
करुणानिधि करुणा कर रोये, ओ सीते मैं तुम बिन बिहाल।।147।।

बाबले सरीखे उठें गिरें, मृगियों को हेर पुकार रहे।
देखा सीता मृगनयनी को, पिक वयनी कहाँ पुकार रहे।।148।।

कवित्त

करते नर लीला राम कहते प्रिय लखन लाल,
मेरी कुटीर हाय मैथिली विहीन है।
पुष्पित प्रसूनों में नीके न भ्रमर गुन्ज,
लुन्ज हुये करुणाकर करुणा में लीन है।।
सीता सुकुमारी को जनक की दुलारी को,
हाय भ्रात छोड़ा तुम दारुण दुख दीन है।
भाषत 'करुणेश', क्लेश प्राण के पखेरू को,
सीता जल सिन्धु बीच मेरो मन मीन है।।149।।
देखा आल–बालन को सीता सँवारे जौन,
जिन्हें सिंन्च पौधन को हाथ से उठाती थी।
रोये विगत स्मृति में राघव नर लीला कर,
करुणा को श्रवण किये करुणा शर्माती थी।।
आई मृग–पत्नी मयूर भ्रमर रोदन सुन,
घेर घेर राघव हेर अश्रुषा छलकाती थी।
दक्षिण दिशि दौड़ पड़े मानो संकेत करै,
दुखिया रघुनन्दन को सूचना बताती थी।।150।।

तर्ज राधेश्याम

संकुचित बन्धु श्री लखनलाल, श्री रघुनन्दन को समुझाया।
फिर भी राघव लीलाधर ने, विक्षिप्त भाव सा दर्शाया।।151।।

दोहा

बन्धु धैर्य धारण करो, रहो दास के पास।
करुँ खोज चौदह भुवन, क्या पृथ्वी आकाश।।152।।

कवित्त

परम–प्रतापी राम करिकै सौगन्ध कहौं,
पैग–पैग पृथ्वी को खोज के निहारिहौं।

ब्रह्मलोक–देवलोक नागलोक मंथन कर,
सीता अन्वेषण में यमपुर संहारिहौं।।
हारौं न संगर में बज्रघर पुरन्दर से,
कहत लखनलाल शेष साहस सम्हारिहौं।
प्रभु कौ हत आस देख सांची सौगन्ध करौं,
अपने ही हाँथन मैं तन को बिदारिहौं।।153।।
सीता अपहर्ता के बाँधौं भुज दण्ड चंड,
चन्द्रका समेत चाँद चाँदनी मिटारिहौं।
मूलक इव मेरु फोर दिक्गज के दन्ततोर,
शेष फन मरोर घोर काल को वछारिहौं।
लेकिन हताश देख सांची सौगन्ध करौं,
अपने ही हाँथन मैं तन को विदारिहौं।।154।।

तर्ज राधेश्याम

अब लगे पूछने वृक्षों से, हा लता बेलियो बतलाओ,
मेरी प्रिय प्राण दुलारी को, किस ओर गई कुछ समुझाओ।।155।।

सीते सीते कह पथिक राम, हा हुआ विधाता आज बाम।
ओ सीते तुम बिन तेरा पति, कुररी सा किल्पे देख राम।।156।।

तूँ कनक भवन का सुख साधन, त्यागा था तृणवत मेरे हित।
छाया सी वन वन में भटकी, अब कहाँ खो गया वह तेरा चित।।157।।

निर्मित करती नित तृण सैया, पत्रों से झरती थी बयार।
श्रमगत करती पदचाप मुझे, क्यों निठुर हुई खो गया प्यार।।158।।

करुणा सुन वन के जीव–जन्तु, धरती रोई अम्बर रोया।
इस पीड़ा में होकर अधीर, पाषाणों ने धीरज खोया।।159।।

ओ पिकवयनी ओ मृग नयनी, ओ गजगामिन ओ प्रिय भामिन।
मैं व्यथित वेदना में विहाल, तू कहाँ छुपी जा मन स्वामिनि।।160।।

इस तरह बिलखते हुये राम, पथ चलते वीर गिद्ध देखा।
ध्यानावस्थित प्रभु चरनों में, स्मरण कर रहा पद–देखा।।161।।

छत बिछत पड़ा था अवनी पर, पर्वताकार पंखे–बिहीन,
रण भूमि रक्त से रंजित थी, तड़पे ज्यों जल के बिना मीन।।162।।

१२. जटायू कथा

आगें परा गीधपति देखा। सुमिरत राम चरन जिन्ह रेखा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

दो पंख पड़े थे खंड–खंड, दौड़े रघुनन्दन हाय तात।
किसने छत–विछत किया बोलो, कैसे विदीर्ण हो गया गात।।163।।

सम्पूर्ण जटायू कथा कहीं, श्री सीता का अपहरण किया।
दौड़ा था रक्षा के निमित्त, खल ने पंखों का हनन किया।।164।।

अन्तिम दर्शन के लिए प्रभू, स्वांसों में रट थी राम–राम।
आशान्वित पलक बिछाये था, पंथ हेर अन्तिम लो प्रणाम।।165।।

प्रभु धूल जटाओं से झारी, गोदी में लेकर करुणाकर।
धर वरद हस्त गत पीड़ा की, रो पड़े दृगों में आसूँ भर।।166।।

गोदावरि तट क्रिया कान्ड किया, हा तात तात कह फिर रोये।
अपने हाथों कर पिण्डदान, निज धाम दिया आँसू धोये।।167।।

१२ (क) गृद्ध यॊनि की अन्तरकथा

तर्ज राधेश्याम

दो राज पुत्र थे कैकय के, मृगया के हित दंडक आये।
रवि अस्त हुआ मृगया विहीन, भुक्छा से व्याकुल घबराये।।168।।

तृषित भुभुक्षा हुये कुँवर, चल पड़े म्लानि मुख लौट भवन,
आये मतंग मुनि आश्रम में, आश्रम में छाया सूनापन।।169।।

आरत चित चेत नहीं रहता, आरत विवेक खो देता मन।
दोनों थे अधिक क्षुधा पीड़ित, पीड़ा से पीड़ित होता तन।।170।।

देखा मतंग के आश्रम में, दो नील कबूतर डोल रहे।

दोनों मुनिवर के प्रिय पंछी, गुट–गुट की वाणी बोल रहे।।171।।

दोनों का वध करके कुमार, भक्षण कर डाला पंख छील।
सन्ध्या को देखा श्री मतंग, दे दिया श्राप अभिमंत्र कील।।172।।

जिसने खाया अन पका माँस, ओ फल पाएगा पछताये।
दुष्कर्म किया तो ग्रद्ध बनो, मम श्राप न ये निष्फल जाये।।173।।

यह श्राप बताया नारद ने, चिन्ता वस राजकुमार हुये।
दोनों मिल पश्चाताप करैं, किस तरह श्राप का पाप मुये।।174।।

दोनों पितु आज्ञा से प्रणीत, हिम श्रेणी में हो तपोलीन।
हे क्षमो क्षमो श्री नारायण, हमने जो गर्हित कर्म कीन।।175।।

अपलक नेत्रन हेर–हेर, ध्यानावस्थित युग बीत गये।
रटते–रटते श्री नारायण, स्वांसे के सरगम रीत गये।।176।।

क्षीर सिन्धु शेषासन तज, आये युग–भक्तों के समीप।
गम्भीर गिरा वर मांग–मांग, आया मैं देने सुत महीप।।177।।

दोनों हर्षित मन नतमस्तक, मांगे तो भगवान क्या मांगे।
मुनि श्राप मुक्त हो सकें नहीं, नत आप विप्र मुनि के आगे।।178।।

पंछी निकृष्ट होने पर भी, प्रभु चरनों में अनुरक्ती हो।
परमार्थ करें प्रभु ध्यान धरें, हों पंख गरुड़ गति शक्ती हो।।179।।

भीषण भय से भी नहीं डरें, निश्छल स्वभाव से भ्रमण करे।
रक्षण करने को धर्म–कर्म, दम्भी दुष्टों का मान हरें।।180।।

एवमस्तु कह नारायण, तप थल से अन्तर्ध्यान हुए।
कश्यप–पत्नी श्री विनता से, बपु गृद्ध युगुल उत्पन्न हुये।।181।।

होते उत्पत्ती दोनों की, भूधराकार हो गये बड़े।
करते माँ से करबद्ध विनय, दोनों सावक हो गये खड़े।।182।।

आज्ञा दो माँ भरते उड़ान, हम विश्व भ्रमण को जाते हैं।
दोनों यह नित्य क्रिया करके, माँ चरनन शीश नमाते हैं।।183।।

दन्डक में देखा एक दिवस, रावण उत्पात मचाता था।
ऋषि करुण कृन्दना करते थे, खल दंडित कर हर्षाता था।।184।।

अवतरण प्रभू का हुआ नहीं, दोनों भाई दन्डक आये।
करके प्रचार दसकंधर को, चोंच पकड़ लंका लाये।।185।।

दन्डक वन रक्षा में तत्पर, दोनों पबि पंख फुलाते थे।
एक बार कामद गिरि में, बैठे थे मृदु मुस्क्याते थे।।186।।

हो रहा युद्ध था देवासुर, आहत हो कर दशरथ महीप।
स्यन्दन से गिर के चक्रवर्ति, आ रहे धरा तल के समीप।।187।।

उड़कर जटायू ने पंखों में, धर कौशल पति को ले आये।
झर–झर पंखों से शीत पवन, चैतन्य भूप को कर पाये।।188।।

बोले श्री दशरथ वीर भद्र, हो गया रिणी वर मांग मांग।
तू धन्य–धन्य योद्धा महान, निष्फल न होगा बन्धु त्याग।।189।।

हे राजन मैं हूँ नीच गृद्ध, मांगू भी तो क्या मागूँ।
त्यागी हूँ भक्त ब्रह्मचारी, क्यों रागी वन मैं व्रत त्यागूँ।।190।।

राजन श्रुति सम्मत सुनी कथा, पितरों का तारण तरण पुत्र।
वह करता अन्तिम संस्कार, कर पाप हरण करता पवित्र।।191।।

देने की दया दृष्टि राजन, तो गति करने के हित सुत दो।
सुन कर कमलों से पिंडदान, पाने से मुक्ति यही युत हो।।192।।

पितु वचन किये प्रतिपालन प्रभु, अपने हाथों कर क्रिया कर्म।
हा तात तात हा तात कहा, प्रतिपालन करके पुत्र धर्म।।193।।

जो गिद्धराज का पुण्य गान, आदर श्रद्धा से गायेगा।
वह गिद्धराज सी राम भक्ति, सायुज्य मुक्तिपद पायेगा।।194।।

दुरबासा शापित था कबंध, आते ही राम संहार किया।
निज गति पा गंधर्व प्रभू को, नभ जाते प्रणाम किया।।195।।

१३. परम भक्ता शबरी

ताहि देह गति राम उदारा। सबरी के आश्रम पगु धारा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

उच्च श्रेणियाँ गगनांचल तक, पम्पासर के आस–पास थीं।
अबगुन्ठित पादप बन बेली, हरित छटाओं की सुवाश थी।।196।।

स्थल के सन्निकट सरोबर, आश्रम था मतंग का पावन।
शिष्य तपस्वी तपोनिष्ट सब, तपोभूमि पम्पाथल भावन।।197।।

उस बन में ही भील बालिका, भई प्रकट भिल्लनी कुमारी।
बाल्यावस्था से ही भक्ती, दया दृष्टि जीवों पर भारी।।198।।

गीता में योगेश्वर कहते, जो साधक योग भ्रष्ट होते।
अल्पायु मृत्यु हो जाये तो, वे शुचिघर में जीवन धरते।।199।।

अथवा उनका मन शैशव से, प्रभु चरनों की भक्ती में भाता।
करनी बस नीच प्रसंग हुआ, तब भी श्रीभक्ती अपनाता।।200।।

किन्चित भी साधन नष्ट हुये, तो हुये भक्त प्रहलाद दैत्यघर।
इस प्रकार हरि भक्त भिल्लनी, हुई प्रकट हिंसक भीलों घर।।201।।

पिता नित्य हिंसाये करके, बन्य जन्तु ले आता था।
हिन्साओं को देख भीलनी, दया भाव हिय छलकाता था।।202।।

पाणिग्रहण समय उत्सव के, लिए हिरण महिष खग सावक।
मेरे हित होगी हिंसायें, जीव जन्तु मारेंगे नाहक।।203।।

हाय विधाता तेरी कृति में, छाया कैसा अन्धकार।
मेरे प्रति वन भील बृन्द सब, करें पाप का घोर विचार।।204।।

हे परमेश्वर मुझे बचा ले, अपने चरनों पास बुला ले।
तुम बिन कौन जगत रखवारा, रक्ष–रक्ष दुनियाँ रखवारे।।205।।

चली भीलनी भाग भवन से, अर्ध रात्रि माता–पितु त्याग।
भक्ति ज्योति जागी अन्तर में, रिश्ते भव बन्धन सब त्याग।।206।।

मुनि मतंग आश्रम में आई, निर्जन वन में वास किया।
भगवत्मती भावना भरके, तन कल्मस सब नाश किया।।207।।

देखा लुक–छिप मुनि आश्रम में, समिधा संत रात्रि में लायें।
भण्डारा निर्मिति कर प्रभु को, दिन प्रति भोग सभी अर्पायें।।208।।

सोचा एक समय भक्ता ने, उठकर मैं समिधा लाऊँगी।
सेवा सतत करुँ आश्रम की, परोपकार कर सुख पाऊँगी।।209।।

उठे नित्य प्रति प्रातकाल में, गठ्ठे बाँध लकड़ियाँ लाये।
चुपके से आश्रम में फेंके, स्वयं कन्द–फल मूल चवाए।।210।।

आश्रम से पम्पा तक वीथीं, राम–राम रट रोज बुहारे।
शिष्य बृन्द मतंग आश्रम के, अति आश्चर्यवन्त थे सारे।।211।।

एक दिवस कर खोज लिया सब, ऋषि मतंग आश्रम ले आये।
बोले गुरुवर इस दुष्टा ने, सभी धर्म कृत कार्य नसाये।।212।।

स्वामी अनस्पृश्य यह भिलनी, खड़ी सामने धर्म मिटाकर।
श्रापित करें तपोनिधि इसको, भ्रष्ट किया सब आश्रम आकर।।213।।

त्रयोकाल ज्ञाता मुनिज्ञानी, भक्ता श्री रघुवर पहिचानी।
श्राप नहीं वरदान दिया तब, भक्ता प्रभु चरनों की मानी।।214।।

शिष्य मन्डली रुष्ट हो गई, दिया मंत्र गुरुवर मतंग जब।
रुष्ट हुये भिलनी प्रति साधक, भिलनी चिंता ग्रस्त हुई तब।।215।।

पम्पासर स्नान बनाने, प्रातकाल भिलनी आई।
अशुचि किया क्यों तू ने जल को, मत आया कर रोक लगाई।।216।।

रक्त वर्ण हो गया सरोवर, जब से भिलनी हुई तिरस्कृत।
जल निर्मल बिन शिष्य सभीजन, मुनि मतंग से कहें उपस्थित।।217।।

हे मुनिवर पम्पा अशुद्ध कर, भिलनी के कारण जल दूषित।
अनस्पृस्यता से हम त्रासित, किया आपने इसको पोसित।।218।।

किस प्रकार इस जल से पूजन, भन्डारा व भोग लगायें।
सबकी है करबद्ध प्रार्थना, इस आश्रम से इसे भगाये।।219।।

सुन मुनिवर मतंग मुस्काने, सादर भिलनी पास बुलाया।
शिष्यों के समक्ष भिलनी को, पम्पा में स्नान कराया।।220।।

तत्क्षण निर्मल हुआ सरोवर, भिलनी के प्रभाव को जाना।
शबरी नामकरण मतंग ने, किया राम भक्ता पहिचाना।।221।।

साधना सलिल की मीन रूप, शबरी श्रीराम पुकार रही।
कब कुटिया में दर्शन होंगे, चातक सी चितय निहार रही।।222।।

अन्त्येष्टि जटायू करके प्रभु, पथ पम्पासर की ओर चले।
कुछ देह भान का ज्ञान नही, श्रम सीकर के कण बिन्दु ढ़ले।।223।।

आहत मन होता अतीव जब, तन का ज्ञान नहीं होता।
दुर्दिन आने पर नर जीवन, होता अधीर पल–पल रोता।।224।।

नर लीला करते राघवेन्द्र, पथ चलते आँसू छलकाते।
प्रिय बन्धु दशा पर लखन लाल, साहस पौरुष बल समझाते।।225।।

हे बन्धु धैर्य धारण करिये, ये जीवन धैर्य परीक्षा है।
साहस खोकर चुप बैठ रहे, ये कायरपन की दीक्षा है।।226।।

यदि आप रहे उत्साहवान, अपना पुरुषार्थ दिखा दूँगा।
अन्वेषण कर माँ सीता को, यमपुर से भी ले आऊँगा।।227।।

हे आर्य आपको लख अधीर, हो रही निरंतर मुझे पीर।
कितना कलंक से कुत्सित मैं, दिखलाऊँ कैसे ह्रदय चीर।।228।।

था निर्जन वन श्रम आहत तन, दिन मणि अस्ताचल ओर चले।
हो गया शान्त चंचुक कलरव, रजनी संध्या के प्रहर ढ़ले।।229।।

रीती रीती सी चन्द्र प्रभा, बीती बीती सी ढ़ली रात।
अर्चन थाली ऊषा सजकर, लाई अधरों में भर प्रभात।।230।।

उच्च स्थल में शबरी बैठी, आकुल व्याकुल सी हेर रही।
पलभर आ जाओ कुटिया में, श्रीराम राम रट टेर रही।।231।।

भक्तों के प्रिय राम कहाँ, जो भक्त पुकारें न आये।
जब टेरा पांचाली गयंन्द, शेषासन त्याग चले आये।।232।।

भिलनी पल पल होती अधीर, छलकता अँखियन से है नीर।
आ जाओ हे दशरथ नन्दन, टूटता धीर उठी हिय पीर।।233।।

भगवत विषय परीक्षा का नहिं, इसे प्रतीक्षा ही जानो।
शबरी की प्रतीक्षा पूर्ण हुई, भगवान मिले ऐसा मानो।।234।।

रघुवर प्रिय बन्धु सहित पहुँचे, शबरी अतिशय मन हरषाई।
धन्य भाग शबरी के आज, आनन्द लहर चहुँ दिशि छाई।।235।।

चख–चख के मीठे बेर रखे, प्रमुदित हो रघुवर ने पाए।
भक्तिमती शबरी को प्रभु ने, लक्षण नवधा भक्ति सुनाए।।236।।

सत्संग करे हरि कथा सुने, गुरुवर को मुझ सम ही जाने।
मेरे गुणगान कपट तज गावे, दृढ़ विश्वास मंत्र जप ठाने।।237।।

इंद्रियों को वश में रखकर के, सज्जन की तरह सत्कर्म करे।
अग जग सब मुझमें ओत प्रोत, शिरोमणि संत धारणा धरे।।238।।

संतोष करै जो मिल जाए, नहिं देखे दोष कभी किसके।
व्यवहार सरल सबसे करके, विश्वास करे अतिशय मुझसे।।239।।

इनमें से एक किसी के हो, वह भी मुझको अति प्यारा है।
तुझमें भामिनि है पूर्ण भक्ति, यह सत मन्तव्य हमारा है।।240।।

जानो यदि सुधि सीता की तुम, मुझको जल्दी ही बतलाओ।
शबरी कहती प्रभु सब जानत, किष्किंधा पंपापुर जाओ।।241।।

वनवास चरित श्रीराम चन्द्र के, जो नर नारी गाएंगे।
सुख सम्पत्ति सब जग में पाके, भव से भी तर जाएंगे।।242।।

अरण्यकाण्ड समाप्त

श्रीगणेशाय नमः

श्रीराम कथा

किष्किन्धा काण्ड

१. ऋष्यमूक प्रस्थान

आगे चले बहुरि रघुराया। रिष्यमूक पर्वत निअराया।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

श्रीराम लखन पम्पासर से, चलते अन्वेषण करते वन।
थे श्रमित पंथ दुखियारे मन, कर कंज सुशोभित तरकस धनु।।1।।

धैर्य हीन हो कभी प्रभो, सीता प्रति होते थे अधीर।
करुणा रस डूबी करुणा से, झरतीं निश्वासों की समीर।।2।।

पम्पा से बस किष्किन्धा तक, पथ चलने ही दिन बीत गये।
बतियाते जनक दुलारी गुण, स्वांसों के सरगम रीत गये।।3।।

ग्रीषम ऋतु का संचार हुआ, रवि मंडल उष्ण प्रहार हुआ।
कण कण धरती रज तप्त हुई, तन क्या मन शुष्क विचार हुआ।।4।।

जल रहीं बिरह की ज्वालायें, जलती निश्वासों की समीर।
''सहमाया सा'' साहस मन को, भीषण झकोर दिक् क्षोर तीर।।5।।

झुलसाईं बन कीं शीर्ण लता, सहमाया सा था दंडक वन।
पद किष्किन्धा की ओर चले, श्रीराम लखन प्रिय दोनों जन।।6।।

उतुन्ग–श्रृंग के उच्चश्रृंग, देखा दूरी से ऋष्यमूक।
सुग्रीव सहित हनुमंत बीर, बाली भय सुरते हृदय–हूक।।7।।

दो वीर धनुर्धर ओजस्वी, आते देखा सुग्रीव बली।
भेजा क्या इनको बाली ने, भय शंकाओं से बात खली।।8।।

उच्चशिला पर बजरंगी, थे वहीं मग्न प्रभु ध्यान किये।
पहुँचा समीप में तब सुकंठ, तर्जनी उठा संकेत किये।।9।।

ये कौन धनुर्धर दिव्य रुप, आ रहे हमारी ओर यहाँ।
जा कर समीप इनको समझो, क्या बालि छद्म अब जाउँ कहाँ।।10।।

हे सूर्य शिष्य गुण मेधावी, सम्पूर्ण कलाओं के निधान।
तन परिवर्तन करने में भी, वाणी प्रवीण विद्वान महान।।11।।

शंकित सुकन्ठ की बातें सुन, उठ चले विप्र बपु धारण कर।
चिन्तन करते उस ओर चले, जिस पंथ आ रहे करुणाकर।।12।।

देखत छवि युगुल किशोरों की, बोले विनम्र वाणी कपिवर।
हे उर चन्दन लो अभिवन्दन, किस हेतु भटकते हो वन वन।।13।।

बटु रूप देख श्रीराम लखन, आते ही शिष्टाचार किया।
थोड़ा सीमित परिचय देकर, वाणी विनम्र व्यवहार किया।।14।।

२. श्रीराम सुग्रीव मिलन

को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा। छत्री रूप फिरहु बन बीरा।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

क्या किसी भूप के वीर पुत्र, या क्षत्री धर्म परायण हो।
या लीलाधर लीला करते, लगता है नर नारायण हो।।15।।

राघव मणि कहने लगे विप्र, हम नृप दशरथ के जाये हैं।
उनकी आज्ञा कर शिरोधार्य, इस दण्डक बन में आये हैं।।16।।

क्या और बतायें हे द्विजवर, वन आने पर भी विपत पड़ी।
रहते थे पर्ण कुटिर बना, अज्ञात किसी ने सिया हरी।।17।।

उसके अन्वेषण में द्विजवर, हम दोनों भाई भटक रहे।
व्याकुल वियोग की पीड़ा से, जीवन के प्रतिक्षण खटक रहे।।18।।

पहचान प्रभू कपि चरण पड़े, मुख से नहि वाणी निकल रही।
कपि स्वरूप में देख रामजी, हनुमान लला की बाँह गही।।19।।

हनुमत बोले मैं कपि निकृष्ट, क्यों आप बोलते हैं नरवत्।
होगा अवश्य सब समाधान, चलिये अब ऋष्यमूक पर्वत।।20।।

उस पर कपिवर साथी सुकंठ, बाली के भय से रहता है।
दो आप हुये दो हम दोनों, उसकी सुनिये क्या कहता है।।21।।

यद्यपि सुकन्ठ रणधीर बीर, फिर भी बाली भय से टूटा।
किष्किन्धा से निष्कासित कर, अपहृत नारी कर विष कूटा।।22।।
उस दीन–हीन का मैं सेवक, सुग्रीव साथ में रहता हूँ।
वह भी दुखियारा आप सरिस, चलिये समीप मैं कहता हूँ।।23।।

कंधों पर बिठा राम लक्षिमन, उड़ चले तुरत पर्वत की ओर।
अपने प्रियतम प्रभु को पाकर, हनुमत हो रहे हैं भाव विभोर।।24।।

देखा नभ से सब देव वृन्द, कहते जय हो श्री कपि निहाल।
सेवक छाती में चरन गहे, स्वामी कंजन कर भक्तभाल।।25।।

भगवान भक्त श्री हनुमत् को, देखा तो ब्रह्मादिक् हर्षे।
नभ मण्डल से जयकार हुई, प्रमुदित प्रशून हर्षित बर्षे।।26।।

प्रस्तर पर बैठा कपि सुकन्ठ, भयभीत कांपता था थर–थर।
जैसे पहुँचे श्री पवन पुत्र, हो गया खड़ा दृग आँसू भर।।27।।

श्रीराम स्वयं पत्नी पीड़ित, वैसे ही आहत कपि सुकन्ठ।
दोनों की पीडायें समान, मिल गये परस्पर घिरे कंठ।।28।।

यदि पीडायें होगीं समान, सच मानो मन मिल जायेंगे।
एकता सूत्र में बँधने को, दोनों आतुर हो जाएगें।।29।।

दार्शनिक विवेकी पवन पुत्र, दोनों पीड़ायें समझ गये।
कैसे हो जाये दृढ़ परिचय, ऐसे चिन्तन में उलझ गये।।30।।

जब तक सच्ची पहचान न हो, तब तक विश्वास नहीं होता।
विश्वास बिना सब प्रीत नीत, सारे अनुबन्धन है खोता।।31।।

कपि बना पक्षधर उभयपक्ष, बाँधा प्रतीत के बन्धन में।
लहरा दी प्रेम भरी लहरी, नर कपि के भाव तरंगन में।।32।।

समिधायें लाकर ज्वलित किया, हवन कुण्ड रच दीप्त ज्वाल।
साक्षी किया हुतासन को, गूँथी मैत्री की प्रेम माल।।33।।

यदि मन के मधुर विचारों में, लहराता हो समता समरस।
तो निश्चय ही दो मित्रों में, होता है दृढ़ मैत्री का रस।।34।।

है मित्र वही जो सुख–दुख में, दे योग कष्ट निर्वहन करे।
या एक दूसरे की स्थिति, सोच समझ कर सहन करे।।35।।

''करुणेश'' कष्ट में जो साथी, अपना सर्वस्व लुटाता है।
वह मित्र नहीं हैं हृदय चित्र, आजीवन छाप बनाता है।।36।।

आता है जब विपरीत समय, अपने ही सपने बन जाते।
या सपनों के कचनार पुष्प, काँटे बन तीखे कसकाते।।37।।

अनदेखे सब दैवी विधान, दुर्भागी बनते भाग्यवान।
क्या पता आज जो परम मित्र, कल वही बनेगा रिपु महान।।38।।

३. बालि वध

बहु छल बल सुग्रीव कर, हियँ हारा भय मानि।
मारा बालि राम तब, हृदय माझ सर तानि।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

युग पाँणि जोर बोला सुकंठ, हे रघुबर बालि सताया हूँ।
अपहृत नारी किष्किन्धा सुख, इस ऋष्यमूक पर आया हूँ।।39।।

बोले रघुनन्दन मित्र सुनो, मैं क्या कैसे कर सकता हूँ।
तेरी पीड़ा में परम मित्र, मैं औषधि क्या धर सकता हूँ।।40।।

प्रिय मित्र बने क्यों भटक रहे, मैं देख रहा निर्जन थल में।
बन्दी से बैठे हो चिन्तित, जैसे कृमकीट कमल दल में।।41।।

पड़ जाये विपति के बारिध में, पौरुस उत्साह नहीं भूले।
हो लक्ष्य हृदय का संकल्पित, धरती से उठ अम्बर छू ले।।42।।

बोला सुकन्ठ दृग आसूँ भर, जय जय हो रघुवर सुख सागर।
आरत भक्तन भय हरण प्रभु, हे नीति प्रीति पालक आगर।।43।।

हे नाथ बालि अरु मैं दोनों, अति प्रीति परस्पर भाई हैं।
बचपन से ही थे अनुयायी, अब बैर भावना आई है।।44।।

जब आता प्रभु विपरीत समय, अपने ही बन जाते सपने।
सपनों की आग जला देती, सपने कब हो पाते अपने।।45।।

मय दानव सुत प्रभु मायावी, गर्जन करता टेरा इक रात।
बाली कब सहता रिपु प्रचार, ले गदा चला कर बल प्रमाद।।46।।

भीषण प्रहार से मायावी, रण छोड़ खोह गिरि ओर भगा।
मैं भी भाई स्नेह बँधा, बाली के पीछे दौड़ लगा।।47।।

मायावी पीछे लगा बालि, कर गया गुहा अन्दर प्रवेश।
जाते समय कहा मुझसे, तुम रहो यहीं द्वारे प्रदेश।।48।।

न आया बाली एक माह, मैं समझा भाई हार गया।
निश्चित मायावी निशिचर ही, प्रिय बन्धु बालि को मार गया।।49।।

पुरजन परिजन किष्किन्धा के, बर्बस मुझको अधिपत्य दिया।
आकर बाली ने देखा जब, नारी हर मुझे निकाल दिया।।50।।

उससे भयभीत रहूँ स्वामी, इस ऋष्यमूक पर रहता हूँ।
वह यहाँ श्रापवश नहिं आते, मैं सत्य आप से कहता हूँ।।51।।

हे नाथ बालि भय से पीड़ित, डरता हूँ वह योद्वा महान।
यदि मुझपर उसकी दृष्टि पड़ी, निश्चित हर लेगा नाथ प्रान।।52।।

प्राणों की रक्षा हेतु प्रभो, मैं भाग रहा हूँ इधर–उधर।
बाली अजेय है हे रघुवर, राघव प्राणों की रक्षा कर।।53।।

प्रिय सुकन्ठ तेरे भय को, दे रहा वचन मैं टालूँगा।
कितना ही विकराल बालि, मैं निश्चित वध कर डालूँगा।।54।।

चाहे वह जिसकी शरण गहे, या बनें पक्षधर शतमाली।
मेरे प्रहार से बचे नहीं, मारा जाये दुश्मन बाली।।55।।

साक्षी बचनों की बसुन्धरा, सुनता नीलाम्बर है अनन्त।
मेरे कोदण्ड उठाते ही, होगा बाली का प्राण अंत।।56।।

युग पाँणि जोर बोला सुकन्ठ, उसका बध करना नहीं सुगम।
प्रति पक्षी की हर अर्ध शक्ति, वह स्वयं बना अतिबल विक्रम।।57।।

मतवाला बलबाला विशाल, पल लगते देता अरि पछार।
विन्ध्याचल प्रस्तर श्रेणी को, मुक्के से करता क्षार–क्षार।।58।।

जिस समय गदा ले क्रोध करे, जायें भूधर भू सभी काँप।
बलवान शत्रु कैसे ही हों, बाली भय से करते विलाप।।59।।

श्री लखन कहें कपिवर सुकन्ठ, विश्वास करें रघुनायक में।
तूँ देखेगा कल ही निश्चित, बाली वध रघुवर सायक में।।60।।

सुग्रीव परीक्षण हेतु उठे, दिखलाये श्रापित सप्त ताल।
श्रीराम एक सर से ही सब, भेदन का कर पौरुष विशाल।।61।।

छन्द

देखकर हर्षित हुआ सुकन्ठ, राम में है अतिशय भुज शक्ति।
बालि वध करने का विश्वास, आस में हुई प्रेम अनुरक्ति।।62।।

प्रभु अब करिये जन पर दया, मिले किष्किन्धा रूमा नारि।
मैं हूँ त्रस्त बालि भय ग्रस्त, शरण में लो रघुवीर उदार।।63।।

सखा सुग्रीव साथ रघुनाथ, गये किष्किन्धा आधी रात।
सुनी सुग्रीव गर्जना बालि, बालि से तारा कहती बात।।64।।

नाथ मत करो रात में युद्ध, साथ रघुनाथ कृपामय राम।
श्रृष्टि के सृजन हार करतार, काल से भी जीतैं संग्राम।।65।।

करेगा क्या मेरा सुग्रीव, नारि सुन समदर्शी श्रीराम।
नीति प्रतिपाल करैं सब प्रीति, कदाचित मारें तो भी धाम।।66।।

बाहुबल श्री रघुवर का प्राप्त, प्रात उठ भिड़े बन्धु युग क्रुद्ध।
गदा मुष्टिक के हुए प्रहार, भयंकर हुआ परस्पर युद्ध।।67।।

गदा घातों से आहत होय, चीख बोला सुकन्ठ प्रभु पाहि।
बन्धु क्या मुझे कृतान्त समान, दौड़िये मुझे बचाये नाँह।।68।।

विटप की ओट खड़े श्रीराम, देखते बन्धु परस्पर युद्ध।
लक्ष धनु सायक साध ततक्ष, चलाया सायक होकर क्रुद्ध।।69।।

बाण उर में लगते ही विकल, गिरा भूतल पर हुआ अचेत।
उठा साहस कर बाली बीर, राम के दर्शन किये निकेत।।70।।

तर्ज राधेश्याम

जन्मे हो क्षत्री कुल में राम, क्या यही धर्म का संरक्षण।
यह कर्म आपका गर्हित है, बनकर बहेलिया भेदा तन।।71।।

अवतरण हुआ है धर्म हेतु, करके अधर्म यश झुका दिया।
रघुवंश कीर्ति की गंगा को, हे राम आप ने रुका दिया।।72।।

यह कर्म क्षेत्र है पृथ्वी तल, होता कर्मों का निराकरण।
कर्मों का प्रायश्चित करने को, होता है जीवन और मरण।।73।।

हे राम स्वयं इस कर्म बंधे, इस भारत भू में आयेंगे।
मेरी भी होगी मुक्ति नहीं, दोनों प्रतिशोध चुकायेंगे।।74।।

अंगद बेटा बल धीर वीर, मेरे समान करिये निहाल।
लो शरण मरण अब मेरा है, सर पीड़ा से व्याकुल विहाल।।75।।

रघुनन्दन के पद कमलों से, धारणा धार कर भक्ति नेह।
बाणी में था श्रीराम राम, हो गई प्राणगत बालि देह।।76।।

४. तारा–पुनर्विवाह

तारा बिकल देखि रघुराया। दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

श्रीरामचन्द्र के ही समक्ष, मिली बाली को परम शान्ति।
पुरजन परिजन पत्नी तारा, करते सब करुण कृन्दना क्रान्ति।।77।।

देखा राघव ने दारुण दुख, तारा बिलखती करम कूट।
बोले हे देवी धैर्य धरो, हैं सभी दृष्टिगत दृश्य झूठ।।78।।

पंचरचित नश्वर शरीर, है नष्टप्राय यह मरता है।
शाश्वत अमर्त्य है जीव अमिट, जीवन नवीन फिर धरता है।।79।।

तन को करती है मृत्यु बरन, यह जीव अमर अंशी ईश्वर।
जलते है केवल पंचभूत, इसलिये कहूँ मत चिन्ता कर।।80।।

दे ज्ञान विमल श्री रघुकुल मणि, लौकिक माया अपहरण किया।
उज्जवल विचार द्वारा प्रभु ने, तारा को निर्मल ज्ञान दिया।।81।।

सुग्रीव पुत्र अंगद द्वारा, करवाया बाली क्रिया कर्म।
तारा को भी प्रभु ने भेजा, करिये तुम भी जो नारि धर्म।।82।।

छन्द

रुदन से होता कब कल्यान, नहीं वापस आते गत प्रान।
श्रृष्टि का चले निरंतर चक्र, जन्म का निश्चित मृत्यु प्रमान।।83।।

क्लेश में भी रहता सुख गुप्त, सुखों में भी दुख का संचार।
मानवी मानवता ही सत्य, जगत के मिथ्या सब व्यापार।।84।।

परम सत्ता ही प्रभु की सत्य, सत्य है इष्ट प्रेम में भक्ति।
सत्य है सामाजिक कल्यान, ज्ञान से आध्यात्मिक अनुरक्ति।।85।।

नारियाँ विधवाओं के बेष, आयु अन्तर्गत सहती क्लेश।
पराश्रित अबलाओं पर ध्यान, दिया कपिवर को यह उपदेश।।86।।

करो तारा से पुनर्विवाह, करो अब विधवायें स्वीकार।
मान सिख राघव की सुग्रीव, किया तारा को अंगीकार।।87।।

५. श्रीराम का सुग्रीव पर रौष

बरषा गत निर्मल रितु आई। सुधि न तात सीता कै पाई।।

(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

पीकत पपीहा मोर दादुर मचावैं शोर,
झिमके झिर थिरके मन चैन नेक आवै ना।
सावन ऋतु भावन लुभावन द्रुम हरित छटा,
सरित सर हिलोर ओर हेरत सुहाबै ना।
हारे दृग हेर–हेर बैठी मूँ फेर कहाँ,

कहत करुणेश कोई रंचक बताबै ना।
भूल्यो सुकन्ठ पाय सम्पदा व नारि को,
दया कर मिटायो कष्ट पास नेक आवै ना।।88।।

आये कजरारे घनकारे नभ मंडल में,
बरस रही अँखियाँ श्रीसीता बिन राम की।
रंचक सुधि पाऊँ मैं ल्याऊँ काल जीत सिया,
धैर्य हत अधीर पीर शूलत है प्रान की।।
करते नर लीला राम होके अधीर मन,
पल पल में सुरत करें लगन प्रिया ध्यान की।।
ऋष्यमूक पर्वत पर सोचत रघुवंश मणि,
आई ऋतु पावस न पाई सुधि जानकी।।89।।

दोहा

सिया बिना व्याकुल भए, पावस की रितु देख।
लखन लाल सोचैं खड़े, नर लीला को पेख।।90।।

कवित्त

क्रोधित हुए लखन लाल कर में कोदन्ड थाम,
व्याकुल श्रीराम देख आँसू दृग छाये हैं।
फरकत हैं अंग चले चपला सी चाल शीघ्र,
फाटक किष्किन्धा के निकट वीर आये हैं।
रौद्र रुप देखत ही दौड़े बजरंग बली,
तारा सहित अंगद कर जोर के मनाये हैं।
अंगद हनुमान संग ल्याये सुकन्ठ कपी,
पहुँचे श्रीराम निकट चरन सिर झुकाए हैं।।91।।

दोहा

जनहितकारी राम प्रभु, चरन परो कपिराज।
भूल्यों माया विवस मैं, क्षमा करो रघुराज।।92।।

छन्द

मेरे मन विषयन का विष, अंग–अंग प्रभु छायो।
भयो अचेत चेत बिन स्वामी, चरन शरण अब आयो।।93।।

स्वर्ण मई झूठी सुख नगरी, मेरी दृष्टि भुलानी नाथ।
भटकूँ अटकूँ मोह नगर में, दे न सका प्रभु तेरा साथ।।94।।

मैं क्या दीन–हीन कपि भटकूँ, भटके हैं मुनि नारद।
शेष गणेश महेश न जाने, माया रूप यथारथ।।95।।

हे स्वामी! पद रज अनुगामी, मर्कट यूथ बुलाऊँ।
वसुन्धरा का अन्वेषण कर, कण कण खोज कराऊँ।।96।।

६. सीता अन्वेषण

कवित्त

कपि पति की आयसु पाय आये श्री पवन पुत्र,
त्यागो अन्य ध्यान वीर काम में लगाइये।
गति में प्रवीन लीन राम काज करने में,
विन्ध्य हिम सुमेरु मेरु मन्द्राचल जाइये।
लक्ष क्रौन्च साल्मलि व चन्द्र श्वेत द्वीप जाव,
धार व पठार श्रृंग सकल खोज डारिये।
जामवंत अंगद योद्धा भी जावें सब,
सिया सुधि लेय तुरत वापस लौट आइये।।97।।

आज्ञा पाय आये कपि यूथप साथ यूथ यूथ,
गदा सैल मुद्गर लिये हूकत हैं हूक दे।
बाहुक प्रचन्ड श्वेत नील नल मयन्द बीर,
द्विविद गद गयन्द सभी लायक जुड़े कूक दें।
देह वज्र दन्त नख कराल काल ज्वाला से,
श्वेत श्याम स्वर्ण वर्ण फूसत हैं फूंस दे।
चलने को अधीर सभी भिन्न भिन्न धीर वीर,
ऋक्षराज धूम्रकेतु ऋक्ष दल अचूक ले।।98।।

आये प्रचंड वीर मंत्री वर जामवंत,
क्रोधन पनस रोधन गवय दम्भ वीर आये।
नाँदन सन्नादन प्रमाथी गर्व मर्दन भी,
क्री गिरि नक्री साथ योधा गण छाये।।
अर्जान के चारों सुत, हरित श्वेत रजत ताम्र,
पवन पुत्र समता साथ केशरी कपि आये।
आये दीप दीपन से भालु कपि यूथप यूथ,
कपिपति रुख पाय सिया खोजन को धाये।।99।।

कपि पति बुलाया वैद्य बूटी विद साथ साथ,
श्वेत द्वीप रहते सुषेण चले आवैं।
द्रोणा गिर पास रहें मेरे श्वसुर पिता तुल्य,
शल्य विशल्य करण बूटी भी लावैं।।
रण में छत विछत वीर होते तो हरैं पीर,
उन सा सुयोग्य भला वैद्य कहाँ पावैं।
कहते करुणेश कथा साक्षी ऋषि बाल्मीक,
रूमा के पिता वैद्य बूटी लिये आवैं।।100।।

जाओ अस्ताचल की ओर वहाँ पवनपुत्र,
जृम्भकगिरि अंगद के मातुल से कहिये।
बाली के निधन बाद रक्षक हैं तारा के,
वे भी सुरक्षित आय बिना फिक्र रहिये।।
राघव उपकार हेतु आवैं यहाँ सैन्य साथ,
दर्शन कर रघुवर के जीवन फल लहिये।
अतिशय दयालू कृपालू श्रीरामचन्द्र,
भुक्ति मुक्ति दाता है मागो जो चाहिये।।101।।

गीत

सैन्य दल उमड़ा पारावार, हुआ कम्पित सारा संसार।
जयति सुग्रीव मनाते, सभी राघव गुण गाते।।102।।

बन्दर यूथप यूथ सहस्रों, आ करते अभिनन्दन।
देख राम की छटा छके सब, करते पद कमलों का वन्दन।।
स्वयं मुख नाम बताते, सभी राघव गुण गाते।।103।।

कोई श्वेत स्वर्ण भूरे तन, कोई ताम्र रज कारे।
थलचर नभचर इच्छाचारी, भूधर से मतबारे।
गिर श्रृंगो में भरें छलांगे, सब में भरी उमंगे।
तोड़ फल मीठे खाते, सभी राघव गुण गाते।।104।।

कोई कहता नभ के तारे, तोड़ धरा मैं ल्याऊँ।
सागर का मन्थन कर कोई, कहता पता लगाऊँ।
करुँ श्रृष्टि सम्पूर्ण भ्रमण में, क्या अवनी क्या अंबर।
आपस में बतियाते आते। सभी राघव गुण गाते।।105

हर्षित हुआ कपीश, देख दल हँसे कौशिलाधीश।
बाहिनी चार बनाईं, सभी चारों दिक धाँईं।।106।।

भूधर भूतल गिरि गह्वरतल, खोह खन्धरे सरिताओं के जल।
झाँड़ी झुरमुट तट तरु जोहें, हरित भूमि सुन्दर दूर्वादल।
बाटी खर्वट खेत भटकते, मर्कट सारी करनी करते।
दिए वन जन्तु भगाई। सैन्य चारों दिक् धाईं।।107।।

कोई चढ़ता उतुंग शिखर, कोई प्रवेश करे खन्धर।
झाँक रहा कोई कूप विवर, कोई सोच मगन है बन्दर।।
कोई कुंज पुंज में देखे, अपना जन्म धन्य कर लेखे।
जनक पुत्री न पाईं। सैन्य चारों दिक धाईं।।108।।

खोज रहा कोई नगर डगर, ग्राम गली झाँके कोई घर–घर।
कोई रनवास निवास नृपत, कोई वन कंदरा में हो निडर।।
पृथ्वी से अनन्त अम्बर लौ, जावे दृष्टि जहाँ तहँ लौ।
भालु कपि सेना छाई। जानकी खोज न पाई।।109।।

दोहा

तीन दिशाएँ खोज कपि, हुए श्रमित लाचार।
दक्षिण दिशि की खोज को, चले वीर तैयार।।110।।

कवित्त

सेनापत अंगद के संग चले जामवन्त,
द्विविद मयन्द नील नल को ले साथ में।
वज्रदन्त भारी बलधारी हनुमान चले,
दधि मुख विजेता झूम भूधर सौगात में।।
निकट बुलाय कहैं सबसे सुकन्ठ भूप,
एक माह अन्दर सुधि लाने की बात में।
कहते कपिराज सुनो आवे सुधि लावै बिनु,
पायेगा मृत्युदण्ड निश्चित हर हाल में।।111।।

चलते समय हनुमत बुलायो श्री राघव ने,
जाओ भक्त सुयश सुधा जाते ही पीजिये।
कहते रघुनाथ श्री गौरापति रक्षा करें,
लीजिये अंगूठी सहदानी में दीजिये।।112।।

दोहा

रघुपति की आशीष ले, चले सभी बलवान।
जै राजा सुग्रीव की, सबने किया पयान।।113।।

कवित्त

नदी तट कछारन तरुवर व डारन में,
कन्दर गिरि खोह खोड़ खंधर में देखा।
घाटी की पाटिन में बाँसन की घाटिन में,
गाँव गली नगरों की सीमा को पेखा।।
सरिता सर झाँकत ऊँचे चढ़ नांकत दौर,
सहते कष्ट आतप का समुझत सरेखा।
कहत करुणेश देख भारत दक्षिण प्रदेश,
भये प्यास त्रासित नीर कतहूँ न देखा।।114।।

गीत
गले में लगी प्यास की त्रास, त्रास से टूट गया उल्लास।
सूखा कंठ होंठ मुर्झाने, सबने बचत प्रान न जाने।
ऐसी त्रसा समानी। हाय रे पानी पानी।।115।।

मुखमंडल में हुई कालिमा, पपड़ी जमी अरुण अधरों पर।
शुष्क कंठ वाणी स्वर बिगड़े, जल बिन व्याकुल सारे बंदर।
डोल रहे हैं बोल न पाते, सब के सब मन में घबराते।
हो रही जीवन हानी। हाय रे पानी पानी।।116।।

कवित्त
चाहें यदि कर्मठ तो सारे असम्भव को,
करके परिश्रम घोर सम्भव बनाय दें।
भूधर के प्रस्तर खंड तोड़ चले कंकड़ करें,
कंकड़ पीस चूर्ण करें धूल ही बनाय दें।
धरती से उठे दौड़ पकड़े नीलाम्बर को,
तारक कतारे चन्द्र ज्योत्स्ना हिलाय दें।
जान के अधीर वीर साहस ले उठे हनू,
धीर धरो मित्रो खोज नीर को पिलाय दें।।117।।

देखा शिखर ऊपर से दूरी कुछ विवर खोह,
ढँका बेल बल्ली तृण हरित लहराते हैं।
आते भन्नाते हुये पंछी कीट मधुप भृंग,
विवर में प्रवेश करैं बाहर भी आते हैं।।
करते किलोल डोल अन्दर है शीतल जल,
शुष्क पंख जाते खग आद्र पंख आते हैं।
अजब दृश्य देख हुए हर्षित हनुमंत वीर,
दल को बुलाते यहाँ आओ जल पिलाते हैं।।118।।

जल ही मिटाता मल, जल ही करे निर्मल तन,
जल ही है जीवन धन जल से जहान है।
जल से रस रस में जल जल में ही जीवन बन्धु,
जल से श्रृष्टि—वृष्टि कुंज पुष्पित उद्यान है।।
जल के बिना मरणासन्न व्याकुल कपि वृन्द हुए,
जल से तृप्त करने को यत्नी हनुमान है।
कहते करुणेश त्रासित पैठे विवर भालु कपि,
पीकर तृप्त हुये नीर हनुमत महान है।।119।।

छन्द
मिटी प्यास की भास, हुआ जल पीकर के उल्लास।
दरस देवी के पाये, फूल फल तोड़े खाये।।120।।

आशिष ले बदरी देवी का, किया छणिक विश्राम।
आज्ञा दी वीरो दृग मूदों, भजिये रघुकुल राम।।121।।

क्षुधा त्रसा से तृप्त हुये कपि, श्रमगत हुआ शरीर।
आँख खुली तो देख रहे हैं, बैठे सागर तीर।।122।।

कवित्त
सागर के दर्शन कर आपस में बात करैं,
लगता गगन उतर धरा जल में समायो है।
उठतीं तरंगे उमंगे भर उछल रहीं,
तट में ठहरातीं पंथ श्रम ज्यों बुझायो है।।
डोलत जल जन्तु उछल क्रीड़ा में मस्त फिरैं,
दिनकर मणि रजत रश्मि चादर बिछायो है।
सागर को देख कीश शीस धरें सोच रहे,
कैसे हो तरण सिन्धु बैरी बन आयो है।।123।।

दोहा
भूले तन—मन की दशा, देखि जलद गंभीर,

किंकर्तव्य विमूढ़ हो, अँखियन झलके नीर।।124।।

गीत

मिटा अंगद का हृदय हुलास, सिरानी सब जीवन की आस।
असंभव हुई सीता की सुधि, अब है प्राँनन की त्रास।
हाय कैसी हैरानी। मिली न सिय महारानी।।125।।

सहीं बचपन से विपति अनेक, पिता सुख देख सका न ऐक।
अब तो चरन–शरण रघुवर के, रहूँगा मैं उनके ही पद टेंक।
जासु गुन गाते ज्ञानी। मिली न सिय महारानी।।126।।

अवधि सिरानी एक माह की, मिली न खोज निशानी।
किसे सुनाये रघुनन्दन बिन, अपनी करुण कहानी।
मति विपरीत नशानी। मिली न सिय महारानी।।127।।

छन्द

प्राँणों का कर–त्याग सिन्धु तट, अंतिम सुमिरें नर नागर नट।
दर्भ डसा उत्सर्ग करें तन, धरें मृत्यु भूषण ही झटपट।।128।।

गिरि कन्धरे में पंख हीन तन, श्रवन कर रहा था संपाती।
हर्षित मुझको आज भाग्य से, बहु भोजन की आश दिखाती।।129।।

नल बोला कार्पण्य दोष ये, राम काज करके ही मरें।
यत्न शील बन यत्न करें कुछ, चलो तरें या मग्न हो मरें।।130।।

मरना जटायू के समान हो, परोपकार में प्रान दान हो।
राम काज हित पंख कटाये, ऐसी मरनी ही महान हो।।131।।

मान्स भोज्य आशा में ऐंठा, संम्पाती सुनता था बैठा।
बन्धु जटायू मरण सुना जब, दुखी शोक सागर में पैठा।।132।।

कहने लगा निकट में आओ, मुझे पूर्ण वृतान्त सुनाओ।
कैसे हुआ निधन भैया का, सारी सच्ची कथा सुनाओ।।133।।
राम काज हित मृत हर्षाया, बीरों का उत्साह बढ़ाया।
राम काज में ही आये कपि, सीता का स्थान बताया।।134।।

लाँघ सके जो शतयोजन जल, घोर उदधि से नहीं डरेगा।
वही खोज में सफल विजेता, अगम सिन्धु जो पार करेगा।।135।।

संम्पाती का कहा श्रवण कर, वीरों का उत्साह खो गया।
बैठ गये चुप साध सिन्धु तट, बल पौरुष अरमान धो गया।।136।।

गीत

सोचते हैं सागर के तीर, कौन जाने वाला है वीर।
पार जलनिधि को जाये, खबर सीता की लाये।।137।।

हुआ कौन उत्पन्न धरा में, जो परमार्थ निवाहे।
कौन कर्म तत्पर है इतना, जो मानवता चाहे।।
अपयश छोड़ सुयश का पंथी, को कुल कीर्ति उठाये।
खबर सीता की लाये।।138।।

स्वार्थ त्याग परमार्थ पंथ में, अडिग कदम धरते हैं।
वह मरना क्या जीना ही है, जो परहित में मरते है।
दानवीय गुण चोर स्वार्थी, भव जल लांघ न पाये।
खबर सीता की लाये।।139।।

आये तो कुछ कर दिखलायें, जियें चहे मर जायें।
राम काज में मर जायेंगे, तो भी नाम कमायें।
रह जाये जग शेष कहानी, क्यों कुल दाग लगायें।
खबर सीता की लायें।।140।।

दोहा

सभी वीर कहने लगे, अपनी शक्ति प्रसार।
कहा किसी ने भी नहीं, जाऊँ मैं उस पार।।141।।

उसी समय प्रभु पद कमल, चिन्तन में मन लीन।
नयन मूँद के मग्न थे, श्री हनुमन्त प्रवीन।।142।।

छन्द

रमा हृदय में राम, कामना एक न मन में।
प्रेम मई प्रभु मूर्ति, ध्यान से व्यापी तन में।।143।।

ऋक्षराज मन सोच, वृद्ध तन साहस टूटा।
साहस के बिन राम, काज मुझ से भी छूटा।।144।।

दोहा

सागर सीमा तरन की, नहीं किसी में शक्ति।
प्रश्न करूँ हनुमंत से, जिनके उर प्रभु भक्ति।।145।।

निकट जाय बजरंग के, कहा छोड़िये ध्यान।
ध्यान राम के काज हित, जागो श्री हनुमान।।146।।

कवित्त

सिन्धु देख बीरों के संकट में प्रान फँसे,
कष्ट के विमोचन कपि लोचन तो खोलिये।
ध्यान त्याग आप इष्ट कारज अभीष्ट करें,
छोड़िये समाधि ब्याधि दल की टटोलिये।।
मरणासन्न आशा में छाया निराशा विष,
अपने परिश्रम का अमृत रस घोलिये।
अब तो क्लेश हारी बलधारी हनुमन्त तुम्हीं,
संकट के मोचन उठो, जय श्री राम बोलिये।।147।।

लेकर अंगडाई कपी बन्दे गुरु सूर्य देव,
दीर्घ ह्रस्व होने की विद्या पढ़ाई थी।
देखत विशाल रूप संत का अनंत हुआ,
जैसी छटा बलि को विराट ने दिखाई थी।।
गर्जन सुन कम्पित भू भूधर कम्पायमान,
शेषनाग सरिस पूंछ नभ तक घुमाई थी।
कहते करुणेश कष्ट मोचन भीम रूप बने,
मानो संत रंग में वीरत्व छटा छाई थी।।148।।

जामवन्त कहिये सुधि लाऊँ या सीता को,
या तो सठ रावण की लंका को बोर दूँ।
कुचलूँ कहो लातन से मीसू गदा घातन से,

या तो रजनीचर के दसो शीश तोड़ दूँ।
ल्याऊँ अगस्त्य को पिलाऊ उसे बर्बस सिन्धु,
बोर के लंगूर सिन्धु चैल सो निचोड़ दूँ।
कहते महावीर कहो लाऊँ त्रिकूट उठा,
तोड़ दूँ मरोड़ दूँ या गदा मार फोड़ दूँ।।149।।

दोहा

जामवन्त विनती करी, सुनिये हे मति धाम।
श्री सीता सुधि लाइयो, करिअ न दूजे काम।।150।।

सिया खोज के चरित को, पढ़ें सुने नर नारि।
तिन्ह कीं सब मन कामना, पूर्ण करें त्रिशिरारि।।151।।

किष्किन्धाकाण्ड समाप्त

अशोक वाटिका में श्री हनुमान जी

श्रीगणेशाय नमः

श्रीराम कथा

सुन्दर काण्ड

१. हनुमान जी का लंका प्रस्थान

जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। एही भाँति चलेउ हनुमाना।।

(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

गर्जन कर तड़ित शब्द कूँद चढ़यो मन्द्राचल,
मुष्टिक बाँध दन्त कसे, स्वांसा गति साघ ली।
रोमावलि पुच्छ के उठाये नभ मन्डल तक,
नेत्रों की तीव्र दृष्टि लंक ओर बाँध ली।।
पर्वत के पादप प्रसून झरैं पवन वेग,
लगता गिरि कपि की विदाई आराध ली।
करने को काज अब दिनेश वंश भूषण का,
गगन पंथ पवन पुत्र पवन गति सम्हाल ली।।1।।

जैसे गरुड़ सर्प दाव दौड़े नभ मंडल में,
वैसे द्रुम हनुमत की पीछे लहराती है।
चपला सी दन्त पंति चमके परछाई सिन्धु,
सागर नभ बीच ज्यों दामिन द्युति भाती है।।
जय–जय हनुमंत सन्त होती नभ मंडल से,
पवन चले मन्द–मन्द व्यजन सी हिलाती है।
मार्ग बीच बुधि बल परीक्षा ली सुरसा ने,
पर्वत मैनाक कियो अर्चन बहु भाँती है।।2।।

दोहा

सुरसा अरु मैनाक को, कपिवर कियो प्रणाम।
जब तक सुधि पाऊँ नहीं, तब तक नहिं विश्राम।।3।।

तर्ज राधेश्याम

निर्भय होय चले बजरंगी, मुष्टिक मार लंकनी मारी।
पहुँचे गिरि त्रिकूट के ऊपर, वही से देखी लंका सारी।।4।।

देव शिल्पियों द्वारा निर्मित, देखा दुर्ग अजेय लंक का।
रत्न खचित मणि मुक्ता भूषित, मणि मय था पाथेय लंक का।।5।।

चारों दिक् प्राकोर स्वर्ण का, बज्र कपाट लगे मणि भूषित।
रंग महल चौपाल बीथिका, हाट–बाट अनुपम छवि पोषित।।6।।

सबके महल राजमहलों से, महलों में भी रखवारे भट।
अस्त्र और शस्त्रों के ज्ञाता, सब पंडित सब सुभट बीर भट।।7।।

वेदों के ज्ञाता पारायण, सब शंकर भैरवी उपासक।
लेकिन काम क्रोध मद लोभी, सब ब्राह्मण यज्ञों के त्रासक।।8।।

धीर–बीर निर्भीक भयंकर, सबके सब मायावी निशिचर।
पुर रक्षण में घूम रहे हैं, बड़े–बड़े भट–भूरि भयंकर।।9।।

खर महिषा व ऊँट भेड़िया, किसी किसी का बकरा बाहन।
दारुण भट अरु सुभट महाभट, अहि गति से त्रयलोक नसावन।।10।।

रहता है दुर्जेय लंक में, लंकेश्वर होकर निशंक।
होते हैं भयभीत सुरासुर, देखके इसकी भृकुटि बंक।।11।।

दोहा

सोच पवन सुत को हुआ, होय कवन बिधि टोह।
गिर त्रिकूट में तीन दिन, बीत गए नहिं जोह।।12।।

२. लंका प्रवेश

मसक समान रूप कपि धरी। लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

गिरि त्रिकूट में बजरंगी के, रहे तीन दिन बीते।
करने हेतु प्रवेश लंक में, सभी हौसले रीते।।13।।

यहाँ सहस्रों रक्षक घूमें, करें लंक रखबारी।
मायावी खल दुष्ट निशाचर, हैं अतिशय बलधारी।।14।।

नरहरि का कर ध्यान एक छण, अति लघु रूप बनायो।
प्रभु मुद्रिका मुख में रखकर, लंका गढ़ में आयो।।15।।

आते ही ललकार लंकनी, की सुनी हनुमत वीर।
मुष्टिक मार धाराशायी कर, हर ली उसकी पीर।।16।।

राम दूत के दर्शन पाके, लंकनी भाग्य सराहा।
अब रावण का मरण निकट है, कपि को यही बताया।।17।।

डगर–डगर चौराहे घर–घर, पूर्ण निशा हनु भटके।
पता मिला न जब सीता का, घोर कष्ट में अटके।।18।।

चन्द्रमुखी मृगनयनी रावरीं, क्या इनमें है सीता।
करते तर्क वितर्क ह्रदय में, समय समूचा बीता।।19।।

देखा सुप्त पड़ा लंकेश्वर, जैसे गिरि मन्द्राचल।
बीस बाहु मंडित आभूषण, अयुत गजों का प्रतिबल।।20।।

पूर्ण निराश हुये बजरंगी, फिर त्रिकूट पर आये।
सोच रहे क्या उत्तर दूँगा, सीता के बिन पाये।।21।।

मध्य सिन्धु में कूद करुँ अब, नश्वर देह समर्पण।
राम काज कुछ कर न सका मैं, क्या दूँ जाकर दर्शन।।22।।

कवित्त

भक्ति मूर्ति सीता का शत्रु है अहंकार,
निर्मल भाव वाले ही सीता को पायेंगे।
जब तक सम्वेदन की वेदना समाय नहीं,
आद्य शक्ति सीता समीप नहीं जायेंगे।
अहंकार मिश्रित वाक्य बोल के पयान कियो,
सर्वप्रथम राघव घमंड को मिटायेंगे।
कहते करुणेश दर्पनाशी अविनाशी से,
क्षमादान मांगे कपि सीता तब पायेंगे।।23।।

तर्ज राधेश्याम

चूर हुआ अभिमान कपि का, हे रघुनाथ बचाओ।
शरण पड़ा हूँ चरन तुम्हारे, भेजा तुम्हीं निभाओ।।24।।

कवित्त

आते क्षीर सागर से भक्तों की आहें सुन,
दौड़ें पदत्राण बिना कष्ट से बचाते हैं।
ऐसे कृपालू दयालू श्री राघवेन्द्र,
आर्त भक्त गोद उठा ह्रदय से लगाते हैं।।
तारा गजराज को उधारे अनेक अधम,
सभा बीच द्रुपद सुता लाज वे बचाते है।
ऐसे करुणामय सुनि करुणा बजरंगी की,
आये भुज दाहिन नेत्र अंग फड़काते हैं।।25।।

छन्द

देखे सुन्दर सकुन, कपी तन शक्ती आई।
पुनि सीता अन्वेषण को, वीर ने गदा उठाई।।26।।

३. भक्त विभीषण से भेंट

रामायुध अंकित गृह, सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ, देखि हरष कपिराइ।।

(श्रीरामचरितमानस से)

छन्द

पूर्व में ऊषा बिछा दी, लालिमा की लाल लाली।
ब्रह्म बेला में मानो शुभ, अर्चना थाली सजा ली।।27।।

तारिकायें मलिन होकर, चाँदनी के साथ धूमिल।
रात्रि रम्भा ने सिकोड़ी, चमचमाती साल ओझिल।।28।।

धरयो सूक्ष्म स्वरूप कपि ने, सूर्य गुरुवर को नमन कर।
चल पड़े श्रीराम कहते, लंक के उत्तर दिशा पर।।29।।

कनक मणियों से जटित पथ, चतुस्पथ से और आगे।
था भवन हरि अयुध अंकित, श्री विभीषण भक्त जागे।।30।।

रुक गये सहसा कदम तब, आ गया आश्चर्य ऐसा।
निश्चरों के नगर में भी, राम का ये भक्त कैसा।।31।।

भक्त है तो राम का यह, काम भी पूरा करेगा।
मैं करुँ पहचान इससे, त्रास ये मेरी हरेगा।।32।।

बिप्र बन करके गये कपि, श्री विभीषण भवन द्वारे।
हो गई पहिचान पल में, मिल गये श्रीराम प्यारे।।33।।

आँसुओं की सरित सलिला, श्रवित थी चारों दृगों में।
चाह व उत्साह दोनों, प्रेम रस भीने रगों में।।34।।

हे सखे इतना बता दो, कब मिले श्रीराम प्यारे।
करुँ मैं निशि दिवस चिन्तन, हेरते पथ नयन हारे।।35।।

मधुर हँस हनुमन्त बोले, भक्ति बिन भगवान कैसे।
भक्ति सीता बिन फिरुँ मैं, लंक मैं हूँ विफल जैसे।।36।।

प्रथमतः श्रीराम भक्ति, रूप सीता को बता दो।
मिलूँ मैं अविलम्ब कैसे, यह मुझे साधन लखा दो।।37।।

सुन सखे बोले विभीषण, भक्ति लंका में विराजी।
दर्श प्रभु अब तक न पाये, क्यों हुई मुझ पर नराजी।।38।।

सुन सखे जब तक न मन से, जायँ दुःश्चिन्तन निकारे।
हो सकें न दर्श प्रभु के, बिना भक्ती के सहारे।।39।।

चोर क्रूर कुकर्म रत शठ, के महामंत्री बने हो।
खा रहे हो धान कुत्सित, और किस लोभ में सने हो।।40।।

त्याग दो यह नीच सेवा, फिर विमल भक्ती को पाओ।
मैं कराऊँ दर्श प्रभु का, तुम मुझे सीता दिखाओ।।41।।

दोहा

प्रमदा वनन अशोक तरु, बैठीं सीता मात।
यह सुनि हनुमत चल पड़े, हर्षित पुलकित गात।।42।।

४. प्रमदा वन में सीता दर्शन

देखि परम बिरहाकुल सीता। सो छन कपिहि कलप सम बीता।।
(श्रीरामचरितमान से)

तर्ज राधेश्याम

सिन्धु तीर पै है प्रमदावन, चारों तरफ स्वर्ण प्राकोर।
आवर्तित परिवर्तित लहरों, से अभिसिन्चित उठे हिलोर।।43।।

तारक मणियाँ उज्जवल करतीं, चारु चाँदनी की झिलमिल।
खिली कमलिनी कुमुद फूलते, धवल ज्योत्सनाओं से मिल।।44।।

प्रमदा बन उद्यान मध्य ग्रह, मणियों के स्तम्भ मनोहर।
झलकें मर्कत कुलिस झालरें, बन्दन वारे ध्वज ऊपर।।45।।

स्वर्ण कलश ध्वज तोमर लहरें, चले पवन सन–सन पुरवाई।
लंकेश्वर पालित लंका की, मानों गूँज रही सहनाई।।46।।
ललित लताओं मध्य सरोवर, स्वर्ण जड़े सोपान घाट थे।
बगुले खग–मृग भ्रमण कर रहे, भिन्न–भिन्न यों ठाट बाट थे।।47।।

राक्षसियाँ उपाधि भूषित भट, प्रमदा बन रक्षण में सारी।
सुमट–महामट दारुण भटकैं, कैम्प बाग करते रखवारी।।48।।

लख पड़ी शिन्सपा मूल टिकी, अधरों में कम्पन राम राम।
सोचत बैठी कृषता मलीन, कपि ने देखा ये राम बाम।।49।।

हृदयेश्वर की स्मृति मन में, स्मरण सुधा वर्षा करतीं।
उस सीकर से सन्ताप ज्वाल, सींचा करतीं शीतल करतीं।।50।।

ओ री रजनी ले चन्द्र प्रभा, क्यों चमक रही है राम बिना।
उनके बिन तू सन्ताप बनी, मैं जी न सकूँ दो चार दिना।।51।।

दुखियारी जनक दुलारी के, बहती अँसुअन की धारा।
देखा बजरंगी राम लीन, ये है निश्चित रघुबर दारा।।52।।

उसी शिन्सपा तरु पल्लव में, सूक्ष्म रूप कपि बैठ गये।
दुखियारी जनक दुलारी को, देखा कपि दुख में पैठ गये।।53।।

छन्द

स्वर्ण स्यंदन साज रावण, पत्नियों को साथ लेकर।
साज बाज ससैन्य आया, भय दिखाने को तमीचर।।54।।

विहँसता बोला दसानन, मृगनयनी क्या डर रही है।
या तपस्वी वेष पति की, चिन्तना कर जर रही है।।55।।

एक बार विलोक मुझको, मैं तुझे पलकें बिछा दूँ।
भूल तपसी को मुझे भज, मैं तुझे सर्वस्व ला दूँ।।56।।

भारत की पावन सती को, लूट पाया कब प्रलोभन।
सिंहनी निर्भीक गर्जी, ओट कर छोटा सा तृन।।57।।

व्यर्थ खल तेरे मनोरथ, राम जीवन प्रान मेरे।
धूल में मिल जायेंगे शठ, सब क्षणिक अरमान तेरे।।58।।

छद्म कर लाया मुझे तूं, कीर्ति अपनी गा रहा है।
देख कुछ पश्चात् दिन तू, घोर विप्लव आ रहा है।।59।।

फिर दसानन ने कहा सुन, मैं अभी समझा रहा हूँ।
एक महीने की अवध दे, आज वापस जा रहा हूँ।।60।।

देखता हूँ कब तलक तूँ, दीन तपसी को पुकारे।
चन्द्रहास कृपाण मेरा, सत्य ये गर्दन उतारे।।61।।

लंकेश का संकेत पा, राक्षसीं अनेकों जुड़ आईं।
भय दिखलातीं रूप धरें, क्रोधित खाने को धाईं।।62।।

तर्ज राधेश्याम

त्रिजटा राक्षसी ने आकर, देखा जो सपना समझाया।
दुष्टाओं को भयभीत किया, सीता को ढाँढ़स बँधवाया।।63।।

कवित्त

व्याकुल वियोग रोग पीड़ा से पीड़ित तन,
अँखियन में अँसुअन की धारा विचारी के।
मानों अमर बेल ग्रीष्म रितु में झुलस पड़ी,
बरसत दृग सावन से भीजे छोर सारी के।
तजबैं को प्रानन अंगार मांगे तारन से,
जब से कठोर वचन सुने दुराचारी के।
दशा दयनीय छुपे शिंशप में सुनै कपि,
कैसे कष्ट मेटू जाय जनक की दुलारी के।।64।।

तर्ज राधेश्याम

कैसे सीता को समुझाऊँ, अकुलाता सा है मेरा मन।
कपि के स्वरूप में ही जाऊँ, समझेगी मायावी रावन।।65।।

सर्वप्रथम श्री रामकथा, कानों में श्रृवणाम्रत भर दूँ।
सारे चिन्तन की हृदय ज्वाल, पीड़ाये हर प्रभु रस भर दूँ।।66।।

कर विचार मतिधीर हनू, फेंकी मुदरी सम्मुख भू पर।
चिंतित चकित देख सीता को, कथा कही कपि तरु ऊपर।।67।।

रघुवन्शी बीर पतोहू तूँ, क्यों होती हो इतना अधीर।
राजा दशरथ थे महारथी, जो इन्द्र लोक की हरें पीर।।68।।

हे भाग्यवान श्रीराम प्रिये, बहाती क्यों अँखियन से नीर।
आपत्ति काल का अंत समय, आते ही हैं श्रीराम बीर।।69।।

श्रवणामृत सुन के राम कथा, सीता अन्तर नवज्योति जगी।
हा कौन पिलाता बचनामृत, आ जाओ सामने कहन लगी।।70।।

सम्मुख आ बोले हनूमान, मैं रामदूत श्री राम कसम।
मुझ पर हे मैया कर भरोस, विनती सुनकर विश्वास अगम।।71।।

माता तेरे अन्वेषण में, सागर को लाँघ करके आया।
निशिचर हर घर–घर शोध किया, निर्जल व्रत कर दर्शन पाया।।72।।

तन मन से राम पुजारी हूँ, दिखलाऊँ कैसे हृदय चीर।
तू ने माता मुँह फेर लिया, तेरा सुत मैं होता अधीर।।73।।

सच में तुम राम उपासक हो, बतलाओ रघुवर अंग चिन्ह।
क्यों नाम पड़ा करुणा निधान, क्यों कर जयन्त से हुये खिन्न।।74।।

जब प्रश्न सुने बजरंगी ने, सारी गुत्थी सुलझा डाली।
निश्चित हूँ मैं राम भक्त, यह बचन नहीं मेरा खाली।।75।।

मैं कब से मैया हेर रहा, तू पीठ फेर मुँह फेर रही।
मैया छैया पर दया करो, मैंने रघुनन्दन कथा कही।।76।।

तू राम दूत बन कर आया, तो प्रीतम के सन्देश सुना।
सुनकर मेरे उर अन्तर में, विश्वास जगेगा अधिक गुना।।77।।

क्या कहूँ पूज्य माता से मैं, बजरंगी मन आया क्लेश।
विरहाकुल पति व पत्नी प्रति, क्या पुत्र कहे विरहा सन्देश।।78।।

कुछ कहता हूँ तो उचित नहीं, घिर गया कंठ गदगद शरीर।
मन पहुँचा रघुवर चरणों में, वह चला दृगों से अश्रुनीर।।79।।

जिव्हा में आये स्वयं प्रभू, व्यथा विरह दुख समझाया।
भगवती विरहणी सीता ने, वर दिये पुत्र कह अपनाया।।80।।

५. प्रमदा वन भंजन

देखि बुद्धि बल निपुन कपि, कहेउ जानकीं जाहु।
रघुपति चरन हृदयँ धरि, तात मधुर फल खाहु।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

हे माँ मैं जब से आया हूँ, जल पिया नहीं नहिं खाया है।
देखे इस प्रमदा वन के फल, माँ मेरा मन ललचाया है।।81।।

आशिष दे माँ मैं फल खाऊँ, हो रही छुधा की चाह अधिक।
डर नहिं मुझे रखवालों से, चिंता नहिं करना माता तनिक।।82।।

हे सुत निश्चरियाँ अनेक, करतीं प्रमदावन रखवारी।
भट सुभट महाभट, घूम रहे, सब शस्त्र–विशारद बलधारी।।83।।

कैसे प्रिय पुत्र तुझे कह दूँ, परमार्थ भक्त को मरवा दूँ।
अपनी दुख नाव खिवैया को, कैसे कष्टों में धिरवा दूँ।।84।।

हे माँ मेरी मत चिन्ता कर, आज्ञा भर पाऊँ जाने दो।
तेरे चरनों में अर्पित मन, बल दिखलाने फल खाने दो।।85।।

कितना छोटा तूँ बर बालक, दारुण निशिचर भूधर से हैं।
तेरे हाथों नहिं अस्त्र शस्त्र, ये दनुज महा रण बंकुर हैं।।86।।

दिनकर मणि गुरु स्मरण किये, हनुमन्त दिखाया रौद्र रूप।
नखदन्त भयंकर बज्रदेह, मुग्दर विशाल शोभा अनूप।।87।।

कुन्चित केशों में स्वर्ण मुकुट, कानों में कुण्डल झलक रहे।
उपवीत पड़ा व्रत ब्रह्मचर्य, माला तुलसी दल दलक रहे।।88।।

हर्षान्वित हो सीता बोलीं, जाओ प्रमदा के फल खाओ।
हो अजर–अमर नवनिधि दाता, सुत कष्ट निकंदन कहलाओ।।89।।

कपि ने हर्षित श्रीराम कहा, बढ़ गया मधुर फल खान को।
फल खाना मात्र बहाना था, उद्देश्य लंक अजमाने को।।90।।

इन वीर महाभट सुभटों में, देखूँ कितना साहस बल है।
कैसे व कितने अस्त्र–शस्त्र, क्या सैन्य शक्ति कितना दल है।।91।।

क्यारियाँ नष्ट कर तोड़ चला, पादप पत्ती डाली–डाली।
प्राकोर फोर उद्यान तोर, कपि ने कर दी बगिया खाली।।92।।

रक्षक दानव सब दौड़ पड़े, कपि बज्र देह करते प्रहार।
लंगूर लपेटे सबके सब, गर्ज पड़ा सबको पछार।।93।।

मच गया प्रलय का महा शोर, संग्राम भयंकर लाने को।
तोमर भाला बर्छी खनके, बन्दर को पीट भगाने को।।94।।

लेकिन पलंयकारी बंदर, हो गया भयंकर महाकाल।
निश्चर दल मर्दन कर गर्जा, क्रोधित था जैसे रुष्ट ब्याल।।95।।

दौड़ पड़े भट सुभट सभी, मच गई बाग में काट मार।
यम रूप हुआ कपि देख रहा, पर्वत प्रस्तर करता प्रहार।।96।।

हा–हा चिल्लाते फटे मुन्ड, मारे कुछ भाग गये निशिचर।
कितने हत श्वासें भरते थे, मरते–मरते करते थर–थर।।97।।

प्रमदा वन रंजित रक्त हुआ, सब रक्षक सेना संहारी।
फल खाये तोड़न लगे वृक्ष, जा बैठा ऊँचे बलधारी।।98।।

अधमारे ड्योढ़ी में जाकर, रोये लंकेश्वर कर जुहार।
राजन प्रमदा वन में आया, बन्दर स्वरूप भूधराकार।।99।।

वन रक्षक दल संहार किया, फल खाये तोड़े वृक्ष बेल।
बैठा निश्चित तरुवर ऊपर, करता हो जैसे बाल खेल।।100।।

रह गया दसानन दाँत दाब, बेटा अक्षय को बुलवाया।
प्रिय पुत्र बढ़ो सेना लेकर, देखो बन्दर कैसे आया।।101।।

था महारथी अक्षय कुमार, जै लंकापति रथ हांक दिया।
चतुरंगिनी सेन रथ पीछे थी, कपि ने देखी सम्पूर्ण क्रिया।।102।।

बाजा मारु था बजा प्रचंड, चमकी तलवारें थीं चमचम।
हाँथी घोड़े पैदल सवार, दौड़ी निशिचर सेना धम–धम।।103।।

कपिवर भी अक्षय के ऊपर, भारी सा वृक्ष पटक डाला।
क्रोधित दल ऊपर टूट पड़ा, हड़कंप मचा दल घबड़ाया।।104।।

जाते ही बन्दर सर्वप्रथम, अक्षय रथ चकनाचूर किया।
मल–कुचल समूची सेना को, लगता था मानों धूर किया।।105।।

कर दिया प्रान गत अक्षय को, हुआ परास्त समूचा दल।।
कुछ पहुँचे दसकन्धर समीप, करनी कपि की बतलाई चल।।106।।

सुत बध सुनते ही लंकेश्वर, घननाद महाभट बुलवाया।
आज्ञा दी जाओ इन्द्रजीत, देखो ये बन्दर क्यों आया।।107।।

हे वीर मारना नहीं उसे, बन्धन कर जीवित ही लाना।
मैं भी देखूँ उस बन्दर को, किसलिये हुआ उसका आना।।108।।

बन्दर तो बन्दर ही बीरो, देखूँ तो कैसा बन्दर है।
क्या छद्म रूपधारण करके, आया रिपु देव पुरन्दर है।।109।।

स्यन्दन में जोते अष्ट गर्दभ, चल पड़ा इन्द्रजित लंका से।।110।।

चतुरंग सैन्य ले साथ बली, लड़ने बजरंगी बंका से।।111।।

जिस समय महाभट वीर चला, थर्राया नभ धरती डोली।
दाहिन थी देवी निकुम्भिला, कर जोरे देवों की टोली।।112।।

मेघों सी गर्जन कर निशिचर, हनुमत समीप जब जाते थे।
देखा हनुमत ने विकट दृश्य, श्रीराम सुमिर मुस्काते थे।।113।।

सोचे यह आया दारुण भट, त्रयलोक विजेता भटभारी।
रण रंग उठेगा घमासान, श्रीराम करे रक्षा सारी।।114।।

माँ सीता का समरण किया, वन्दन कर श्रीगुरु सूर्यदेव।
हे रघुकुल मणि है कठिन घड़ी, भुज दण्डों में प्रभु शक्ति देव।।115।।

धर प्रलयंकारी रौद्र रूप, ले गदा भयंकर नाद किया।
लंगूर फेंक सेना मारी, सठ छाती मुष्ट प्रहार किया।।116।।

धननाद क्रोध कर सर छोड़े, बांणों से अंबर पाट किया।
बजरंगी उर में भेद बाण, हांथों का पर्वत काट दिया।।117।।

अगणित वाणों की वर्षा से, हो गया दिवस में अंधकार।
ओझिल कर दी बजरंग मूर्ति, व्यापी देवन चिन्ता अपार।।118।।

मूं खोल चबाये सभी अस्त्र, धनु तोड़ काट अक्षय तूणीर।
सारथि वाहक खर रथ समेत, लांगूर बाँध फेंका शरीर।।119।।

मारी छलांग निशिचर समेट, बजरंगी करके मल्ल युद्ध।
छाती पर मुष्टिक कर प्रहार, हो गये पवन सुत महा क्रुद्ध।।120।।

समझा निशिचर ने कपि अजेय, व्यर्थ लक्ष्य जो साधूंगा।
उचित नही संगर करना, अब ब्रह्म पास में बाँधूंगा।।121।।

ब्रह्म प्रतिष्ठा पालन में, बजरंगी बंधन में पाये।
सोचा देखूँ जा रावण को, इस हेतु बँधे ड्योढ़ी आये।।122।।

६. श्री हनुमान-रावण संवाद

कह लंकेस कवन तैं कीसा। केहि कें बल घालेहि बन खीसा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

कोलाहल मचा नगर व्यापी, अब तो आया कपि बन्धन में।
दौड़े रजनीचर बाल बृद्ध, सारे प्रसन्न हर्षित मन में।।123।।

श्रीराम भक्त ने कष्ट सहे, रघुनाथ काज में मन लाये।
अपमान मान तन भान त्याग, लंकेश्वर के सम्मुख आये।।124।।

जैसे कज्जल गिरि हो सदेह, भुज वीस भयंकर बैठा है।
दिकपाल विजेता महा असुर, अपने ही मद में ऐंठा है।।125।।

हँस के बोला कर अट्टहास, रे बन्दर बोल कहाँ का है
क्या सुना नहीं तूने मुझको, निर्भीक लंकगढ़ हाँका है।।126।।

किसके बल से बन्दर तूने, विध्वंस किया फल भी खाये।
तूने सब रक्षक भी मारे, रे बोल यहाँ कैसे आये।।127।।

रे शठ बन्दर सच सच बतला, लंकेश्वर ने मुँह यों खोले।
संत हृदय हनुमान बली, भारतीय संस्कृति में बोले।।128।।

हे लंकेश्वर मैं रामदूत, श्रीराम कृपा से आया हूँ।
भुक्षा ज्वाल भयंकर थी, इसलिये मधुर फल खाया हूँ।।129।।

क्रीडा में द्रुम डालें टूटीं, बन्दर सुभाव ही ऐसा है।
मारा मुझको रक्षक निशिचर, राजन यह निर्णय कैसा है।।130।।

अपनी रक्षा के लिये भूप, मैंने भी नोचा काट लिया।
हे वीर और विद्वान बेद, क्या उचित मुझे भी बाँध लिया।।131।।

बाँधा भी है परवाह नहीं, तुम जैसी ओछी चाह नहीं।
हे लंकेश्वर अपमान–मान, छिछले हैं कोई थाह नहीं।।132।।

इसलिये कह रहा मान त्याग, श्री राघवेन्द्र की शरण गहो।
सीता दे सन्धि करो राजन, यदि निशिचर कुल कल्यान चहो।।133।।

समझाने पर भी ओछ बुद्धि, कटुता से उत्तर देते हैं।
करते भी हैं बस वही कार्य, जो स्वयं लक्ष धर लेते हैं।।134।।

दुर्वचन बोलते तड़प उठा, रे बन्दर ज्ञान बताता है।
तू नहीं समझता मुझे मूर्ख, सारा अग जग भय खाता है।।135।।

७. लंकादहन एवं वापिसी

कपि कें ममता पूँछ पर, सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि, पावक देहु लगाइ।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

हो गई घोषणा मृत्यु दन्ड, मन्त्री गण लंका जन आये।
करत सभी अपमान कपी का, बाल बृद्ध गण सब छाये।।136।।

आ गये इसी क्षण महामंत्री, उनके समक्ष आया विचार।
बोले लंकेश्वर उचित नहीं, सम्मति बिन आज्ञा प्रसार।।137।।

दूत नीति होते अबध्य, यह न्याय नहीं अन्याय है घोर।
माना बन्दर अपराधी है, दीजिये दन्ड लख नीति ओर।।138।।

नय कोविद भक्त विभीषण की, बातों पर मिला समर्थन भी।
तत्क्षण निर्धारित मृत्यु दन्ड, उसमें आया पविर्तन भी।।139।।

प्रस्ताव बदल बोला रावण, बन्दर को अंग–भंग कर दो।
होती है प्यारी पुच्छ इन्हें, बन्दर को पुच्छ हीन कर दो।।140।।

आज्ञा पाते ही सब निशिचर, घृत वसन जोड़ने को धाये।
लग गये बाँधने पूंछ कपी, कौतूहल करके हर्षाये।।141।।

बजरंगी ने स्मरण किया, मैया छैया की रक्षा कर।
रघुनन्दन भक्त हृदय चन्दन, मेरे सिर पर कोमल कर धर।।142।।

तुमने कयाधु सुत को जलते, अंगारों बीच बचाया था।
लक्षागृह में भी रक्षा की, तुमने विष सुधा बनाया था।।143।।

स्फुरण हुआ दाहिना अंग, कपि अंग–अंग सब हर्षाया।
पूज्य पाद दिन मणि सुमिरे, विश्वास दास हिय में आया।।144।।

हो गया हुतासन चंदन सा, जल उठी पूँछ कपि आँच न थी।
श्रीराम काज में अग्निदेव, शर्माये रंचक राच न थी।।145।।

जलते ही निपकी ब्रह्मपास, चढ़ गया उछल कपि छज्जे पर।
देखो–देखो वह उछल गया, ड्योढ़ी द्वारे दरवज्जों पर।।146।।

डरपै सहमें सब पुरवासी, चल सकी न कोई और चाल।
धूँ धूँ जलते सब स्वर्ण महल, विकराल हाल ज्वाला कराल।।147।।

चिल्लाती महलों की रानीं, बिलखातीं पानी–पानी है।
'करुणेश' कृन्दना शोर मचा, ये बन्दर क्या हैरानी है।।148।।

आ गया पुत्र की रक्षा में, ले पवन साथ उनचास पवन।
ऊँची लपटें थीं लपक–लपक, धूँ–धूँ जलते सब लंक भवन।।149।।

चू रहे पिघलते स्वर्ण महल, चटकार मची पटकार मची।
हाहाकारी की हाय–हाय, गलियों के बीच गुहार लगी।।150।।

भूल गये वीरत्व वीर, रह गये देखते ज्वाल प्रबल।
लंक दाह कर राम भक्त, जा कूदा मध्य सिन्धु के जल।।151।।

श्री सीता के समीप जाकर, हनुमत ने नम्र प्रणाम किया।
माँ मुझे दीजिये चिन्ह वस्तु, जैसे मुझको श्रीराम दिया।।152।।

बेणी में बिधीं जटाओं से, सीता ने चूड़ा मणि खोली।
भरि आये दोनों कमल नेत्र, कपि से बिनम्र बाणी बोली।।153।।

करुणा निधि से कह देना कपि, यदि एक माह न आवेंगे।
तो निश्चित रजनीचर भय से, जीवित नहिं मुझको पावेंगे।।154।।

हनुमन्त लाल ने माता को, निशिचर विनाश का वचन दिया।
घनघोर गर्जना अट्टहास कर, लंका से प्रस्थान किया।।155।।

निर्मल बसुन्धरा अन्तरिक्ष, बहती सुरभित शीतल समीर।
आ रहे पवन सुत गगनपंथ, किलकिला उठे कपि सिन्धु तीर।।156।।

छाई बजरंगी मुखमन्डल, उल्लासपूर्ण हर्षित रेखा।
हो गया पूर्ण श्रीरामकाज, आते ही जामवन्त देखा।।157।।

दौड़े सब साथी ह्रदय मिले, रवि रूप सिद्धि मन कमल खिले।
श्री सीता दर्श कहानी कह, पहुँचे पम्पा तक शाम ढ़ले।।158।।

गर्जन तर्जन करते निनाद, किष्किन्धा के समीप आये।
मधुवन नामक नृप बगिया के, बिन आज्ञा फल सबने खाये।।159।।

पहुँचा पूरा दल ऋष्यमूक, राजे राघव सुग्रीव वीर।
रघुनन्दन चरनों का वन्दन, कपिपति अभिनन्दन बहा नीर।।160।।

ऊँचे प्रस्तर पर राजत हैं, युगल मूर्ति कौशल किशोर।
हो गये उपस्थित सभी वहाँ, जय कहा ऋक्षपति हाथ जोर।।161।।

सुनिये राघव मणि पवन पुत्र, सीता अन्वेषण कर आये।
रावण लंका दल अवगाहन, पुर भंजन कर शुभ यश पाये।।162।।

लंका ही क्या लंकापति की, छाती में बजा दिया डंका।
कर दलन दैत्य दल मर्दन कर, सम्पूर्ण जला दी है लंका।।163।।

श्रीराम अंक भर पवन पूत, सीता की कुशल क्षेम पूँछी।
बोले हनुमत सुनिये राघव, क्या कर सकती विपति छूँछी।।164।।

तुव नाम भक्त का रक्षक है, दुष्टों का बिषधर तक्षक है।
हे प्रभू आपका नाम राम, दुखियारों का संरक्षक है।।165।।

जो करें नाम का गीत गान, संभाव्य काव्य जो करते हैं।
निश्चित है हे रघुकुल मणि, वे भवसागर से तरते हैं।।166।।

सुनकर रघुवर के भरे अश्रु, हनुमत को अंक समेट लिया।।
तुझसे उऋण नहीं मैं सुत, एसा कह यह उपहार दिया।167।।

८. सैन्य प्रस्थान

तब रघुपति कपिपतिहि बोलावा। कहा चलैं कर करहु बनावा।
अब बिलंबु केहि कारन कीजे। तुरत कपिन्ह कहुँ आयसु दीजे।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

कपि पति सुकंन्ठ की आज्ञा से, किलकिलाकार ललकार हुई।
कपि यूथप यूथ असंख सजे, भालू सेना तैयार हुई।।168।।

बल में पावक से तेजवान, धरती पर धावक महावीर।
अवतार अंश सब देवों के, श्रीराम भक्त बन्दर शरीर।।169।।

देवमई भाषा सबकी, सब परम विवेकी नीतिवान।
रणधीर भयंकर भूधर से, युद्ध कुशल योद्धा महान।।170।।

मंत्रणा बताने में तत्पर, कपि पति के मंत्री हनूमान।
ऋक्षों के पति श्री धूम्रकेतु, इनके मंत्री थे जाम्वुवान।।171।।

नल–नील सुशिल्पी देवराज, अगणित असंख्य सेना अपार।
नभमंडल तक उड़ धूलि ध्वन्ध, हो गया दिवस में अंधकार।।172।।

पथ में पादप प्रस्तर असंख्य, तोड़ते फोड़ते मची भीड़।
पथ के अवरोध विदीर्ण हुये, डग मगी धरा ज्यों वस्त्र जीर्ण।।173।।

सरिता सर फाँदत लांघत हैं, कुछ उछल पहुँचते अंबर में।
कुछ धरा धाम में उछल कूद, हर एक कला हर बन्दर में।।174।।

युगुल कन्धों पर हनूमान, बिठलाकर कौशल राज किशोर।
चल पड़े पवन गति सैन्य साथ, ले गदा बढ़े सिन्धू की ओर।।175।।

छन्द

जयति जय सुकन्ठ कपिनाथ, चला दल विलग कभी सब साथ।
पंथ के भूधर भूमि उपाट्य, मचाते बन्दर गति उत्पात।।176।।

देख जलनिधि छाया उल्लाश, किया सागर के तीर निवास।
भालु कपि यूथप यूथ असंख्य, सभी ने किये सुनिश्चित बास।।177।।

९. मन्दोदरी–रावण संवाद

दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी। मंदोदरी अधिक अकुलानी।।
रहसि जोरि कर पति पग लागी। बोली बचन नीति रस पागी।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

जब से कपि लंका जला गये, तब से कुछ पुरजन असन्तुष्ट।
रावण के कृत्य विचारों से, कुछ हुये निशाचर बृन्द रुष्ट।।178।।

दसकंधर दम्भ भरा बेसुध, देखी आँखों से लंक ज्वाल।
घननाद अकंपन कुम्भकरण, रह गये देखते पीट भाल।।179।।

क्या होता व्यर्थ बखान किये, निर्भय कपि लंका जला गया।
प्रमदा भंजन हत अक्षय को, सम्पूर्ण नगर को हिला गया।।180।।

यह किंकर लघु सुग्रीव दूत, क्या होगा कपि दल आने से।
अब भी लंकेश्वर हो सचेत, फिर क्या होगा पछताने से।।181।।

लंकावासी जन मन विचार, पहुँचे मन्दोदरि कानों में।
पति चरन गेह बोली विनम्र, तन मन से पति समझाने में।।182।।

मत नाथ समझिये वनवासी, वे लीलाधर नारायण हैं।
श्री सीता जिसको हर लाये, ये काल रात्रि अनपायन हैं।।183।।

ये भृकुटि भंगिमा से सृष्टी, सारा ब्रह्माड जला देगी।
ये पारब्रह्म की महा ज्वाल, सातों समुद्र दहला देगी।।184।।

सीता को देकर प्राणेश्वर, जाकर रघुनन्दन चरण गहो।
शरणागत दीन दयालू हैं, लंका में निर्भय राज करो।।185।।

देखा उनका लघु किंकर ही, सम्पूर्ण नगर को जला गया।
प्रमदा वन को कर नष्ट–भ्रष्ट, प्रिय पुत्र अछय को मार गया।।186।।
तुमसे बातन में झुका नहीं, निर्भय था किंचित छुपा नहीं।
सीता से मिल उल्लास साथ, वापस जाने को रुका नहीं।।187।।

हे प्राणनाथ सोचो समझो, दे सिया सन्धि प्रिय कर लीजे।
राघव शरणागत प्रति पालक, मत निशिचर कुल को नष्ट कीजे।।188।।

सिख सुनते ही शठ तड़प उठा, नारी तू आखिर नारी है।
पृथ्वी साक्षी है अन्तरिक्ष, को मुझसे योधा भारी है।।189।।

अपने ही गुण गौरव गाता, भुजदण्ड ठोक उठ गया नीच।
मन में मन्दोदरी समझ गई, प्रीतम की आई निकट मीच।।190।।

१०. लंकेश की मंत्रणा

बूझेसि सचिव उचित मत कहहू। ते सब हँसे मष्ट करि रहहू।।
जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं। नर बानर केहि लेखे माहीं।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

आये भालू कपिदल असंख्य, छाये सागर तट मचा शोर।
हँस पड़ा दसानन अट्टहास, बोला दरबारी बृन्द जोर।।191।।

कहिये अपने मन के विचार, किस तरह शत्रु से लड़ा जाय।
सेनापति रखें प्रथम किसको, उस वनवासी से भिड़ा जाय।।192।।

मंत्रीगण बोले हाथ जोड़, त्रय लोक आपसे डरते हैं।
दिक पाल दैत्य सुर असुर सभी, करबद्ध प्रार्थना करते हैं।।193।।

जो आया सागर तीर कटक, दो चार दिवस हम खायेंगे।
लंका के सारे रजनीचर, होकर संतृप्त अघायेंगे।।194।।

है कौन भला इस सृष्टि बीच, जो लंकेश्वर को ललकारे।
रण में किन्नर गन्धर्व यक्ष, दुर्जेय वीर तुमसे हारे।।195।।

तल–वितल रसातल नागलोक, लंकेश्वर के भय से सशोक।
फिर क्यों नर कपि भालू का भय, लंकेश से कम्पित सभी लोक।।196।।

रावण के अनुकूल सभी, मिल गये निशिचरों के विचार।
लंकेश्वर सुन होकर विभोर, उठा गया बीस बाहें निहार।।197।।

११. विभीषण शरणागति

अवसर जानि विभीषनु आवा। भ्राता चरन सीसु तेहि नावा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

सन्ध्या को मंत्रि विभीषण भी, कुछ कहने को अपने विचार।
पहुँचा लंकेश्वर राज महल, पदपर्स भ्रातृवर को जुहार।।198।।

हे तात राम नहिं देव मनुज, त्रिभुवन पति श्री नारायण हैं।
कर्ता धर्ता अपहरत सृष्टि, रण कोविद वीर परायण हैं।।199।।

जिसने अजगव धनु कर विखंड, खरदूषण दैत्य विराध बधा।
बैर बढ़ाना उचित नहीं, उसके बल से त्रैलोक सधा।।200।।

आ गये उसी क्षण माल्यवंत, उसने भी आकर समझाया।
श्रीराम सुयश यश कीर्ति कथा, कह सन्धि को वाजिब ठहराया।।201।।

हे लंकेश्वर श्री राघवेन्द्र, नर नहीं प्रभू नारायण हैं।
सीता दे उनकी शरण जाव, वे शरणागत पारायण हैं।।202।।

तव बन्धु विभीषण नीति कुशल, वह सत्य कह रहा बात सुनो।
श्रेयस्कर होगी सन्धि नीति, लंकापति मेरी बात गुनो।।203।।

हेर विभीषण ओर घोर, बोला मम आश्रित जीता है।
रखता तपसिन से परम प्रीति, गाता उनकी यश गीता है।।204।।

इतना कह भक्त विभीषण के, छाती में चरन प्रहार किया।
निष्कासित लंका से करके, दुर्वचनों से अपकार किया।।205।।

निष्कासित भक्त विभीषण तब, आया सागर के पार इधर।
शरणागत वत्सल श्री रघुवर, बैठे थे भ्राता सहित जिधर।।206।।

रावण लघु भ्राता परिचय ले, रवि सुत भ्रत्यों ने लिया घेर।
तूँ कौन यहाँ कैसे आया, कर दिये अनेकों प्रश्न ढेर।।207।।

श्रीराम सुयश सुनि चरण शरण, आश्रित होकर मैं आया हूँ।
रावण से नीति की कही बात, उसके द्वारा ठुकराया हूँ।।208।।

सीता अपहरण किया उसने, भर गया घड़ा भारी अनीति।
झकझोर किया पद का प्रहार, कट गई हृदय से बन्धु प्रीति।।209।।

पापी का आया अंत समय, मैं समझ गया ली राम शरण।
अब तो उनके ही चरनों में, मेरा हो जीवन और मरण।।210।।

श्रीराम का रुख पा कपि दल तब, ले गये सामने रघुवर के।
प्रभु पाहि–पाहि कर चरन गिरा, छलके दृग प्रणतारत हरि के।।211।।

सम्मान सहित श्री राघव ने, शरणागत का सत्कार किया।
लंका का राज्य समर्पण कर, लंकाधिप कहकर तिलक किया।।212।।

१२. सिन्धुतरण

कह लंकेस सुनहु रघुनायक। कोटि सिंधु सोषक तव सायक।
जद्यपि तदपि नीति असि गाई। बिनय करिअ सागर सन जाई।।
(श्रीरामचरितमानस से)

कवित्त

सिन्धु तरण करके सैन्य जाये कस लंका में,
राघव प्रश्न करते कहो कुछ तो बताइये।
शरणगत विभीषण भक्त मन की परीक्षा लेत,
जानत सर्वज्ञ कहें कोई तो समझााइये।।
सागर अपार जलराशि को निहारत सब,
संकुल जल जन्तु घोर देखत भय खाइये।
कहते विभीषण प्रभु सुनिये करबद्ध कहूँ।
विनती सुनाय प्रथम सिन्धु को मनाइये।।213।।

सुनकर विभीषण वाक्य लखन लाल बोल पड़े,
क्षात्र धर्म वाले कभी आश्रय नहीं करते हैं।
रघुकुल आदर्शों को पीछे धकेलें आज,
विनय करें सागर से तब तो हम डरते हैं।।
याचक बन याचें आज मार्ग जड़ सागर से,
जड़ भी कहीं दाता बन दान किया करते हैं।
मेरा उद्देश्य सिर्फ मार्ग मांगने का है,
न दे तो धुनष उठा युद्ध किया करते हैं।।214।।

छन्द

जलधि जड़ होता नही विनम्र, नहिं देगा मांगे से पंथ।
जड़ों से भी नम्रता उचित, यही कहता समाज सद्ग्रन्थ।।215।।

हमारे कपि दल शक्ती साथ, सहायक आप नाथ सिरमौर।
पश्रिम करना मानव धर्म, सफलता चूमेगी पद दौर।।216।।

सिन्धु से करते अनुनय विनय, तीन दिन बीते श्री रघुनाथ।
लखन की सीख समाने हुई, उठाया धनुष लिया सर साध।।217।।

सिन्धु उर ज्वाला उठी प्रचन्ड, विप्र बन आया रघुवर पास।
क्षमा करिये मैं हूँ जड़ जलध, समन करिये प्रभु मेरी त्राश।।218।।

आपके दो शिल्पी नल–नील, किये स्पर्श तरे पाषाण।
सेतु का श्रृजन करे वे स्वयं, उन्हें ये प्राप्त पूर्व वरदान।।219।।

बुलाये यूथप यूथ अनेक, कपीश्वर हर्षाया सुग्रीव।
कहा तब कपि दल बल को टेर, बीरवार लोहा लेव अतीव।।220।।

भालु कपि उठो लगाओ जोर, लाइये प्रस्तर पर्वत खींच।
विन्ध्य हिम अरावली पामीर, श्रेणियाँ लाओ सभी समीप।।221।।

मध्य भारत पूर्वांचल गये, सभी ने साहस किया अटूट।
सेतु सम्पूर्ण हुआ निर्माण, पास अब लगता लंक त्रिकूट।।222।।

दोहा :–

रघुवर का सुन्दर चरित, मनन करैं जो लोग।
दुख दारिद सब दूर हों, मिट जावें भव रोग।।223।।

सुन्दर काण्ड समाप्त

श्रीगणेशाय नमः

श्रीराम कथा

लंका काण्ड

१. श्री रामेश्वर स्थापना

परम रम्य उत्तम यह धरनी। महिमा अमित जाइ नहिं बरनी।।
करिहउँ इहाँ संभु थापना। मोरे हृदय परम कलपना।।

(श्रीरामचरितमानस से)

छन्द

प्रथमतः सेना चलते समय, किया शिव स्थापन श्रीराम।
सिन्धु बालू से थापा लिंग, अर्घ पूजन अर्चन अभिराम।।1।।

जाप मृत्युंजय मंत्र सहस्र, वन्दना महिमन का स्त्रोत।
बिल्बदल पंच पाद्य स्नान, शिवार्चन किया वेद वेदोक्त।।2।।

पूज्य गिरिजा गणेश अभिवन्द्य, शंख ध्वनि त्रिपुरारी का नाम।
हुआ भक्तों हित तारन तरन, पूज्य श्री रामेश्वर का धाम।।3।।

नीर जो गंगोत्री से ल्याय, चढ़ायेंगे रामेश्वर आय।
प्राप्त कर भुक्ति मुक्ति सायुक्ति, ओघ अघ जीवन का घुल जाय।।4।।

शम्भु से पाया आशीर्वाद, सैन्य सब हुई सिन्धु उस पार।
हुआ नभ व्यापी घोर निनाद, मचा लंका में हाहाकार।।5।।

२. मन्दोदरी प्रार्थना

मंदोदरीं सुन्यो प्रभु आयो। कौतुकहीं पाथोधि बँधायो।
कर गहि पतिहि भवन निज आनी। बोली परम मनोहर बानी।।

(श्रीरामचरितमानस से)

छन्द

कपि सैन्य सिन्धु तट आई, सुनि मन्दोदरी घबडाई।
पति चरण पर्श के बोली, मृगलोचनि अश्रु बहाई।।6।।

हे नाथ राम नहि नर हैं, जगत्राता विश्वंभर हैं।
कालुहु के काल भयंकर, वे शिव से प्रलयंकर हैं।।7।।

प्रिय बैर न उनसे कीजे, कर सन्धि जानकी दीजे।
अहिबात बचेगा मेरा, सिख मान शरण गह लीजे।।8।।

रघुवीर प्रणत अनुरागी, उनके भक्त बनो बड़भागी।
रघुनायक परम दयालू, कहते हैं सन्त विरागी।।9।।

जो रहते राम सहारे, होते जन–जन के प्यारे।
कर सन्धि बनो शरणागत, मैं परती चरन तुम्हारे।।10।।

मैं बार–बार समझाऊँ, जोरे युग पाणि मनाऊँ।
हठ छोड़ों प्रीतम प्यारे, दुख कैसे तुम्हें दिखाऊँ।।11।।

बोला हँस के सुन प्यारी, नारी आखिर तूँ नारी।
क्यों इतना भय तूँ करती, है को मो सम बलधारी।।12।।

मैंने कैलाश उठाया, यम जीत लंक मैं लाया।
धनदेव जीत कर देखो, पुष्पक विमान ले आया।।13।।

श्वेत कर्ण सब घोड़े, वरुण देव के जीते।
अग्नि काँपता भय से, देवाधि देव भयभीते।।14।।

रणधीर बीर सुत तेरा, प्रिय कुम्भकर्ण लघु मेरा।
त्रयलोक कांपता मुझसे, क्यों तुझको भय ने घेरा।।15।।

मुझको समुझाने आये, ब्रह्मादिक शिव को लाये।
कर सन्धि सीय न दूँगा, वनवासी विजय न पाये।।16।।

३. प्रहस्त का समझाना

सब के बचन श्रवन सुनि, कह प्रहस्त कर जोरि।
नीति बिरोध न करिअ प्रभु, मंत्रिन्ह मति अति थोरि।।

(श्रीरामचरितमानस से)

छन्द

आ गये सैन्य सेनाधिप, निशिचर सेना के नायक।
बलधीर विजेता त्रिभुवन, ज्ञानी ध्यानी सब लायक।।17।।

आकर पद गहे पिता के, कर विनय कही मृदु बानी।
हैं आप वेद विद ज्ञाता, संग्राम विजेता ज्ञानी।।18।।

जो कहता हूँ वह सुनिये, सब हैं यथार्थ स्वर मेरे।
भ्रम में सब डाल रहे हैं, जितने भी संविद तेरे।।19।।

जो कहते कपि दल आया, हम नोंच खोंच खायेंगे।
भूखे सारे रजनीचर, भर पेट मांस खायेंगे।।20।।

मैं प्रश्न कर रहा सबसे, उस दिन ये क्षुधा कहाँ थी।
जब बानर लंका जारी, सब सेना भी तो यहाँ थी।।21।।

प्रमदावन सभी उजाड़ा, अक्षय भाई को मारा।
उस वक्त कपिन्द्र बली को, बोलो किसने ललकारा।।22।।

मत पिता समझना कादर, मैं लंका सेनाधिप हूँ।
देखे मैंने सब संगर, पर राम समर से नत हूँ।।23।।

जिससे तुम भी भय खाते, वह किष्किन्धा का बाली।
जिसको वनवासी कहते, वह बाली का भी काली।।24।।

इससे कर जोर मनाऊँ, मत वैर राम से कीजे।
उनकी पत्नी सीता को दे, नाथ सन्धि कर लीजे।।25।।

सुन तड़प उठा दसकंधर, गर्जन करके ललकारा।
रे नीच नजर से हट जा, किसने तपसी भय डारा।।26।।

४. लंकेश-मानमर्दन

क्षत्र मुकुट ताटंक तब, हते एकहीं बान।
सब कें देखत महि परे, मरमु न कोऊ जान।।

(श्रीरामचरितमान से)

तर्ज राधेश्याम

प्राची में बिखरी स्वर्ण प्रभा, अम्बर तल से छिति–छोरों में।
सागर लहरों में आलोकित, लहराती पवन झकोरों में।।27।।

लंका के स्वर्ण कँगूरों में, निशि नायक फैली स्वर्ण किरण।
गिरवर त्रिकूट की श्रृगों में, छाई पीली सी ज्योतिर्घन।।28।।

त्रण सैया पर करुणा निधान, पौढ़े लख चन्द्र बताते थे।
शशि में देख कालिमा अंक, प्रश्न करत मुसक्याते थे।।29।।

अपना–अपना अनुमान कहें, शशि मध्य कालिमा कैसी है।
अपनी मति से सब बतलाते, समझाया जो भी जैसी है।।30।।

सुग्रीव कहा हे राघव मणि, शशि मध्य भूमि परछाई है।
लंकेश बताया चोट प्रभू, यह वही नीलमा आई है।।31।।

हनुमत बोले श्रीराम सुनो, यह श्याम आपका ध्यान प्रभो।
भक्त चाँद उर अन्तर में, यह चिन्ह श्याम स्थान प्रभो।।32।।

फिर ध्यान प्राचि दिशि ओर गया, देखा काला भूधर सा घन।
चमचम विद्धुत की चमक प्रभा, मंद–मंद गर्जन मृदु धुन।।33।।

प्रभु भक्त विभीषण से पूँछा, घिर आया भादों जैसा घन।
देखो दामिन की चपल दमक, सुनिये नभ मंद मंद गर्जन।।34।।

हँस कहा विभीषण हे राघव, घन नहीं नाथ ये रावन है।
दामिनी नहीं ताटंक प्रभा, मयतनया कर्ण सुहावन है।।35।।

संगीत हो रहा अखाड़े में, बज रहे वाद्य तवले मृदंग।
नभ गर्जन सी होती प्रतीत, हो रही कौंध स्फुरण अंग।।36।।

सुन अहंकारमय वाक्य प्रभू, लेकर सायक संधान किया।
कर छत्र मुकुट ताटंक भंग, ऐसा आश्चर्य विधान किया।।37।।

५. अंगद-रावण संवाद

नीक मंत्र सबके मन माना। अंगद सन कह कृपानिधाना।
बालितनय बुधि बल गुन धामा। लंका जाहु तात मम कामा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

तारक मालायें अस्त हुईं, भू पर छाया रवि किरण जाल।
रघुकुलमणि जागे प्रातसमय, हर्षाये वन वीरुध तमाल।।38।।

लोकतंत्र की तरह मंत्रणा, को सुकन्ठ व जामवन्त।
किस तरह युद्ध प्रारम्भ करें, सब आयें बतलाये तुरन्त।।39।।

श्री जामवन्त बोले रघुवर, हैं आप चराचर के ज्ञाता।
दे रहे बड़प्पन व्यर्थ हमें, हम आज्ञा पालक अनुज्ञाता।।40।।

पूछा तो अपनी नीति कहूँ, हम दूत भेजकर बात करें।
सीता देकर यदि सन्धि करे, यह रावण को आगाह करें।।41।।

जामवन्त ने पुनः कहा, प्रभु मेरा यह अपना विचार।
लंकेश्वर को सूचित कर दें, सम्प्रेषित कर बाली कुमार।।42।।

स्वीकार किया रघुवीर मंत्र, सब सम्मति का सहयोग मिला।
शिरोधार्य कर बालि पुत्र, श्रीराम दूत वन वीर चला।।43।।

स्फुरण हुए सब रोम अंग, हर्षायमान मोदित शरीर।
ले गदा प्रफुल्लित पुच्छ उठा, निर्भीक चला ज्यों राम तीर।।44।।

करते ही लंकापुर प्रवेश, रावण का बेटा मिला एक।
उस जैसे ही क्रीडा करते, निशिचर बालक साथी अनेक।।45।।

हो गया उसी से वाक्य युद्ध, दौड़ा वह करने पद प्रहार।
अंगद ने पकड़ा वही पैर, पटका धरती पर दे पछार।।46।।

उसके मरते ही भगे सभी, मच गई वहाँ हाहाकारी।
आया कपि जिसने सर्वप्रथम, उद्यान तोड़ लंका जारी।।47।।

अंगद मतवाले गयन्द की, चाल अभय मन जाते थे।
बिन पूछे ड्योढ़ी का रास्ता, उठ उठ कर सभी बताते थे।।48।।

रावण से बोला द्वारपाल, प्रभु आया ड्योढ़ी इक बन्दर।
उसने आज्ञा दी बन्दर को, ले आओ मम समक्ष अन्दर।।49।।

अंगद ने देखा रावण को, कज्जल गिरि जैसे हो सप्रान।
भुजबीस भयंकर ताड़ वृक्ष, रोमावलि जैसे सघन ब्राण।।50।।

नासिका कान गिरि खन्धर से, दस आनन जैसे उच्चश्रृंग।
विकराल भयंकर रौद्ररूप, विस्तृत देखे प्रत्येक अंग।।51।।

बोला रावण तू कौन यहाँ, बन्दर क्यों ऐसे आया है।
अंगद बोले मैं बालि पुत्र, रघुवर मे मुझे पठाया है।।52।।

तू तात मित्र इसलिये यहाँ, तुझको समझाने आया हूँ।।
सीता देकर प्रभु शरण गहो, यह उचित संदेशा लाया हूँ।।53।।

लंकेश साथ ले सीता को, शरणागत होकर जाओगे।
कर देंगे सब अपराध क्षम्य, उनसा दयालु न पाओगे।।54।।

रे मूर्ख बोलता नहीं सम्हल, तू नहीं समझता मुझे कीस।
मैं विश्व विजेता रावण हूँ, जाऊँ क्या मर्कट कटक बीच।।55।।

क्या नाम जनक का है तेरे, क्या रही मिताई बोल कहाँ।
तू मीत प्रीत चर्चा लेकर, आया कैसे सब खोल यहाँ।।56।।

मैं वही बाल का बेटा हूँ, जिसकी कक्षा तू दबा रहा।
छठ मास तलक कुछ कर न सका, हो पराधीन यों चपा रहा।।57।।

क्या सच तू बन्दर बोल रहा, तू वही बाल का बालक है।
है शर्म दूत वनवासी का, मैं समझा तू कुल घालक है।।58।।

पितु धाती का सेवक बन तू, बाली का गौरव बोर दिया।
बेहद बेशर्मी कर बन्दर, आन बान तृन तोर दिया।।59।।

सुर मुनि विरंच शिव शेष सभी, जिसकी सिवकाई करते हैं।
तुझसे सिवकाई के विहीन, जीते जी जग में मरते हैं।।60।।

शठ नीति–प्रीति सब ज्ञाता हूँ, इसलिये वाक्य कटु सहता हूँ।
बकवास त्याग तू मौन रहे, कल्याण इसी में कहता हूँ।।61।।

तू कितना नीत विशारद है, कर रहा नारियों की चोरी।
अपने मुख करता बड़ी बात, विपरीत हुई बुद्धी तोरी।।62।।

मैं धर्मशीलता सब तेरी, सब जान रहा पर नारि चोर।
कर मुनि पुलस्त का धर्मनष्ट, बन रहा धर्म ध्वज बीर घोर।।63।।

नाक कान बिन बहिन हुई, कर दिया क्षमा तू धर्मशील।
तेरे दर्शन कर धन्य हुआ, तू दृढ़ता का स्तम्भ मील।।64।।

क्या बकता है कपि इधर देख, कैलाश उठावन भुज मेरे।
सारा कपि दल मथ डालूँगा, कुछ कर न सकें तब प्रभु तेरे।।65।।

देखा सारा कपिदल तेरा, है कौन वीर योद्धा तू कह।
सुग्रीव कूलद्रुम तुम दोनों, है अनुज भीरु जायेगा ढ़ह।।66।।

जामवन्त भी बृद्ध हुआ, डरते हैं मुझसे वनवासी।
है एक वीर जारी लंका, बस उसमें है हिम्मत खासी।।67।।

सचमुच रावन तेरी लंका, छोटा वह धावक जार गया।
वह कपि सुकन्ठ का धावक है, जिससे तेरा दल हार गया।।68।।

रे रावन जग रावन कितने, तूँ बोल कौन सा रावन है।
इक रावन जिसको बलि बाँधा, इक सहस बाहुपद ध्यावन है।।69।।

क्यों बकता रे कपि व्यर्थ वाक्य, ऐरावत दन्त बिदारक हूँ।
गणपति को करके एक रदन, दूसर दन्त उद्धारक हूँ।।70।।

शम्भु सहित कैलाश उठा, मेरे विशाल भुजदण्ड देख।
बनवासी के लघुतर किंकर, ऐसा वैसा मत मुझे लेख।।71।।

सुनते ही अंगद तड़प उठे, धरती में भुजा ठोक बोले।
डगमगा उठी लंकेश सभा, महि डगमगान दिग्गज डोले।।72।।

कैलाश उठाने वाले शठ, मेरा ही पैर उठा दे तूँ।
कर रहा प्रशंसा भुजा व्यर्थ, देखूँ साहस दिखला दे तूँ।।73।।

भट सुभट महाभट दारुण भट, आयें मम चरन उठाये तो।
रे पैर उठाना दूर रहा, धरती से तनक छुड़ाये तो।।74।।

स्मरण किया श्री राघव का, अंगद ने भीषण कोप किया।
प्रण करके लंकेश्वर समक्ष, सभा बीच पद रोप दिया।।75।।

सम्पूर्ण सभा को लज्जित कर, गर्जन करता वापस आया।
करुणेश बाँकुरा बालि पुत्र, श्रीराम चरन मस्तक नाया।।76।।

६. मन्दोदरी का रावण को समझाना

साँझ जानि दसकंधर, भवन गयउ बिलखाइ।
मंदोदरीं रावनहि, बहुरि कहा समुझाइ।।

(श्रीरामचरितमानस से)

गीत

साँझ को गयो दसानन भवन, व्यर्थ अपने बलबूते मगन।
चरन गहि रोई रानी, नाथ क्या बुद्धि नशानी।।77।।

रामानुज ने रेख खिंचाई, तुमने नाँघ न पाई।
तुम्हें देखते लंक नगर में, कपि ने आग लगाई।।
कौतुक में बाँध्यो उन सागर, तब भी समझ न आनी।
नाथ क्या बुद्धि नशानी।।78।।

प्रमदा वन उजाड़ के सारे रक्षक बल संहारे।
कपि केहरि अक्षय सुत मारा तब भी गर्व तुम्हारे।।
व्यर्थ बजाना गाल सुनो पति बनो न अब अज्ञानी।
नाथ क्या बुद्धि नशानी।।79।।

सूर्पनखा की गति तुम देखी, खर दूषण गये मारे।
बालि बिराध कबंध हते सब कपि दल आया द्वारे।।
उनने दूत भेज अंगद को सन्धि करन की ठानी।
नाथ क्या बुद्धि नशानी।।80।।

व्यर्थ हुआ कैलाश उठाना कपि पद सके न टारी।
हार गये भटवीर महाभट, बैठे हिम्मत हारी।
सीता देकर सन्धि कीजिये विनती करौं तुम्हारी।
नाथ क्या बुद्धि नशानी।।81।।

तर्ज राधेश्याम

हे पति चाहो यदि शान्ति–सुधा, तो घमंड की बात त्याग दो
फल लेना यदि इस शरीर का, इन्द्रिय मन चित बुधि सम्हाल लो।।82।।
अमरत्व का अमृत पीना तो, रघुवर चरणों में शीश डाल दो।
यदि चहो लंक कल्याण प्रभो, व्यर्थ झूँठ अभिमान त्याग दो।।83।।

७. युद्ध प्रारंभ

उत रावन इत राम दोहाई। जयति जयति जय परी लराई।
(श्रीरामचरितमानस से)

अंगद से पाकर समाचार, रघुनाथ निकट आया कपीश।
मंत्रणा हुई ऋक्षेश सहित, अब क्या होना चाहिए महीश।।84।।
लंका गढ़ में हैं चार द्वार, किस द्वार करें अपना प्रसार।
कपि सैन्य चार भागों में कर, घोषणा करें करिये विचार।।85।।
ऋक्षेश कपीश्वर लंकेश्वर, सुमिरे दिनकर मणि कुलभूषण।
कर अनी चार भागों में दल, जोड़े सेनापति यूथप बन।।86।।
कहि प्रभु प्रताप बल बार–बार, अन्याय न हो यह समझाया।
गर्जा दल करके सिंहनाद, दौड़ा दल लंका गढ़ आया।।87।।
गर्जे तर्जे सब भालू कपि, जय राघवेन्द्र सुग्रीव बली।
प्रेरित प्रताप प्रभु हो निशंक, रघुवर चरनों की धूलि मली।।88।।
कोलाहल कपि दल बल का जब, दसकंधर कानों में छाया।
बोला प्रहस्त सेनापति से, लगता है कपिदल चढ़ आया।।89।।
कर रहे ढिठाई बन्दर सब, निशिचर सेना को बुलवाओ।
सेना है मेरी क्षुधा वन्त, कह दो वीरों बीनो खाओ।।90।।

हँस पड़ा भयंकर अट्टहास, घर बैठे ही भोजन आया।
दौड़ो चारों दिशि सब निशिचर, आज्ञा पाकर रिपुदल छाया।।91।।
गहि भिन्डिपाल तलवार तेग, तोमर मुग्दर फरसा प्रचन्ड।
कोई प्रस्तर पादप उखाड़, कोइ लिये शैल का उठा श्रृंग।।92।।
बज गया जुझाऊ ढोल लंक, वीरों में जागृत हुआ चाव।
कादर उर काँप रहे थर–थर, हो रहा व्याप्त भय का प्रभाव।।93।।
दौड़ते न जानै घाट बाट, कपि नोंच नखों से दन्त काट।
लाशों से रंचित हुई धरा, निशिचर लाशों पर लाश पाट।।94।।
धसकाते लंका स्वर्ण महल, मच गई नगर में चहल पहल।
काटैं नोचैं कपि भालु सभी, फैला लंका में कठिन कहर।।95।।
मर्कट भालू घर कुधर खन्ड, मारें निशिचर कुल पर प्रचंड।
कायर भागे रण छोड़ छोड़, कपि बने भयंकर मार्तन्ड।।96।।
महाँ–महाँ मुखिया पकड़े, सब पूंछ बाँध करके जकड़े।
फेंके समेट कर पटक–पटक, गत प्रान करें बैठे अकड़े।।97।।
रोते हैं बालक नर–नारी, देते हैं रावण को गारी।
यह नीच घोर अपराधी है, हर लाया शठ अबला नारी।।98।।
अस्तांचल को दिनमणि ढुलके, मर्कट भट भालू सभी फिरे।
बतलाते रण का समाचार, श्री रघुनन्दन के चरन परे।।99।।

८. श्री लक्ष्मण–मेघनाद युद्ध

लछिमन मेघनाद द्वौ जोधा। भिरहिं परस्पर कर अति क्रोधा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

श्री रघुनन्दन पद प्रेम संत, बोला आ करके मालवंत।
हे लंकेश्वर देखा तुमने, कपि दल का विपुला बल अनन्त।।100।।
अब भी सचेत हो आँख खोल, श्री राघवेन्द्र जयकार बोल।
देकर सीता को संधि करो, रण बंद कराओ बजा ढ़ोल।।101।।

सुनते ही तड़प उठा निशिचर, बक्र दृष्टि कर क्रुद्ध नजर।
बोला हठ जा शठ महलों से, तू भी तपसी चरणों में गिर।।102।।

आ गया महाभट मेघनाद, अभिमान भरा छाया प्रमाद।
मैं आज दिखाऊँ रण कौशल, संहार करूँ कपि दल विशाद।।103।।

छन्द

धसे धरती टूटे आकाश, घोर रण धाबा करूँ प्रचण्ड।
करूँगा रक्त रंजिता धरा, हमारी लंका रहे अखंड।।104।।

बन्दनी माँ का सोच स्वरूप, इधर था क्रोधित कपी सुकन्ठ।
खौलते अंगद व नल नील, वीरवर योद्धा द्विबिद मयंन्द।।105।।

त्रय लोक ख्याति मैं इन्द्रजीत, श्रृष्टि में है मेरा भय व्याप्त।
मैं आज दिखाऊँ रण कौशल, यदि स्वयं लड़े यम साक्षात।।106।।

गूँजी तुरही बज गये शंख, हुआ दो तरफा केहरि नाद।
लड़े भट सुभट भयंकर कपी, चढ़ा रण चण्ड़ी को उन्माद।।107।।

दसानन राम सैनिकों मध्य, हुआ प्रारम्भ भयंकर युद्ध।
धरा खासी लाशों से पटी, युद्ध में बीर हुये सब कुद्ध।।108।।

धनुष ले इन्द्रजीत आ गया, निशाचर सेना थी बेजोड़।
धरा अम्बर बाणों से पाट, करी सब बाण सहस्रों छोड़।।109।।

राम ने कहा लषन तुम जाव, दसानन सुत योद्धा बरबाहु।
सम्हालो कपि सेना को लषन, बढ़ाओं जाकर दल उत्साहु।।110।।

तर्ज राधेश्याम

भिड़ गये सुमित्रा के नन्दन, था इन्द्रजीत भी तरुण व्याघ्र।
दोनों रण कौशल में प्रवीण, चल रहे परस्पर शस्त्र साध।।111।।

बजरंग जिसे लेते लपेट, जो पड़ जाता अंगद चपेट।
जिस ओर बढ़ा सुग्रीव बली, हो गई वहीं पर मृत्यु भेंट।।112।।

वीर घातनी शक्ती ले, घननाद लषन पर वार किया।
लगते ही शक्ति गिरे लक्ष्मण, गिर गया युद्ध का एक दिया।।113।।

सन्ध्या होते बाहिनी फिरीं, लौटे अपने स्थल आये।
लग गये सभी संख्या करने, पर लक्ष्मण नहीं नजर आये।।114।।

तब तक बजरंगी हनूमान, कन्धे पर लाये लछमन को।
रोये करुणाकर करुणा कर, देखा घायल जब प्रिय जन को।।115।।

हनुमंत बैद्य आज्ञा पाकर, बूटी संजीवनी ले आये।
बूटी आने पर बीर बन्धु, चैतन्य अवस्था में पाये।।116।।

९. कुम्भकरण वध

नाथ भूधराकार सरीरा। कुंभकरन आवत रनधीरा।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

जब सुन पाया लंकेश्वर ने, चैतन्य हुये लछमन कुमार।
व्याकुल विशाद में डूब गया, करने लगा चिन्ता अपार।।117।।

बिलखाता पछताता पहुँचा, लघु भ्राता के भव्य भवन।
देखा पहाड़ सा है सोता, दैत्य भयंकर कुम्भकरन।।118।।

कर यत्न जगाया निशिचर को, लंका का विप्लव समुझाया।
हे वीर उठो अब समय पड़ा, इसलिये जगाने मैं आया।।119।।

अतिकाय अकम्पन दुर्मुख सब, योद्धा वनवासी ने मारे।
लंका के महा–महा जोधा, कपि दल भालू ने संहारे।।120।।

दसकन्धर के सुन वचन वज्र, बिलखाया बोला कुम्भकरण।
अपहरन किया जगजननी का, होगा निश्चित अब लंक पतन।।121।।

नारद ने मुझसे बहुत पूर्व, बतलाया था सारा प्रकाश।
जब रावण सीता हरण करे, तब होगा लंका का विनाश।।122।।

क्या होगा पश्चाताप किये, मैं युद्धस्थल में जाता हूँ।
श्रीरामचन्द्र के दर्शन कर, अपना कर्तव्य निभाता हूँ।।123।।

छन्द

किया श्रोणित मदिरा का पान, गर्जना करके वज्र समान।
भूधराकार भयंकर रूप, देखते ही कपिदल भयभान।।124।।

चला करके दहाड़ मदमस्त, कपी दल भगदड़ सी मच गई।
सिंह सा झपट पटकता कीस, खोल मूं सैन्य चवेना मई।।125।।

नील नल द्विविद गवय गयन्द, अजंनी सुत बर बीर भयंन्द।
श्वेत कपि जाम्बुवान कपिकद्र, दौड़ के धरे अरिन्द गिरिन्द।।126।।

मसल देता अंगों में मर्द, सैन्य सब हताहत हो गई।
हुये हत आस मिटा उल्लास, परस्पर कहैं मृत्यु अब भई।।127।।

भगे भालू कपि सेना साथ, गये श्री रघुनंदन के पास।
बचालो कुम्भकरण से नाथ, हमारा सम्यक हुआ विनाश।।128।।

तर्ज राधेश्याम

उठो राम अब समरांगण में, स्वयं देखिये खल का दम्भ।
खण्डित करिये हे रघुनन्दन, दम्भी कुम्भकर्ण का कुंभ।।129।।

छन्द

चले श्रीराम उठा कोदन्ड, मृत्यु सा है जिनका आमर्ष।
निकलते ही सर हुये सहस्र, सहत्र से अगणित कई सहत्र।।130।।

हस्त लाघव व सरसंधान, राम की दिव्य कला बेजोड़।
सराहा कुंभकरण ने स्वयं, राम की ओर हेर मूँ मोड़।।131।।

अबनि अम्बर नाचे नाराच, रहे खल मृत्यु परायण बांच।
देखते नभ मण्डल से देव, राम की युद्धकला दस पाँच।।132।।

क्रोध कर कुंभकरण बलवान, राम पर दौड़ा लिये त्रिशूल।
रौद्र वपु देख धरा डगमगी, गये कपि भालु वीरता भूल।।133।।

भुजायें खंड–खंड कर राम, रुन्ड बिन किया दुष्ट का मुन्ड।
मुन्ड हो लुढ़क–लुढ़क रणभूमि, दबायें भालु कपी के झुण्ड।।134।।

दैत्य की निकली अंतर ज्योति, समानी राम हृदय में आय।
हुई नभमंडल से जयकार, मिली सायुज्य मुक्ति हर्षाय।।135।।

तर्ज राधेश्याम

मृत कुम्भकरण सुनि दसकंधर, करुणा कृन्दन करता अपार।
गाता भाई वीरत्व शौर्य, हा बन्धु–बन्धु करता पुकार।।136।।

जब भी भाई पर हुई विपत्ति, हर दम तुमने था दिया साथ।
युद्ध में दाहिन भुजा बनें, प्राण दिए भाई के नात।।137।।

दाहिनी भुजा बन कुम्भकरण, आकर प्राणों पर खेल गये।
बचपन से अबतक भैया तूँ, साथ दिया दुख झेल गये।।138।।

१०. मेघनाद वध

रामानुज कहँ रामु कहँ, अस कहि छाँडेसि प्रान।
धन्य धन्य तव जननी, कह अंगद हनुमान।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

हो रहा जिस समय बन्धु विकल, आ गया उसी क्षण मेघनाद।
आपत्ति समय हे लंकापति, रोना गुणगाना व्यर्थ बाद।।139।।

कल संन्ध्या के पूर्व देखना, दिखाऊँ दुश्मन को रण रंग।
बिछा दूँ खन्ड मुन्ड कपि कुन्ड, पकड़ भालू बन्दर के झुन्ड।।140।।

जो स्यन्दन वर में प्राप्त किया, लेकर उसको रण जाऊँगा।
जो देखा नहीं आज तक बल, कल उस बल को दिखलाऊँगा।।141।।

प्रातः माया रथ में सवार, ले अस्त्र शस्त्र आकाश गया।
गर्जन करता शठ अट्टहास, कर शक्ती अर्न्तध्यान भया।।142।।

किये विबिध विधि के प्रहार, हो गया दिवस में अंधकार।
धर मार–मार कर शब्द सुने, अज्ञात कौन करता प्रहार।।143।।

नल नील द्विविद योधा गयंन्द, बाहुक मयन्द श्वेता प्रधान।
हो गये शिथिल मूर्छित घायल, दौड़े ले अंगद हनूमान।।144।

सौमित्र सहित अंगद हनुमत, देखी मायावी युद्ध प्रगति।
तीनों राघव पद बन्द चले, अब करने को निशिचर दुर्गति।।145।।

छन्द

लषन सर संन्धाना कोदण्ड, अग्नि सर ज्वाला उठी प्रचन्ड।
मिटे जो रवि किरणें से अन्ध, मिटा सब मायावी बित्तन्ड।।146।।

तर्ज राधेश्याम

ललकार उठे रे मायावी, क्यों करता माया का प्रसार।
तेरा भी आया अंत समय, बोले लक्ष्मण शठ को प्रचार।।147।।

कर शौर्य प्रदर्शन रण सम्मुख, लुक छुप लड़ना यह कायरपन।
रणनीति यही है मायावी, सम्मुख आ सच्चा योद्धा बन।।148।।

आया इस अन्तर जामवन्त, घनघोर श्रृंग प्रस्तर मारा।
छाती में मुष्टक कर प्रहार, रथ विरथ किया हय संहारा।।149।।

शठ वर प्रसाद से मरा नहीं, लंका में वापस फेंक दिया।
मुर्छा जागी तब शर्माया, उठ अभय दायिनी यज्ञ किया।।150।।

यह राज विभीषण ने आकर, श्री राघवेन्द्र को समझाया।
देवी निकुम्भिला सिद्ध इसे, यदि सिद्धयज्ञ तो बल पाया।।151।।

लंकेश विभीषण कपि दल ले, लछमन समेत मिलकर आये।
यज्ञस्थल करके छिन्न–भिन्न, कपि वीर पकड़ बाहर लाये।।152।।

खल दौड़ पड़ा लेकर त्रिशूल, श्रीराम अनुज आगे आया।
कपि देख रूप भयभीत हुये, भय छटा घिरी उर भय छाया।।153।।

मारुति सुत अंगद बीर बढ़े, कपिवर सुकन्ठ व जामवन्त।
करते प्रहार द्रुम शिलाखंड, थी घोर गर्जना दिक् दिगंत।।154।।

स्मरण कौशलाधीश किया, लक्ष्मण ने छोड़े सर कराल।
हुँ करते धनु टंकोर हुई, सर छूटे जैसे महाकाल।।155।।

लागे वक्षस्थल तीक्ष बाँण, खल का कृत कौतुक छूट गया।
मरते दम बोला हा लछमन, गर्जा अंतर बल टूट गया।।156।।

गिर गया धरा पर इन्द्रजीत, मूल कटे ज्यों वृक्ष गिरा।
गत प्राण उठाया पवन पुत्र, रख लंक द्वार में वीर किया।।157।।

११. रावण का शॉक

सुत बध सुना दसानन जबहीं। मुरुछित भयउ परेउ महि तबहीं।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

सुन गिरा वज्र सी लंकेश्वर, घननाद पुत्र सुरधाम गया।
करुणा करके चित्कार उठा, लंका का शौर्य तमाम गया।।158।।

पलयंकारी गर्जन करता, लेकिन अन्तर साहस छूटा।
हा चला गया वीरत्व शौर्य, लंका गढ़ का वैभव टूटा।।159।।

प्रिय पुत्र निधन सुन मंदोदरि, करुणा करती मूर्छा खाती।।
मेरे बहादुर लाल कहाँ, सुत कीर्ति कथा के गुण गाती।।160।।

आई सुलोचना पुत्र–वधू, हा प्राणनाथ जीवन साथी।
क्यों मुझे छोड़कर चले गए, उठती–गिरती चक्कर खाती।।161।।

हे पति प्राणेश्वर इन्द्रजीत, अब कौन कहे प्रियतम प्यारी।
सूने है सारे राजभवन, मुझको सूनी दुनियाँ सारी।।162।।

प्रश्वेद वहा धुल गई मांग, बिंदिया खिसकी भौंहन आगे।
अँखियों से काजल रेख बही, कन्दुक कपोल काले–काले।।163।।

देखी लंकेश्वर वहू दशा, बेटी मत शोक करे इतना।
प्रातः होते मैं देखूँगा, है बनवासी में दम कितना।।164।।

अंगद सुकंन्ठ नल हनूमान, सिर काट सभी के लाऊँगा।
कुल द्रोही मार विभीषण को, भुजबल अपना दिखलाऊँगा।।165।।

जिनको मैं वीर समझता था, वे मरे बन्दरों के मारे।
यह सोच मुझे आ रही हँसी, सब कादर थे जो भी हारे।।166।।

आश्वासन देता हुआ दुष्ट, अपना पौरुष करता बखान।
धिक्कार उठा सब सैन्य टेर, वीरों रण करना घमासान।।167।।

ब्रह्मा से हमको वर प्रदान, मैं त्रिभुवन जेता हूँ अजेय।
वनवासी दल श्रृंगाल शशक, जय पाना निश्चित यही ध्येय।।168।।

करना है सबको महायुद्ध, मुझको देखो भय जगत व्याप्त।
इस गीदड़ दल को क्या समझूं, दिक् पाल डरैं यम अपर्याप्त।।169।।

जब तक भुज बीस प्रचंडों में, तूणीर सहित दस धनुष बाण।
तब तक समझो इस जगती में, कोई जोधा नहिं मम समान।।170।।

अपनी दिखलाओ महा शक्ति, निशिचर दल पौरुष का वीरों।
ओछा मत करो विचारों को, बढ़ चलो बहादुर रण धीरों।।171।।

मारो सुकन्ठ नल कपि मयंन्द, खाओ कपि भालू बीन बीन।
अंगद श्वेता हनुमान हतो, वनवासिन के लो धनुष छीन।।172।।

अब तो मझधार फँसी नौका, अपने बलबूते खेना है।
कपि दल का कर दो सर्वनाश, प्रतिशोध आज सब लेना है।।173।।

१२. प्रहस्त वध

तर्ज राधेश्याम

प्रातः सुकंन्ठ ने आज्ञा दी, लंका गढ़ में करिये धावा।
अंगद मयन्द हनुमान नील, कपि सैन्य साथ में पहुँचावा।।174।।

चढ़ गये दुर्ग के ऊपर कपि, लेकर पर्वत व शिलाखन्ड।
प्राकोर फोड़कर तोड़–फोड़, लंगूर बली भुजदण्ड चण्ड।।175।।

अंगद हनुमंत प्रहारों से, धस गई धरा भूडोल उठी।
सुग्रीव बली का अट्हास, रघुनन्दन की जय बोल उठी।।176।।

था उधर सैन्य नायक प्रहस्त, कपि नील यहाँ सेना नायक।
दोनों जोधा थे युद्ध कुशल, दोनों बलशाली सब लायक।।177।।

अंगद ने ले पाषाड़ पिन्ड, सारथी सहित रथ चूर्ण किया।
भीषण क्रोधातुर अब प्रहस्त, कपि दल मर्दन कर धूर किया।।178।।

फुंकरत दैत्य ज्यों कुद्ध ब्याल, लेकर त्रिशूल शठ दौड़ पड़ा।

मारा कपीश वक्षस्थल में, गर्जन करके कर शोर बड़ा।।179।।

हनुमंत वीर हुंकार मार, मुष्किट उर में करके प्रहार।
हो गया धरासाई निशिचर, रथ चूर्ण किया शठ को पछार।।180।।

ले शूल भयंकर वज्रदन्त, दौड़ा प्रहस्त बदला लेने।
अंगद ने गदा प्रहार किया, आया परितोष मृत्यु देने।।181।।

गय गवय श्वेता गयंन्द ने, सारा निशिचर दल संहारा।
रामनुज ने कोदण्ड थाम, सुत कुंभकरण कुम्भक मारा।।182।।

लंकेश सैन्यपति निधन सुना, अंतर बल टूटा हृदय–हार।
पकड़ो खाओ सब भालू कपि, गर्जना कर रहा बार–बार।।183।।

१३. श्री राम–रावण युद्ध

नाभिकुंड पियूष बस याकें। नाथ जिअत रावनु बल ताकें।।
सुनत बिभीषन बचन कृपाला। हरिष गहे कर बान कराला।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

हो गए नष्ट सब बली वीर, रह गया किन्तु लंकेश शेष।
हाथों से दस कोदण्ड थाम, वाणों की वर्षा की विशेष।।184।।

मायाबी रावण का कुकृत्य, नभ से बर्षाता तप्त बिन्दु।
एक नहीं रावण अनेक,देखा मुसुकाने कृपा सिन्धु।।185।।

कपि दल में मच गई त्राहि–त्राहि, राघव ये खल प्रलयंकर है।
तब कहा विभीषण हे राघव, यह मायावी दसकंधर है।।186।।

देखा खल ने रघुनायक को, बोला सरोश वनवासी सुन।
सुतधाती तू सम्मुख आया, अब निश्चित मृत्यु क्षणों को गिन।।187।।

छन्द

मारकर तूने बान्धव सैन्य, बना बैठा स्वयं में वीर।
ध्वस्त कर लंका चीर प्रकोर, देखना अब रावण के तीर।।188।।

आज मैं लूँगा सब प्रतिशोध, हृदय में होगा तभी प्रबोध।
विभीषण कुल धाती है कहाँ, उसी पर करूँ वार में शोध।।189।।

छोड़ आपत्ति समय पर मुझे, बना जो तपसी का पदत्राण।
नीच को भेजूँगा यमलोक, आज निश्चित लूँ उसके प्रान।।190।।

हँसकर बोले श्री राघवेन्द्र, कल्पना करता तूँ बेकार।
आज तेरा ही होगा अंत, लेके धनुष करो अब वार।।191।।

राम ने काट दिए सब धनुष, किया रथ भंजन सारथि मार।
कटे ध्वज मुकुट अश्व तूणीर, शीश भुज कटे अनेकों वार।।192।।

कटे शिर होते पुनः नवीन, भुजाओं में भी आई बाढ़।
मृत्यु भय भूल गया लंकेश, गरज कर क्रोधित हुआ प्रगाढ़।।193।।

विभीषण बतलाया हे नाथ, नाभिगत इसके अमृत कुंड।
न जब तक होगी श्रोषण सुधा, न होगी मृत्यु कटे भुज–दण्ड।।194।।

निकाले तर्कस से वे बाण, दिये जो मुनि अगस्त्य ने पूर्व।
राम ने किया उन्हें संधान, चले ज्यों व्याल फुंकरत दूर्व।।195।।

मृत्यु क्षण में बोला कर नाद, कहाँ है वीर ब्रती श्रीराम।
दिखाये अपना साहस मुझे, करे आकर मुझसे संग्राम।।196।।

प्राण वायु की निकली ज्योति, समानी राम हृदय में आय।
हुई नभ मंडल से जयकार, जयति जय कौशल दोनों भाय।।197।।

तर्ज राधेश्याम

चला गया जगती से रावण, विगत हुआ दानवता जोर।
मानवता मुसकान बिखेरे, चली पवन की तरल हिलोर।।198।।

कृशोदरी के साथ रानियाँ, आई मिल श्रीराम समीप।
किया प्रभू ने ज्ञान प्रबोधन, उदय किया उर ज्योति प्रदीप।।199।।

कहा प्रभू ने उठो विभीषण, करिये बन्धु के क्रिया कर्म।
पिन्डोदक तर्पण जल सिंचन, शास्त्र बिहित जो लौकिक धर्म।।200।।

करने को कृतकाण्ड साथ में, कपि सुकंन्ठ लखन भी जायें।
राजकीय सम्मान सहित सब, क्रिया काण्ड में योग लगायें।।201।।

मृत शरीर से बैर नहीं कुछ, निन्दा भी करना अधर्म है।
इसकी परम्परा का रक्षण, मानवता का श्रेष्ठ धर्म है।।202।।

मृत्यु लोक में सभी मर्त्य हैं, रहती है कुल कीर्ति निशानी।
बैर भूल के यथा उचित सब, करिये प्रेत क्रिया सब ज्ञानी।।203।।

सुनो विभीषण कृसोदरी अब, जो कल तक थी लंकेश्वर रानी।
भक्त हृदय पति परिचर्या रत, वही शेष तब बन्धु निशानी।।204।।

पति की विरह वेदना का दुख, पीड़ायें कुसक न कर पाएँ।
नारी नर आश्रित रही सदा, आभाव ग्रस्त न हो जाएँ।।205।।

लंकेश्वर जैसा सुख सुहाग, हे भक्त विभीषण देना तुम।
भूले वैधव्य व्यथायें सब, यह सुनकर हर्षित होंगे हम।।206।।

१४. अग्नि परीक्षा

प्रभु के बचन सीस धरि सीता। बोली मन क्रम बचन पुनीता।
लछिमन होहु धरम के नेगी। पावक प्रगट करहु तुम बेगी।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

हे आँजनेय मारुती पुत्र, प्रमदा वन अभी चले जाओ।
है त्रसित नेत्र दर्शन के हित, श्री सीता को लेकर आओ।।207।।

करबद्ध विभीषण बोल उठा, मैं शिविका से बुलवाता हूँ।
साज बाज सम्मान सहित, ले माता सिया को आता हूँ।।208।।

बोले राघव मणि सिवका क्यों, पदयात्रा किये खुला आवैं।
मत करिये आच्छादित ओहार, जिससे कपि दल दर्शन पावैं।।209।।

लंका गढ़ आये वीरों ने, तन प्रान निछावर कर डाले।
आयें उन कपिदल के समक्ष, झेले जिन प्राणों के लाले।।210।।

मैं स्वयं बना त्रणियाँ कृतज्ञ, जो त्याग किया सर्वस्व गेह।
मेरे हित आये कर अर्पण, इन भक्तों से ही बँधा नेह।।211।।

सर्वस्व प्रेम बंधन समेट, मेरे चरनों से बाँध लिया।
त्यागी दुनियाँ की आशायें, मेरा ही आश्रय साध लिया।।212।।

उन भक्तों का मैं स्वयं भक्त, भक्तों का साधन भक्ती है।
सीता हैं भक्ती की स्वरूप, दर्शन दें कपि अनरुक्ती है।।213।।

कर जोर कहें श्री जामवन्त, किस लायक हम जो कहें आप।
सम्यक दानव कुल दलन श्रेय, कर्ता–धर्ता प्रभु स्वयं आप।।214।।

सास्वत करिये करुणेश कृपा, हम प्रणतारती भिखारी हैं।
सब नखी भालु कपि वनचारी, पद सेवक प्रेम पुजारी हैं।।215।।

ल्याये श्री सीता आँजनेय सम्मान सहित लंकेश साथ।
चिर तृषित नेत्र सन्तृप्त हुये, दर्शन पाकर रघुनाथ आज।।216।।

नत माथ टपकते अश्रु बिन्दु, हा नाथ आर्त हर कृपा सिन्धु।
मुझसी अनाथ के तुम्ही नाथ, दो साथ हाथ गह दीन बन्धु।।217।।

श्रीराम वाक्य श्रृणु हे सीते, आड़े आ सकता है समाज।
कोई कुछ भी कह सकता है, कुछ दो प्रमाण यह कपि समाज।।218।।

रावण द्वारा अपहरण काण्ड, सिय लगीं सोचने एक घड़ी।
अँखियों से छलके अश्रु बिन्दु, निश्वासें भर के सिसक पड़ी।।219।।

कर दिया साक्षी अग्निदेव, करते रघुनन्दन अभिनन्दन।
बोले पावक प्रभु विनय सुनो, निर्दोष सिया तव पद रंजन।।220।।

१५. लंका से प्रस्थान

नभ पर जाइ बिभीषन तबही। बरषि दिए मनि अंबर सबही।
जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेंहीं। मनि मुख मेलि डारि कपि देंहीं।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

पुष्पक विमान में रत्न वस्त्र, भर–भूरि विभीषण वर्षाये।
हर्षित कपि भालू लूट रहे, जय रघुपति राघव गुण गाये।।221।।

'करुणेश' कृपा कुंजन पुन्जन, जय श्री सीतापति रघुनन्दन।
जय दैत्य निकंदन जनरंजन, जय पाप निकंदन दुख भंजन।।222।।

एकत्र हुआ सब कपि समाज, बोले दयालु श्री मधुर वचन।
आभारी हूँ सबके श्रम का, कर सका पराजित खल रावण।।223।।

जायें सब अपने धामों को, पर मेरा ध्यान भुलायें मत।
मानवतावादी पक्ष रहे, दानवता दुर्गुण लाये मत।।224।।

रह गये नील नल जाम्बुवान, अंगद सुकंन्ठ कपि हनूमान।
भक्त विभीषण यूथपगण कुछ, श्वेता मयंद से भाग्यवान।।225।।

लंकेश प्रेरणा से प्रेरित, आ गया वहीं पुष्पक विमान।
श्री सीता साथ विराजे प्रभु, रामानुज कपि योधा महान।।226।।

चल पड़ा गगन पथ से विमान, आया अगस्त्य आश्रम उतरा।
मुनिवर पद वंदन पूजन कर, पंपा किष्किन्धा पथ गुजरा।।227।।

सरभंग सुतीक्षण तपोभूमि, माँ अनुसूया आश्रम आये।
मन्दाकिन दर्शन चित्रकूट, मुनि वाल्मीक पद सिर नाये।।228।।

मुनि भरद्वाज आश्रम उतरे, स्नान त्रिवेणी कर पूजन।
चल पड़े अवध को अवधभूप, जयकार बोलते हर्षित मन।।229।।

भेजा हनुमत को राघवेन्द्र, जा बन्धु भरत को बतलाओ।
आते हैं सिय लखन राम, धैर्य धरें यह समुझाओ।।230।।

श्रीराम विजय गाथा यह जो जन, प्रेम सहित मिल गाएँगे।
विजय विभूति सकल इस जग में, निश्चय ही पा जाएँगे।।231।।

लंका काण्ड समाप्त

श्रीगणेशाय नमः

श्रीराम कथा

उत्तर काण्ड

१.अयोध्या आगमन

अमित रूप प्रकटे तेहि काला। जथाजोग मिले सबहि कृपाला।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

आया सरयू तट पर पुष्पक, दौड़ पड़े आबाल वृद्ध।
जैसे साधक को हुआ आज, सम्पूर्ण साधना मिली सिद्ध।।1।।

घर–घर में वन्दनवार वधें, जगमगी अयोध्या दीप जले।
ड्योढ़ी दरवाजे राजभवन, ध्वज तोरन सुन्दर इत्र मले।।2।।

मंगल गातीं हर्षातीं मन, तीनों रानी सब स्नेह मगन।
आना सुन सिय राम लखन, मुदिता ज्यों रंचक पाकर घन।।3।।

दर्शन होते ही दौड़ भरत, जा गिरे दण्डवत चरनों में।
प्रभु ने भर अंक समेट लिया, भीजीं अँखियाँ जल झरनों में।।4।।

शत्रुघ्न लषन से हृदय मिले, सासों के सीता चरन गिरीं।
जोहत त्रय सासें सिय स्वरूप, युग सलिलायें दृग अश्रु भरी।।5।।

अमित रूप श्रीराम हुये, यथा योग सबको भेंटा।
सब वर्ण भाव का भेद मिटा, ऊँचा हो अथवा छोटा।।6।।

मुनिवर वशिष्ट के चरन वंद, ऋषि विप्रो का कर अभिनन्दन।
माँ अरुन्धती के चरन परे, सीता समेत श्री रघुनन्दन।।7।।

२. श्रीराम राज्याभिषेक

प्रथम तिलक वशिष्ट मुनि कीन्हा। पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

श्रीराम दर्श–हित भारत के, ऋषि साधक तपोनिष्ट आये।
कुम्भज अगस्त्य जाबालि आदि, सप्तर्षि पतन्जलि भृगु आये।।8।।

कौशिक अत्री श्री परशुराम, भरद्वाज गौतम वशिष्ट।
च्यवन अंगिरा बाल्मीक, शुकदेव ब्यास श्रीवेद निष्ट।।9।।

रघुवर ने कर वन्दन अर्चन, स्नेह सहित सत्कार किया।
ऋषियों ने बोले स्वस्ति वचन, मनवान्छित आशीर्वाद दिया।।10।।

आये अमरेश अमर ब्रह्मा, करने रघुनन्दन अभिनन्दन।
हे खलभंजन मानव रंजन, हे रावणारि तव पद बन्दन।।11।।

अभिभूत जगत तव ऋणी सभी, दारुण दानवता दुख भंजन।
हे मानवता के अभिरक्षक, रावण के रिपु तव पद वन्दन।।12।।

हे नारायण नर रूप धार, धन्य–धन्य दशरथ नन्दन।
जनरक्षक दुष्टों के तक्षक, हे महाकाल तव पद वन्दन।।13।।

मानवता हित में कष्ट सहे, पा तुम्हे देश की भूमि धन्य।
संस्कृति समाज के पथ दृष्टा, दीजे पदकमलन प्रीति अनन्य।।14।।

आ गये सभी सम्भ्रान्त व्यक्ति, गुरुवर वशिष्ट मुनि बृन्द झार।
कर जोर भरत ने प्रकट किया, सबके सम्मुख अपना विचार।।15।।

दृग से ढुलकी बूंदे कपोल, रिम–झिम सावन सा वारि झरैं।
अनुरोध पूज्य श्री गुरुवर से, श्रीराम राज्य अभिषेक करैं।।16।।

छन्द

अयोध्या नगरी का श्रृंगार, सजे ध्वज तोरन कलस अपार।
बहे सरयू का पावन नीर, हुये घर–घर में मंगलचार।।17।।

कपीश्वर लंकेश्वर सब वीर, धरे मानव का सुभग शरीर।
हर्ष मन राम काज में लगे, श्वेत अंगद हनुमत बलवीर।।18।।

हर्ष माताओं हृदय अपार, करें श्रीसीता का श्रृंगार।
मान्डवी श्रुतकीर्ती आ गईं, उर्मिला का समुचित व्योहार।।19।।

घनन घन से गर्जे डफ़ ढ़ोल, चमकती चपला सी चित चोर।
गीत गानों के दादुर शब्द, बदरिया झिमक रही चहुँ ओर।।20।।

हुआ विप्रों का वेदोच्चार, शंख ध्वनि व घंटा घड़ियाल।
कुंज कलियों से भर के सुरभि, हुआ सौरभ मय नगर विशाल।।21।।

इसी क्षण राम सिया का तिलक, किया प्रतिपादित श्री वशिष्ट।
हुये सिंहासन पर आरूढ़, राम स्मरण किए पितु इष्ट।।22।।

हुआ जय–जय का घोष अपार, झरे अम्बर से पुष्प तमाम।
दिया ऋषियों ने आशीर्वाद, जयति जय रघुवर राजाराम।।23।।

तर्ज राधेश्याम

श्री रघुवर पद कमल निरंतर, धरिये सदा भाव से ध्यान।
कंज नेत्र शोभामय सुन्दर, भाल तिलक श्री रूप निधान।।24।।

भजन शील प्रत्येक भक्त का, जो हरते अज्ञान तमाम।
क्षणभंगुर जीवन यह भक्तो, भजन करो श्री सीताराम।।25।।

श्रीरामराज में प्रजा सुखी, सर्वत्र प्रेम व्यापक समाज।
छल–कपट वितृष्णा दंभ द्वेष, इर्षा विहीन सब काम–काज।।26।।

बहती रसवन्ती प्रेमसुधा, संयत बाँणी आलाप मधुर।
ग्रहस्थ धर्म के कर्म सभी, मर्यादा सम्पादित घर–घर।।27।।

श्रीराम राज में प्रकृति परी, हरिताभ लिये करती नर्तन।
प्रत्येक समय अनुशासित था, ऋतु आवर्तन व परिवर्तन।।28।।

याचक बन प्रजा जुहारे जब, तब बर्षाते घन बारि बिन्दु।
सन्ताप रहित रविकर किरणें, अम्बर अनन्त में शरद इन्दु।।29।।

बन बीरुध में फल–फूलों से, बोझिल लतिकायें लहक रहीं।
अमरावलि कुंज निकुंजों में, नभचर आवलियाँ चहक रहीं।।30।।

घर–घर में शिक्षा का प्रसार, सत्ब्योहारों की दीक्षा थीं।
इच्छायें धर्म प्रचारों में, सात्विकी प्रेम की शिक्षा थी।।31।।

आश्रम में बैठे तपोनिष्ट, ऋषि बेद वाक्य समुझाते थे।
अपनाते श्रद्धा सहित सभी, दुष्कर्मों से घबड़ाते थे।।32।।

जन–जन में भूषित भातृ–भाव, सत्कर्मों में था प्रेम–चाव।
था नहीं परस्पर द्वेष कलह, था नहीं वरिष्ठों से दुराव।।33।।

अश्लील कहीं साहित्य न था, दुष्टों का कालाकृत्य न था।
स्वामी से छल करने वाला, मतवाला कोई भृत्य न था।।34।।

बृद्वों पर था सम्मान ध्यान, छोटे पाते थे प्यार यहाँ।
तिथि त्योहारों में एक साथ, मिल हर्ष मनाते जहाँ–तहाँ।।35।।

श्रीराम राज्य में पाप पुण्य, कर्मों की होती छान–बीन।
अध्यात्म ज्ञान के ज्ञाता सब, मिलकर रहते थे उच्च हीन।।36।।

घर–घर मातायें दयामई, कोमल ह्रदया थीं कृपा मई।
श्रृंगार बिभूषण सदाचार, ग्रहणी गुण आगर क्षमा मई।।37।।

पर नारी थी भगिनी समान, पर द्रव्य हरण पातक महान।
थीं आधि व्याधियाँ कहीं नहीं, सब वर्णों के थे सुखी प्राण।।38।।

वेश्याओं का व्यापार न था, ज्वारीं लम्पट व्यवहार न था।
अभिमानी क्रूर कुकर्मी को, श्रीराम राज में प्यार न था।।39।।

सघवायें पति सेवा में रत, पातिव्रत धर्म निभाती थीं।
विधवायें राम भजन करतीं, सादा जीवन अपनातीं थीं।।40।।

पंचों के मत से राघवेन्द्र, शासन का तंत्र चलाते थे।
सन्तुष्ट रहे सम्पूर्ण प्रजा, ऐसी बिधियाँ अपनाते थे।।41।।

श्रीरामचन्द्र के पंच सभी, परमेश्वर माने जाते थे।
दोषी स्वजनों को भी निर्भय, न्यायोचित दण्ड दिलाते थे।।42।।

है धन्य राम का लोकतंत्र, भ्रष्टाचारों से था खाली।
है धन्य भूमि भारत माँ की, राघव मर्यादा की पाली।।43।।

मानवता रक्षक मानव गुण, श्रुति–शास्त्र सभी बतलाते हैं।
हम क्या थे अब क्या हुये आज, यह लिखने में शर्माते हैं।।44।।

३. श्रीराम गीता

एक बार रघुनाथ बोलाए। गुर द्विज पुरबासी सब आए।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

एक बार सम्भ्रान्त बृन्द सब, श्री राघवेन्द्र ने बुलवाये।
पुरजन परिजन एकत्र हुये, सभागार मण्डप आये।।45।।

श्री वशिष्ट गुरु पूज्य पाद्य, दैवज्ञ वेद वेत्ता भूसुर।
हैं सभी उपस्थित बन्धु प्रजा, बोले मृदुवाणी करुणाकर।।46।।

सुनिये प्रिय पुरजन मम बाँणी, मैं कहता हूँ कुछ क्षमा करें।
कुछ भी प्रभुता आदेश नहीं, हैं नीति बचन सब गौर करें।।47।।

जो मेरे पर विश्वास करे, वह सेवक है मुझको प्यारा।
उसकी रक्षा में तत्पर हूँ, जिसने तन मन मुझ पर वारा।।48।।

सौभाग्य पूर्व संचित सुकर्म, जो मानव का जीवन पाया।
यह दुर्लभ स्वर्ग निवासिन को, ऐसा उपनिषदों ने गाया।।49।।

यह मोक्षधाम का साधन है, इससे ही बनते धर्म कर्म।
दैवत्व प्रभा का कारण है, कारक सकर्म अथवा कुकर्म।।50।।

मानव जीवन अमूल्य भक्तो, यह धाम मोक्ष का मुख्य द्वार।
परलोक सम्हल न पाया तो, फिर जन्म मरण हो बार–बार।।51।।

इस जीवन का फल विषय नहीं, हर इन्द्री सुख दुख दाई है।
नर तन पाकर भी विषय रमो, कब विषई ने गतिपाई है।।52।।

भववारिध के गुरु कर्णधार, सत् उपदेशों पर ध्यान धरो।
अनुकूल शास्त्र के संस्कार, मेरे प्रति दृढ़ विश्वास करो।।53।।

है सर्वश्रेष्ठ पथ भक्ति विमल, भक्ती बिन मुक्ति नहीं होती।
साधक के साधन हैं अनेक, भक्ती अभाव में सब खोती।।54।।

भक्ती स्वतंत्र सुख की निधान, भक्ती ही मन निर्मल करती।
भक्ती ही श्रद्धा भाव भरे, भक्ती विश्वास सुदृढ़ करती।।55।।

उत्पन्न हुआ करती भक्ती, सत्शास्त्र पठन सत्संग किये।
सत्संग मूल है संत बचन, वह भी मिलता शुभ कर्म किये।।56।।

विद्वान मनीषी कवि कोविद, श्री शंकर की सेवा करिये।
छल कपट हीन निर्मल विचार, मन भक्ति पंथ में ही धरिये।।57।।

जप योग यज्ञ उपवास तपी, भक्ती अभाव से सभी व्यर्थ।
मुक्ती से भी है भक्ति श्रेष्ठ, क्या कहूँ समझिये भक्ति अर्थ।।58।।

कल्पित आशाओं से बचिये, सुखमय जीवन होता निराश।
भूषित सुझाव हो नम्र मधुर, हरि चर्चाओं की रहे प्यास।।59।।

ना बैर किसी से अधिक प्रेम, हों अनारम्भ ना हो गुमान।
सज्जनता का सम्मान करे, देखे समत्व अपमान मान।।60।।

निश्छल मन हो पाखंड रहित, षट् दोष विवर्जित मंजुभाव।
सम्वेदन साली हृदय रहे, निर्मल भक्ती का हो प्रभाव।।61।।

या मुझको निर्मल मन दे जो, मैं उसको भक्ति प्रदान करुँ।
जो मुझमें ही आशान्वित हो, मैं उसकी आशा पूर्ण करुँ।।62।।

मुझको ही जाने जननि जनक, गुरु बन्धु सभी नाते जोड़े।
मम चरनों में निर्भर होकर, जग के मिथ्या बन्धन छोड़े।।63।।

रघुनन्दन के सुन मधुर बचन, जय राघवेन्द्र बोला समाज।
उपदेश श्रवण कर हुये धन्य, हो गये सभी कृत कृत्य आज।।64।।

४. शिव पार्वती सम्वाद

गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा। मैं सब कही मोरि मति जथा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

गिरजा से कहते रामकथा, भोले भंडारी कैलासी।
श्रीरामचरित विस्तृत अपार, मति यथा रही मैंने भाषी।।65।।

उमा कही श्रीराम कथा, सुन भक्ति भाव से सावधान।
कल्याणी सुख प्रद अमूल्य, हो श्रवण किये निजज्ञान भान।।66।।

यह कथा नील गिर में जाकर, श्री काक मुनी से श्रवण किया।
वह कही तुम्हारे प्रति सहर्ष, जो राघवेन्द्र ने चरित किया।।67।।

प्रभु पद पंकज में प्रीति रहे, सब साधन का यह फल सुन्दर।
होती है उर में प्रेम भक्ति, जगमगे ज्ञान दीपक अन्दर।।68।।

गिरजा बोलीं मैं धन्य हुई, श्री रामकथा भव भय हारी।
तव मुखबाँणी प्रिय सुधा सनी, मैं धन्य–धन्य हे त्रिपुरारी।।69।।
हरि चरित आपने श्रद्धा से, जो भाव पूर्ण मुझसे गाया।
मेरा संशय भ्रम नष्ट हुआ, सुनकर प्रसन्न हूँ सुख पाया।।70।।

उत्पन्न हुआ संशय मन में, बायस तन कैसी राम भक्ति।
कैसे कौवे में विरति–ज्ञान, समुझावैं मुझको यथा युक्ति।।71।।

श्रीराम चरित का शुभ प्रसाद, बायस ने कैसे प्राप्त किया।
वह भी इतना गम्भीर गूढ़, जिसको त्रिपुरारी ग्रहण किया।।72।।

किस तरह नील गिर पर पहुँचे, यह कथा बतावें त्रिपुरारी।
कैसे प्रसंग बस रामकथा, यह सुनी आपने मदनारी।।73।।

हैं गरुड़ महा गुण ज्ञान भक्त, हरि निकट निवासी हरि वाहन।
फिर क्यों वह भ्रम से भ्रमित हुआ, संशय ग्रहीत है मेरा मन।।74।।

चरनों की दासी भ्रमित हुई, हे शम्भु कृपा कर समुझायें।
आरत अधिकारी जान मुझे, विस्तृत व्याख्या कर बतलायें।।75।।

हँसकर बोले अवढ़र दानी, है धन्य सती यह रुचि तेरी।
रघुवर चरनों में प्रीति देख, हर्षित होती है मति मेरी।।76।।

रघुनन्दन का इतिहास सुनो, मनका भ्रम जाल नशायेगा।
उर में उपजे विश्वास प्रखर, श्रीराम चरन रति लायेगा।।77।।

जिस भाँति श्रवण की रामकथा, संशय नाशक भव भय मोचनि।
मैं कहता हूँ विस्तृत प्रकार, तूँ सावधान सुन मृग लोचनि।।78।।

तूँ प्रथम दक्ष गृह में जन्मी, उस जन्म तुम्हारा सती नाम।
पितु यज्ञ देख अपमानित तूँ, तन भस्म किया ले शम्भु नाम।।79।।

प्रयतमे तुम्हारी विरह व्यथा, मुझको व्यापी थी तन–मन में।
कैलाश त्याग मैं निकल पड़ा, बस तुम ही थी मम चिन्तन में।।80।।

बन गया विरह का बैरागी, फिरता वन उपवन में उदास।
बाँणी में बसती दक्ष सुता, आँखों में तेरी दर्श प्यास।।81।।

मैं गया मेरुगिरि उत्तर दिश, नील शैल सुन्दर देखा।
मेरे मन भाया पावन थल, गत हुआ मोह का भ्रम लेखा।।82।।

थीं चारु कनक श्रेणी विशाल, लहराती शीतल मन्द पवन।
वट पीपल पाकर आम्रपुंज, आते–जाते थे पंछी गन।।83।।

था नाम नीलगिरि श्रेणी का, बसते श्री काक भुसुंडि वहाँ।
कल्पान्त अछत थी काक देह, श्रीराम भक्त गुण ज्ञान महाँ।।84।।

माया कृत जो अवगुण अनेक, वह निकट कभी न जाते थे।
दर्शनकर शैल तपस्थल को, भ्रम तूल सभी जल जाते थे।।85।।

वायस पीपल तरु ध्यान धरे, जप जज्ञ करे पाकर समीप।
मानस पूजन था आम्र तले, प्रज्जवलित निरंतर ज्ञान दीप।।86।।

बट तर करते श्री रामकथा, श्रवण किया करते विहंग।
प्रभु चरित बुझाते शंकायें, लहराती भक्ती की तरंग।।87।।

जाकर के यह कौतुक देखा, गत शोक हृदय आनन्द हुआ।
कुछ दिवस श्रवण कर रामकथा, आया हिमथल में शोक मुआ।।88।।

सुनिये किस कारण गरुड़ गये, उत्तर दिशि काक भुसुन्डी पास।
होता है इसके श्रवण किये, मायाकृत व्यापी मोह नाश।।89।।

अति विचित्र प्रभु की माया, यह सबको नाच नचाती है।
किन्चित भी शंका हुई अगर, तो और प्रबल हो जाती है।।90।।

नारायण करते नर लीला, निशिचर ने बाँधा नाग पास।
देवर्षि हृदय में खेद हुआ, बीणा ले पहुँचे गुरुड़ पास।।91।।

तुम गरुड़ जाव रघुवर समीप, उनको अहिबन्धन मुक्त करो।
लंका में बन्धित युगल बन्धु, उस नाग पास की पीर हरो।।92।।

नारद आज्ञा से गरुड़ भक्त, अहिबंधन काटा लंका में।
लेकिन हरि माया से प्रेरित, श्री गुरुड़ पड़े अब शंका में।।93।।

जो सृष्टी का बंधन काटे, वह कैसे बन्धन में आया।
वे सर्वेश्वर हैं माया पति हैं, उन पर निशिचर की क्या माया।।94।।

सर्वेश्वर स्वामी निराकार, उनकी बल महमा भी अजेय।
आश्चर्य वही प्रभु पराभूत, हो गया गरुड़ का भ्रमित ध्येय।।95।।

उत्पन्न हुये वे अविनाशी, देखा कुछ कारण करन नहीं।
शंका होती है बार–बार, यह कथन प्रभू अवतरण नहीं।।96।।

व्याकुल पहुँचा नारद समीप, शंकारत कारण कह डाला।
लागि दया रिषि नारद को, समझे प्रभु माया का पाला।।97।।

मुझको भी प्रभु की माया ने, शंका भ्रम–भूरि नचाया है।
हे खगपति मन एकाग्र करो, यह प्रबल राम की माया है।।98।।

चतुरानन के समीप पहुँचो, वह करना जो विधि दे निदेश।
हरि माया का स्मरण करो, हे हरि वाहन ज्ञानी खगेश।।99।।

ब्रह्म लोक पहुँचे खगपति, श्री ब्रह्मा से वृतान्त कहा।
सुनके धाता स्तब्ध हुये, प्रभु माया है बलवती महाँ।।100।।

कवि कोविद ज्ञानी तपोनिष्ठ, प्रभु माया प्रबल नचाती है।
अग जग मम रचना सृष्टी में, सर्वोपरि रंग जमाती है।।101।।

हे वैनतेय ये समाधान, करने में सक्षम कैलासी।
वह रामचरित के गूढ़ तत्व, समझैं समुझावै अविनाशी।।102।।

विधि आज्ञा पाकर परमातुर, आया विहंगपति मेरे पास।
गिरिराज सुता सुन मैं तत्क्षण, सुन गरुड़ कथा चिन्तित उदास।।103।।

जाता हूँ धनपति के समीप, हे गरुड़ मार्ग में मिले मुझे।
हरि चरणों का स्मरण करो, मैं समझाऊँ क्या गरुड़ तुझे।।104।।

जब बहुत समय सत्संग करो, तब सब संसय भ्रम जायेगा।
किस तरह प्रबोधन करूँ गरुड़, तूँ सत्वर समझ न पायेगा।।105।।

सत्संग किये बिन रामकथा, सुनते पर समझ नहीं पाते।
सत्संग बिना भ्रम के फन्दे, हे गरुड़ यथावत रह जाते।।106।।

माया ग्रहीत को त्याग कहाँ, त्यागी जन को अनुराग कहाँ।
मोही कोही प्रभुद्रोही को, श्रीराम चरन अनुराग कहाँ।।107।।

उत्तर दिशि सुन्दर नील श्रृंग, उसमें श्री काक भुसुंडि रहें।
सत्संग साधना राम भक्त, प्रतिदिन राघव की कथा कहें।।108।।

आते हैं विविध विहंग बृन्द, श्रद्धा से सुनते रामकथा।
वक्ता श्री काक भुसुन्ड कहें, समझायें सब मति योग यथा।।109।।

५. गरुड़ भुशुण्डि संवाद

गयउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुंडा। मति अकुंठ हरि भगत अखंडा।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

शिव आज्ञा को कर सिरोधार्य, चल पड़ा नील गिरि को खगेश।
दर्शन कर सैल सुहावन का, मन भावन था पावन प्रदेश।।110।।

सर में जाकर स्नान किया, बट शोभा देखी हर्षाया।
हो गया सभी भ्रमजाल दूर, श्रद्धा सद्भाव उमड़ आया।।111।।

आये श्रावक सब विहंग बृन्द, खगपति भी पहुँच गये तत्क्षण।
बक्ता श्री काक मुनी बैठे, श्री रामकथा में अर्पित मन।।112।।

देखा खगपति को श्री भुसुन्डि, हो गया प्रफुल्लित खग समाज।
आसन सम्मान सहित देकर, हे गरुड़ हुये हम धन्य आज।।113।।

बोले खगेश से काक मुनी, हरि वाहन के दर्शन पाये।
पूजन अर्चन किस भाँति करूँ, अँखियों में अश्रु झलक आये।।114।।

बोले खगेश हे भाग्यवान, श्री शिव प्रेरित दर्शन पाया।
आश्रम के दर्शन करते ही, हो गई दूर सब भ्रम माया।।115।।

हे भक्त प्रवर श्री रामकथा, अब कहें आप मैं श्रवण करूँ।
जिससे श्रद्धा विश्वास सहित, मैं राघवेन्द्र का ध्यान धरूँ।।116।।

सुन काक भुसुन्डी गरुड़ गिरा, राघव के गुण वर्णन लागे।
मन में अनुराग उमंग उठी, रसना श्रीराम सुधा पागे।।117।।

कर रामचरित सर कर वर्णन, पुनि नारद मोह अपार कहा।
निशिचर कुल की उत्पत्ति साथ, भक्त विभीषण जन्म बदा।।118।।

श्रीराम चन्द्र अवतार हर्ष, शैशव लीला नृप आँगन की।
किस भाँति पूप जूठन पाया, सब कथा कही नृप प्रागंण की।।119।।

कौशिक मुनि का आगमन कहा, ताड़क वध मुनि पत्नी तारन।
मखरक्षा कर मिथिला पयान, अजगव भंजन नृप मद हारन।।120।।

पुनि जनक भवन में ब्याह कथा, अभिषेक समय ही वन पयान।
पुरवासिन की विरह व्यथा, केवट पद प्रच्छालन बखान।।121।।

वटक्षीर बनाये जटाजूट, तमसा तट से प्रस्थान किया।
व्याकुल सुमंत भूपाल मरण, वन भीलों को मिल ज्ञान दिया।।122।।

मिल भरद्वाज मुनि से प्रयाग, श्री वाल्मीक आश्रम आये।
द्वादश वर्षो तक राघव मणि, चित्रकूट गिरि पर छाये।।123।।

कामदगिरि वर्णन भरत विरह, अनुसूइया सीता मधुर मिलन।
सरभंग सुतीक्षण वध विराध, पहुँचे अगस्त्य आश्रम पावन।।124।।

पंचवटी में कृतनिवास, कृत्या के नाशा कर्ण हरे।
चौदह सत्रह दैत्यों का वध, खर–दूषण जिस तरह मरे।।125।।

दसकंधर व मारीच मिलन, माया मृग सीता हरण कथा।
श्रीरामचन्द्र की नर लीला, करुणा कृन्दन व गृद्ध कथा।।126।।

श्री सबरी का आतिथ्य भाव, पम्पा समीप हनुमंत मिलन।
सुग्रीव मिताई का प्रसंग, किस भाँति किया प्रभु बालि बधन।।127।।

पम्पा समीप रघुनन्दन ने, कर सैल प्रवर्षण पर निवास।
वर्षा वर्णन के समय दुखी, किस तरह बिताये चतुर्मास।।128।।

सीता अन्वेषण का वृतान्त, सम्पाती का सम्वाद कहा।
सागर उल्लंघन में तत्पर, किस तरह किया बजरंग महा।।129।।

लंका प्रवेश सीता दर्शन, प्रमदा वन भंजन कथा कही।
दैत्य दलन दसकंध मिलन, लंक दहन जिस तरह रही।।130।।

वैदेही को दे आश्वासन, हनुमंत लाल वापस आये।
सुग्रीव बली कपि सैन्य साथ, सागर तट पर रघुवर छाये।।131।।

कही विभीषण शरणागति, सागर बन्धन का कर बखान।
गिरि त्रिकूट में आ पहुँचे, नल नील कला का कर बयान।।132।।

गये बसीठी बाल कुंवर, निशिचर कुल का संहार हुआ।
हत कुंभकरन घननाद वीर, रावण पर तीव्र प्रहार हुआ।।133।।

रघुपति रावण की समर कथा, वध बाद विभीषण राजतिलक।
खगपति से बरनी काकमुनी, श्री रामायण की पूर्ण झलक।।134।।

श्री सीता रघुपति मिलन साथ, आये पुष्पक से अवध धाम।
श्री भरत मिलन जन परिजन से, राज्य तिलक वर्णन ललाम।।135।।

सब कथा भुसुन्डी ने गाई, जो तुमको प्रिये सुनाता हूँ।
भोले बोले श्री गौरा से, मैं रघुपति चरन नमाता हूँ।।136।।

भक्तों के चन्दन रघुनन्दन, जगवन्दन यश सुनके खगेश।
भ्रम तूल मिटा उर ज्ञान घटा, घिर प्रेम छटा बर्षी अशेष।।137।।

६. गरुड़ के प्रश्न

कारन कवन देह यह पाई। तात सकल मोहि कहहु बुझाई।
रामचरित सर सुंदर स्वामी। पायहु कहाँ कहहु नभगामी।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

बोले खगपति कर बद्धपुनः, श्रीराम सुयश कैसे पाया।
किस गुरुवर ने यह ज्ञान दिया, कर श्रवण सुयश छूटी माया।।138।।

आरत अधिकारी समझ मुझे, यह प्रश्न हो रहा समुझायें।।
सेवक के हृदय मरुस्थल में, बचनामृत बूंदे छलकाये।।139।।

गद्‌गद् होकर बोले भुशुन्डि, उरगेश आपका धन्य ज्ञान।
श्री रघुनायक के चरनों में, उत्पन्न हुई शुभ रति महान।।40।।

श्रोता बक्ता शंकालू को, तीनों को मुक्ति प्रदान करे।
श्री रामकथा मानव मन की, हर जलन दूर कर पीर हरे।।141।।

क्या प्रश्न हो रहे अन्तर में, संकोच त्याग कर बतलाओ।
हे गरुड़ ज्ञान प्रति जो लिप्सा, स्पष्ट कहो मत सकुचाओ।।142।।

हे गूढ़ ज्ञान बारिध भुशुन्डि, कैसे पायी अमरत्व देह।
हैं आप वेदविद तपोनिष्ठ, क्यों हुआ काक बपु से सनेह।।143।।

किस कारण से यह योनि मिली, आश्चर्य हो रहा बतलायें।
तप प्रभाव या योग सिद्धि, संशय होती है समुझाये।।144।।

इस आश्रम में ही आकर के, मेरा भ्रम दूषण दूर हुआ।
अनुराग हुआ प्रभु चरनों में, संसय घट चकनाचूर हुआ।।145।।

सुन गरुड़ प्रश्न बोले भुशुन्डि, जप योग साधना ब्रह्मज्ञान।
वायस तन माध्यम से पाई, इस हेतु प्रीति इससे महान।।146।।

जिससे हो स्वारथ फलीभूत, वह होता प्राणों से प्रियतर।
हे पन्नगारि श्रुति संमत है, हितकर्ता ही होता हितकर।।147।।

श्रीराम विमुख सुन्दर तन भी, वैसा जैसे जलहीन कूप।
इस तन से पाई राम भक्ति, वापस शरीर ही प्रिय अनूप।।148।।

मैं सृष्टि सृजन से ही अब तक, न जाने कितने जन्म लिये।
झेले हैं कितने जन्म–मरण, अगणित प्रपंच के कर्म किये।।149।।

भवसागर का कर तरणि–तरण, सुख–दुख की देखी परछाई।
देखी दुखों की घोर घटा, ना सुख पाया अब की नाईं।।150।।

हे गरुड़ श्रवण कर सावधान, अकथनीय गाथा मेरी।
मिट जाये सुनकर अविश्वास, राघव प्रति होगी रति तेरी।।151।।

उत्पन्न हुआ मैं पूर्व जन्म, कौशलपुर में था सूद्रवर्ण।
कलि कारण अहमित उदंड, निर्दय कठोर ज्यों सीर्ण पर्ण।।152।।

आये भीषण अकाल के दिन, कौशल विहाय उज्जैन गया।
शिवभक्ति उपासक बिप्र मिले, सत्संग किये मन हुआ नया।।153।।

द्विज ने सप्रेम प्रतिपाल मुझे, शिक्षा दी विज्ञ सुजान किया।
यद्यपि मैं था इर्षालु हृदय, फिर भी दीक्षित शिव मंत्र दिया।।154।।

सरल हृदय सुतशिष्य मान, उपदेशित करते ब्रह्मज्ञान।
मैं सुनते ही कटु बाद करूँ, सर्वज्ञ बना गुरु से महान।।155।।

वैष्णव मत खन्डन करके, शैव्य भक्ति करता मंडन।
श्री बिप्र देव थे परम शान्त, सरल हृदय कोमल चन्दन।।156।।

बिठला कर अपने समीप, उपदेश दिया शिव से बढ़कर।
शिव प्रसाद हरि भक्ति मिले, कैलाशी भी प्रभु के किंकर।।157।।

रघुवर के किंकर श्री शंकर, जल उठा हृदय ऐसा सुनकर।
गुरुवर से ले ज्ञान ध्यान, फूंस उठा मैं ज्यों विषधर।।158।।

एक दिवस शिव मन्दिर में, ध्यानावस्थित था मन लाये।
उसी समय श्री पूज्य पाद, आराधन करने गुरु आये।।159।।

मैं अभिमानी ईर्षा विभूत, उठ करके नहीं प्रणाम किया।
गुरुदेव नम्र नवनीत हृदय, आसक्त जान न ध्यान दिया।।160।।

मठ मे तत्क्षण नभ गिरा हुई, करता शठ तूँ द्विज से विरोध।
श्राप ग्रहण कर अजगर हो, जा गिरि खंधर कर आत्म शोध।।161।।

शिवश्राप श्रवण कर श्री गुरु जी, कंपित गद्‌गद् बोले बाँणी।
श्रमा करे हे आशुतोष, शंकर भोले अवढर दानी।।162।।

जोर पाणि स्तवन किया, महिमामंत्रो सह प्रिय वाणी।
अपराध शिष्य का क्षमा करें, कुत्सित स्वभाव से अज्ञानी।।163।।

हे चन्द्रभाल गंगाधारी, भक्तों के भावन मदनारी।
ये, शिष्य मंदमति ज्ञानहीन, क्षमा–क्षमा श्री त्रिपुरारी।।164।।

हे ईश नमः निर्वाण रूप, बिभु व्यापक बेदो के स्वरूप।
अविनाशी निर्गुण निर्विकार, त्रिगुण मूर्ति ऊँकार रूप।।165।।

दोहा

बिप्र विमल स्त्रोत्र सुनि, भई गिरा वर माँग।
क्षमा याच द्विज ने कहा, क्रोध कीजिये त्याग।।166।।

होय अन्यथा श्राप मम, करे प्रायश्चित कर्म।
जन्म मरण ब्यापें नहीं, बिस्मृत होय न धर्म।।167।।

प्राप्त करे गति अव्याहत, रहे राम में लीन।
श्राप श्रवण कर हे गरुड़, सर्प रूप में कीन।।168।।

अपर कथा सुनिये गरुड़, हुआ श्राप उद्धार।
तदपि न विस्मृति गुरुकृपा, श्री राघव पद प्यार।।169।।

तर्ज राधेश्याम

मानव स्वरूप बड़भागी को, मिलता है श्रुतियों ने गाया।
एक बार ब्राह्मण कुल में, उत्पन्न हुआ नर तन पाया।।170।।

श्री शंकर आशीर्वचनों से, प्रभुचरनों में अनुराग रहा।
मित्थ्या जग के व्योहारों से, सर्वथा हृदय से त्याग रहा।।171।।

शैशव में शिशु क्रीड़ाये कर, गाया करता हरि लीलायें।
युवा समय सत्संग करुँ, दुखिया दीनों की सेवायें।।172।।

श्री राघवेन्द्र पद पद्मों के, मकरन्द सुधा का हुआ मधुप।
मुग्धा मयूरिनी बुद्धि नृत्य, षट विकार गत शान्त चित्त।।173।।

गो लिप्साओं से त्याग हुआ, अनुराग हुआ सीतावर से।
मनसा वाणी कर्मों द्वारा, संकल्पित था श्रीहरि हर से।।174।।

हे गरुड़ मानवी जीवन में, मुक्ती साधन श्रीराम नाम।
भ्रम त्याग हृदय से अविश्वास, भज राम चरित सुखप्रद सुखधाम।।175।।

ये मायाकृत सम्पूर्ण सृष्टि, तल वितल रसातल ब्रह्मलोक।
चैतन्य जीव माया बस जड़, माया से ही तू भ्रमित शोक।।176।।

हे पन्नगारि माया तजके, जाग्रत कर अपना अंतर नभ।
होगा बिनष्ट भ्रम अंधकार, प्रभु शरणागति से बने सुलभ।।177।।

बावला बना था चातक सा, रामकथा रस चाह लिये।
सत्संग रंग में रंगा फिरुँ, बालक स्वरूप का ध्यान किये।।178।।

दोहा

गया उत्तराखंड मैं, रामकथा रसलीन।
देखा आश्रम हिम शिखर, श्री लोमस आसीन।।179।।

तर्ज राधेश्याम

कुंज निकुंजों से मंजित थल, ललित लताये द्रुम विशाल थे।
त्रण पल्लव आच्छादित कुटिया, मनहारी बट तरु तमाल थे।180।।

ढुलक ढुलक कर हिम शैली से, लहलहात गंगा की लहरें।
धवलधार कल–कल करती धुनि, लोमस ऋषि आश्रम आ ठहरें।।181।।

देख तपस्थल मन राघव रत, हुआ भाव श्रद्धा युत गहरा।
नेह नीर स्लिथ विचार से, सुनो गरुड़ मैं कुछ दिन ठहरा।।182।।

श्री लोमस थे त्रिकाल दर्शी, देखी मेरे उर आर्त भक्ति।
सगुण रूपरस चातक है, मम प्रति बोले निर्गुण नियुक्ति।।183।।

मुनिवर वन्दन अभिनन्दन कर, बैठा विनम्र स्वर प्रश्न किया।
स्वामी समुझायें सगुण रूप, ज्योतिर्मय जागे प्रेम दिया।184।।

होता निर्गुण से सगुण रूप, वह कर्ता बिन करता नहिं कर्म।
मैं बोल पड़ा अज्ञान बुद्धि, ना समझ सकूँगा ब्रह्म मर्म।।185।।

क्षमा करें हे पूज्य वाद, मैं सगुण स्वरूप उपासक हूँ।
क्यों भटकूँ अगुण मरुस्थल में, बालक स्वरूप रस चातक हूँ।।186।।

संघर्ष किया प्रत्युत्तर दे, ऋषि लोमस भी बोले सकोप।
शठ व्यर्थ बाद कटुबाद करे, अविश्वास स्तम्भ रोप।।187।।

बायस सी करता काँव–काँव, तूँ वायस का ही रूप धरै।
मम श्राप करे शठ शिरोधार्य, जा भू मंडल में व्यर्थ फिरै।।188।।

श्रापित होने पर भी खगेश, मुनि आश्रम में आसीन रहा।
न हुआ मुझे कुछ हर्ष खेद, श्रीराम चरन में लीन रहा।।189।।

बैठा विनम्र मुनिवर समीप, स्मरण मग्न श्री राम रूप।
हो गया हृदय स्नेह सिथिल, प्रभु प्रेम तरंग उमड़ी अनूप।।190।।

मुनि आश्रम में ही सुनो गरुड़, बायस स्वरूप हो गया जभी।
हरि माया ने मुनि मति फेरी, स्नेह द्रवित हो गये तभी।।191।।

प्रायश्चित पश्चाताप किया, श्रीराम मंत्र से दीक्षित कर।
रसवन्ती रामकथा गाई, लोमस मुनि अति प्रसन्न होकर।।192।।

बरदान दिया दर्शन होंगे, दशरथ भुवाल के आंगन में।
बालक स्वरूप का ध्यान रहे, श्रीराम सुधा रस हो मन में।।193।।

७. कलि प्रभाव

पर त्रिय लंपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने।।
तेइ अभेदबादी ग्यानी नर। देखा मैं चरित्र कलियुग कर।।
(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

बोले भुसुन्डि सुनिये गरूड़, कलि लक्षण भी कुछ बतलाऊँ
जिससे मानवता नष्ट हुई, उस दानवता को दर्शाऊँ।।194।।

सतयुग, द्वापर, त्रेता, कलियुग, भूतल में आते जाते है।
चारों युग लक्षण भिन्न–भिन्न, बिधि रचना में दर्शाते हैं।।195।।

कलि में बिनष्ट श्रुति शास्त्र बेद, मिट जाते आश्रम बर्ण धर्म।
दम्भी अपना मत प्रकट करें, मानव में व्यापे पाप कर्म।।196।।

लोलुप ब्राह्मण क्षभी अकर्म, बणिक हैं बेईमान भ्रष्ट।
सूद्र करें उपदेश शास्त्र, होंगी मर्यादायें विनष्ट।।197।।

होगा समाज स्वारथ में रत, परिवार कलह पीड़ित गृहस्थ।
त्यागी होंगे सम्पत्तिवान, साधू संन्यासी राग मस्त।।198।।

बेदोक्त मंत्र बिधि क्रियाहीन, पूजन अर्चन का ज्ञान नहीं।
प्रोहित कर्मी पाखन्ड रचे, यजमान करेंगे दान नहीं।।200।।

बेदोक्त मंत्र बिधि क्रियाहीन, पूजन अर्चन का ज्ञान नहीं।
प्रोहित कर्मी पाखन्ड रचे, यजमान करेंगे दान नहीं।।199।।

ग्राही सुपंथ त्यागी सुपंथ, वक्ताजन व्यर्थ प्रलाप करें।
कलि में सयान वह बुद्धिमान, जो छद्म करै पर द्रव्य हरें।।200।।

उपदेश करेंगे निम्न वर्ण, उपवीत तिलक को धारण कर।
करवायेंगे पद प्रच्छालन, वाणी से ब्राह्मण वेद निदर।।201।।

कलि में कुल एकाकार बने, मिट जावैं मनुवादी विचार।
डसते हैं भ्रष्टाचार भुजंग, जनत्रासक शासक हो अपार।।202।।

सारे सुपात्र होंगे कुपात्र, मालाधारी बगुला ध्यानी।
झूठे होंगे व्यवहार सभी, झूठा भोजन झूठा पानी।।203।।

कवित्त

त्यागन कर मात पिता पत्नी से प्रेम करें,
कलियुग में क्रोधी शठ लोभी छदाम के।
ज्वाँरी लवारी व्यभिचारी करैं क्रूर कर्म,
विप्र वेद तीर्थ संत द्रोही बनै धाम के।।
स्वार्थ में प्रवीन लीन अपनी प्रतिष्ठा में,
भूलेंगे राम प्रेम प्रेमी हैं चाम के।
ऐसे उत्पाती करुणेश होंय कलियुग में,
और के न आप के न रहीम के न राम के।।204।।

सवैया

कलि कौतुक सुन भयभीत न हों, साथ में राम रमैया तो हैं।
जन पालक है खल घालक हैं, भव के भय पीर मिटैया तो हैं।
कलि के सब कष्ट निवारण को, पावन नाम की नैया तो है।
पढ़िये सुनिये श्री राम कथा, दीनों की पुकार सुनैया तो है।।205।।

जिसने गजराज की टेर सुनी, ग्राह पै चक्र चलैया तो हैं।
कलि काज से लाज निवारण को, पंचाली के प्रेम के भैया तो हैं।।
गति गीध को दी सवरी की सुनी, सुग्रीव के कष्ट नसैया तो हैं।
प्रेम से उन्हें यदि टेरोगे तुम, तो आरत कष्ट हरैया तो हैं।।206।।

क़वित्त

धर्म देश भारत में होती अब हाय – हाय,
होते यहाँ–शील–भंग रोज सुबह शाम को।
मानव अब दानव बन मानव को खाने लगा,
भूला परमार्थ स्वार्थ अपने ही काम को।।
चारो तरफ बाढ़े अज्ञानी लवारी चोर,
मात–पिता रोते है, पूज रहे बाम को।।
फूटन द्वेष भाव बिस्कूटन कर डाल रहे,
धर्म कर्म भूल सभी भजते हराम को।।207।।

भारतीय भाषा देश सभ्यता को भूल गये,
भूले बलिदान आज राष्ट्र भक्ति खो गई।
नकल के मुखौटों से चेहरे बदलने लगे,
मदिरा माँस खाने से ज्ञान प्रभा खो गई।।
खेलते है जुँवा ताँस हँसते है अट्टहास,
गाते अश्लील गीत लोक लाज धो गई।
छाया संस्कृति का प्रदूषण देश भारत में,
''जगत गुरु पदवी'' नदारत ही हो गई।।208।।

आदर दानवता नदारत मानवता हुई,
लादर हुई लाज किन्तु चतुर हैं बताने में।।
बनके अविवेकी पाठ पढ़ते कुपाठों के,
बनते सुशिक्षित न ठौर न ठिकाने में।।209।।

प्रेरक कथायें अब शास्त्रों की भाँती नहीं,
लता रफी गीत अब सब को मन भाते हैं।
कीर्तन प्रिय होगा जो फिल्मी धुन गाया जाये,
नाम राम सीता सुन उठकर चले जाते हैं।
मन्दिर तक दर्शन को जाने का समय नहीं,
टी.बी. फिल्म देखने में रातभर बिताते हैं।
लेकर मुबाइल दिन रात करैं हलो हलो,
हरे कृष्ण कहने में बाबू शर्म खाते हैं।।210।।

आदत है फिल्मी गीत गाने की गली गली,
गीतों में प्यार की पुकार ही सुनायेंगे।
हाय प्यार बेकरार दिल की मजबूरी को,
सबको सुनाते फिरैं शर्म नहीं खाँयेंगे।
किसी को बरिष्ठ पास बैठने का समय नहीं,
प्रेमिका के निकट समय घन्टों बितायेंगे।
कहते 'करूणेश' सभी तन मन को काला किये,
ऐसे में राम कथा सुनने क्यों आयेंगे।।211।।

कलि में आपमानित शुद्ध मान है अशुद्धों का,
पीपल पवित्र त्याग पूजते बबूल को।
दर्शन नहीं गो धृत के आये श्री घासलेट,
बोते बर्णसंकर बीज भूले धान्य मूल को।।
मानों की शान घटी रिस्तों में साला श्रेष्ठ,
रेणुका निरादर गंग आदर है धूल को।
ऐसा है कलियुग का कौतुक बिचित्र हाल,
कथा छोड़ सुनते है रायसे के तूल को।।212।।

चिन्ता है शेष पेटपोषण द्रव्य संचय की,
लेश नहीं श्रद्धा धर्म कर्म में दिखाती है।
मन्दिर और मस्जिद में मुल्ला पुजारियों की,
बेतन भोग चावल की टक झक सुनाती है।।
वक्ता विद्धान संत पैसों पर बिकने लगे,
श्रोता समाज सिर्फ साज बाज साथी है।।
रामकथा भागवत भाये सत्संग नहीं,
बिना फिल्म तानों के मजा नहीं आती है।।213।।

रक्षक प्रजा के भ्रष्ट तक्षक से फूँस रहे,
शिक्षक विद्यालय नहीं सेवक निज धाम के।
विद्याविहीन विप्र खाते हैं भक्षाभक्ष,
क्षत्री वल क्षीण वैश्य बंचक हुये ग्राम के।।

छाप तिलक धारण कर सूद्र उपदेश करैं,
परमहंस पदवी किन्तु रसिया हैं चाम के।
भगवाँ पहिन छलिया बन छलैं सभी तीर्थों में,
धन के न धाम के रहीम के न राम के।।214।।

धारण पीताम्बर कर कितने छिछोरे फिरैं,
करने प्रतिष्ठा नष्ट सन्तों की चाट के।
पूजा पाठ जानै न मानै न मन्दिर तीर्थ,
लेते अश्रद्धा दान भक्तों को डाट के।
वगुला भक्त बाढ़े बदनामी को डरते नहीं,
कामी क्रूर कायर कलंक करैं काट के।
ऐसे घोर घाती उत्पाती हुये भारत में,
हाट के न बाट के न खोर के न खाट के।।215।।

जीभ के चटोरे किन्तु बनते हैं त्यागी जी,
बोलें अहंकार भरी बाँणी प्रलाप के।
बनते हैं मित्र किन्तु मैत्री समझते नहीं,
मौके पर काटने को मामा हैं साँप के।
करते व्यौहार सिर्फ नारी धन स्वार्थ हेतु,
फूट चुगुल खोरी में माहिल हैं छाप के।
ऐसी सन्तानें आज पैदा हुईं भारत में,
और के न आपके न मात के न बाप के।।216।।

निन्दक प्रवीन लीन अपनी प्रतिष्ठा में,
दहसत मचाने को गुन्डा हैं पाप के।
इनका कुकृत्य देख धरा धीर खोने लगी,
आते भूचाल उठैं बादल संन्ताप के।।
राघवेन्द्र एक वार आओ तो अयोध्या में,
देखिये तो कैसी दशा आपके ही धाम की।
मन्दिर बिध्वन्स न्याय नेतों के बीच फँसा,
बन्दी बने आप लाज जाती है नाम की।।217।।

धारन उपवीत किये आया कौन धरती पै,
खतना कराये हुये कहो कौन आया है।
आये कब मन्दिर बनाने श्री राघवेन्द्र,
मस्जिद निर्माण समय खुदा नहीं आया है।
एक ही मसाले से होते निर्माण सभी,
जीने व मरने में फर्क नहीं पाया है।
नाहक राजनीत में हुल्लड मचाते हो,
हमने ही भेद डाल भ्रम को फैलाया है।।218।।

तर्ज राधेश्याम

मन को इतना निर्मल कर लो, नवनीत तरह गलता ही रहे।
सुनके पर पीर व्यथा न रुके, रक्षा पथ में चलता ही रहे।।219।।

कवित्त

राम व रहीम रूप एक हैं अनेक नहीं,
भेद की कटारी से एकता न काटिये।
दोनों का एक प्यार दोनों परवरदिगार,
दोनों की एक ज्योति राम को न बाँटियें।
मन्दिर या मस्जिद हों दोनों नापाक नहीं,
शुद्ध हरित वृक्ष को कुल्हाड़ से न छाँटिये।
प्रार्थना अजान शुद्ध दोनों का अर्थ एक,
केवल कुकर्मी देशद्रोहियों को डाँटिये।।220।।

देख कर तमासा आज जलते हैं रोम रोम,
अपनी हानि सहते हुये और को सतायेंगे।
गीता कुरान ग्रन्थ महिमा समझते नहीं,
धर्मो में भेद डाल हुल्लड मचायेंगे।
देखिये तो पागलपन करते हैं तोबा हाय,
राम व रहीम कभी रहम तो दिखायेंगे।
अब तो 'करुणेश' सोच, अल्ला के रहमत की,
भारत में राम कभी रहम तो दिखायेंगे।।221।।

तर्ज राधेश्याम

रघुनन्दन के आदर्शो पर, अपना जीवन ढ़लता ही रहे।
निश्चल मन से जो भजो प्रभु को, तब प्रेम का घट भरता ही रहे।।222।।

हे निर्गुण नारायण स्वामी, कलि त्रास हरो फिर से आओ।
श्री राम भद्र धनु धारण कर, मानव में मानवता वर्षाओ।।223।।

किसको कैसे दोषी कह दें, कलि सागर में जग डूबा है।
भारत ही क्या सम्पूर्ण विश्व, आतंकबाद से ऊबा है।।224।।

सतयुग द्वापर त्रेता कलियुग सृष्टी में आते जाते हैं।
चारों युग अपने समयान्तर, अपना प्रभाव दर्शाते है।।225।।

चारों युग में अवतरण कथा, है भिन्न–भिन्न रघुनन्दन की।
चारों युग में अर्चन पूजन, हैं पृथक मुक्ति के साधन भी।।226।।

साधक, साधन, साधनायें सभी, यज्ञादिक तप संयम कठोर।
प्रतियुग में होते पृथक–पृथक, मुक्ती हित करते वेद शोर।।227।।

भक्ति एक प्रत्यूह अधिक, कलि जीव कहाँ कर पायेगा।
मानव कलिमल में ग्रस्त दीन, कैसे मुमुक्षु पद लायेगा।।228।।

कलियुग में एक प्रभाव प्रबल, श्रीराम भजन से मुक्ती है।
साधक जन को मुक्ती साधन, हरि लीलायें ही युक्ती है।।229।।

हे पन्नगारि यह गुप्त भेद, वेद विहित जो कह डाला।
श्रीरामकथा अनुशरण करो, कलि कलुष निकंदन का प्याला।।230।।

८. सन्त असन्त लक्षण

संत सहहिं दुख पर हित लागी। पर दुख हेतु असंत अभागी।।

(श्रीरामचरितमानस से)

तर्ज राधेश्याम

मुझ अज्ञानी को ज्ञान निधे, सन्तों के लक्षण समुझायें।
इसके उपरान्त असन्तों के, व्यवहारिक दुर्गुण दर्शायें।।231।।

हे खगपति त्यागी लोभ हीन, उपकारी सन्तों का सुभाव।
छल छद्म शून्य निर्मल प्रवृत्ति, निष्कपट ह्रदय के सभी भाव।।232।।

सृष्टि सृजेता सृजन कार्य, गुण अवगुण मिश्रित रंजित है।
छलक रही है कहीं सुधा, तो कहीं बिषम बिष मंडित है।।233।।

कहीं भलाई भ्रमर भ्रमण, तो कहीं बुराई कंटक बन।
हो रहा कहीं यदि शुभ चिन्तन, तो कहीं उमड़ता दुश्चिन्तन।।234।।

बहती समाज में एक ओर, मानवता की मंजुल तरंग।
दानवता करती अट्हास, उस ओर भयावह ले उमंग।।235।।

इस धरती में ही भले पोच, तन धारी सन्त असन्त यहीं।
सम्पूर्ण सृष्टि की कृति विचित्र, समरसता मिलती कहीं नहीं।।236।।

सौभाग्य शिशकता काँटों में, काँटो में भी सौभाग्य छुपा।
कलियों में भी कृन्दन देखा, कृन्दन में भी आलाप रुका।।237।।

जैसे मुस्क्याती संत प्रभा, मन में बिखेरती सत्चिन्तन।
पर हित चिन्तन संकल्पित मन, मन मन्थन में भी सम्वेदन।।238।।

दीनों हीनों पर दुखी सन्त, सेवारत कष्ट मिटाते हैं।
सान्त्वना भरी मृदु बाणी से, दुखियों का ह्रदय जुड़ाते हैं।।239।।

पर–पीड़ा को अपनी पीड़ा, समझें साहस से दूर करें।
अपने ही हैं सब प्राणि मात्र, पर हित में प्राणोत्सर्ग करें।।240।।

निर्भीक साहसी संत ह्रदय, परमार्थ–पंथ के पथिक साज।
निर्भय मृत्यु तक वरण करैं, जैसे पक्षी थे गिद्ध राज।।241।।

ऐसे सत–प्रेमी धर्मशील, सन्तों को सतत् मनाता हूँ।
करबद्ध सदा सत सन्तों के, चरनों में शीश नमाता हूँ।।242।।

खल जन भी माया से प्रेरित, हैं अंश ईश पर जीव बने।
काम क्रोध मद लोभ मोह, अभिमान पंक के बीच सने।।243।।

अध्यात्म ज्ञान से हीन अंध, अपने को मान रहे कर्ता।
पथ भ्रष्ट स्वार्थ के परम भक्त, जो स्वयं बने जगके भर्ता।।244।।

नम्रता नहीं कुछ कटु भाषी, जल्पना निरंतर कटु प्रलाप।
परद्रोह परस्पर कलह द्वेष, सज्जन पुरुषों के लिए साँप।।245।।

ये बिना प्रयोजन संन्तापी, दीनों का हृदय दुखाते हैं।
गैरों के सुख में जल मरते, दुख देख स्वयं हर्षाते हैं।।246।।

पर पीड़ाओं में तत्पर हैं, होता कुछ खेद विषाद नहीं।
पर दोष देखते बार–बार, पर हित में मन अह्लाद नहीं।।247।।

अघ अवगुण के पूर्ण धनी, भाता है मन में पर आकाज।
तामसी सुरामद मतवाले, दानवी सम्पदा बिना लाज।।248।।

इस सृष्टि सिन्धु में जलज जोंक, दोनों का पालक जल अगाध।
गुण अवगुण कर्माभूत पृथक, सब राम अंश है निर्उपाध।।249।।

श्रीराम सिया में पूर्ण जगत, अपने ही हैं अपनाता हूँ।
इसलिए असज्जन सज्जन के, चरणों में शीश झुकाता हूँ।।250।।

चारों वर्णों की कर्मक्रिया, ऋषि प्रणीत ग्रन्थों में हैं।
कैसे लक्षण–लान्छित असन्न, कैसे शुभकृत सन्तों में हैं।।251।।

अपमान–मान को सम देखे, परहित को माने अपना हित।
मृदुभाषी सत्यपरायण भी, नवनीत तरह हो कोमल चित।।252।।

सुख–दुख में संतत सुखी रहे, इन्द्रीगत त्यागी सर्व विषय।
अपने प्राणों से प्राणि सभी, अभिमान रहित हो नम्र हृदय।।253।।

निंदा सुकीर्ति से पृथक रहें, बैराग्ययुक्त त्यागी जीवन।
निर्लोभ दयालू रामभक्त, दीनों पर हो सम्बेदित मन।।254।।

तोषी सन्तोषी क्षमाशील, अविवेक शून्य तृष्णा बिहीन।
धन–धान्य ज्ञान से निर्धमंड, श्रीराम भक्त हो नम्र दीन।।255।।

श्रुति शास्त्र उपासक क्रियाशील, द्विज देव भक्त धर्मी महान।
वर्ते समत्व समभाव रहे, मानवता प्रेमी जग जहान।।256।।

पर दुख हेतु असंत सदा, खल पर पीड़न ही हैं करते।
पीड़ायें देते दलितों को, कुछ भी परमार्थ नहीं करते।।257।।

द्विज श्रुति निंदक है क्रूर हठी, पर द्रोह उपासक क्रियाहीन।
अघ अवगुण के सम्पूर्ण धनी, काम क्रोध निंदक प्रवीन।।258।।

व्यभिचार विषय रस के प्रेमी, सम्पदा विनासक व ज्वाँरी।
पर द्रव्य हरण में तत्पर है, करते लवार हरते नारी।।259।।

खल बिना स्वार्थ पर अपकारी, परद्रोही क्रोधी हिंसा में रत।
जरते हैं स्वयं कुटिलता से, खाते अभक्ष मादक में मत।।260।।

तप ज्ञान यज्ञ जप नियम धर्म, नेम प्रेम आचरण हीन।
यह दोष असन्तों के खगेश, गुण त्याग हुये अवगुण प्रवीन।।261।।

९. गरुड़ जी को उपदेश

सुमिरि राम के गुन गन नाना। पुनि पुनि हरष भुसुंडि सुजाना।।
(श्रीरामचरितमानस से)

दोहा

राम ब्रह्म के रूप में, खगपति कर विश्वास।
नरतन धर लीला करें, बँधे नाग की फाँस।।262।।

तर्ज राधेश्याम

जिसके बँधन में विश्व बँधा, उसको क्या निशिचर बाँधेगा।
लीलाधर की लीलायें हैं, जन मनन करे आराधेगा।।263।।

जो विषई दम्भी अभिमानी, आराधन पथ से करैं बैर।
वे स्वान रूप नर देह धरें, कैसे जाएँ भव सिन्धु पैर।।264।।

ज्ञान दृष्टि से जग असत्य, घट घट वासी श्रीराम सत्य।
भौतिकवादी वाणी असत्य, श्रीराम नाम हे गरुड़ सत्य।।265।।

साधक सिद्धों के पथ अनेक, साधन रत संत मनाते हैं।
लेकिन मम स्वामी राम बिना, कोई न मुक्ती पाते हैं।।266।।

हे खगपति माया अरु भक्ती, दोनों का रूपक नारि वर्ग।
माया भटकाती भव सागर, भक्ती पहुँचाती सुखद स्वर्ग।।267।।

राघव मणि को भक्ती प्यारी, माया प्रभु की नर्तकी मात्र।
हरि भक्तों से माया डरती, भक्ती से तारन तरण मात्र।।268।।

भ्रम त्याग भक्ति को वरण करो, हे खगेश यह मृत जीवन।
श्रद्धा से जो विश्वास करे, निश्चित भ्रमगत हो जाये मन।।269।।

मैं शठ पक्षी हूँ अशुभ काग, श्रीराम कृपा से हुआ धन्य।
श्रद्धा रत सुन श्री रामकथा, दशरथ नन्दन स्वामी अनन्य।।270।।

दोहा

राम सुयश सुनि गरुड़ ने, हर्ष फुलाये पंख।
बजी ज्ञान की दुन्दभी, बजा प्रेम का शंख।।271।।

श्री भुशुन्ड़ि पदपर्स के, गरुड़ हुये कतकृत्य।
मनसा वाचा कर्म से, बने राम के भक्त।।272।।

मम स्वामी लीला करैं, भव निस्तारण हेतु।
कहि भुशुन्डि मुनि मौन भै, कष्ट निवारण हेतु।।273।।

राम लषन सीता सहित, गावत प्रभु गुन ग्राम।
हरषि चले उरगारि तब, पाय परम विश्राम।।274।।

१०. करुणेश की विनय

छन्द

कलिमल दहन राघव कृपा, करुणेश हरि गाथा कही।
करिहै सभी सुन संत जन, काव्यगत भूलें सही।।
श्री रामकीर्ति अपार सागर, पार मैं कैसे करुँ।
मतिमंद मूरख किस तरह भक्ति गागर को भरुँ।।275।।

दोहा

संवत सरसठ दो सहत्र, भाद्र शुक्ल तिथि चार।
रामकथा लिपिबद्ध की, प्रभु प्रेरण अनुसार।।276।।

रामकथा अति प्रेम से, गावहिं सुनहिं सुजान।
कलिमल मुकत होइ मन, तरहिं बिना जलजान।।277।।

गोस्वामी तुलसीदास

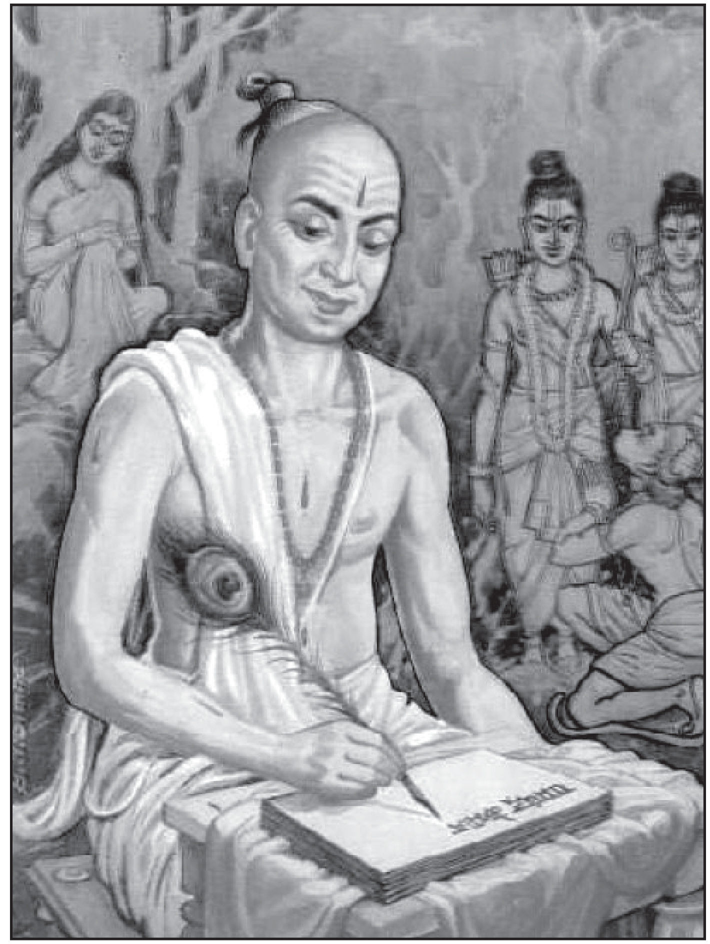

विषय सूची

बालकाण्ड

	विषय	पृष्ठ
1.	मंगलाचरण	19
2.	सती मोह	21
3.	श्रीराम जन्म	26
4.	विश्वामित्र आगमन	28
5.	ताड़का वध	30
6.	यज्ञ रक्षा	33
7.	श्री सीता अवतरण	35
8.	अहिल्या उद्धार	37
9.	गंगा दर्शन	39
10.	विश्वामित्र–राजा जनक मिलन	40
11.	मिथिला भ्रमण	42
12.	पुष्प वाटिका प्रसंग	44
13.	धनुष यज्ञ	46
14.	जनक पश्चाताप एवं लखन रोष	49
15.	परशुराम आगमन	51
16.	परशुराम लक्ष्मण संवाद	54
17.	श्रीराम विवाह	60
18.	जनकपुर से बारात विदाई	64

अयोध्या काण्ड

1.	श्रीराम राज्याभिषेक तैयारी	67
2.	कैकई का कोप भवन	71
3.	श्रीराम वन गमन भूमिका	73
4.	माँ कौसल्या से अनुमति	76
5.	श्रीराम का वन प्रस्थान	81

6.	श्रीराम केवट संवाद	83
7.	मुनि भारद्वाज से मिलन	85
8.	श्रीराम की वन यात्रा	87
9.	श्रीराम–बाल्मीकि संवाद	89
10.	चित्रकूट निवास	92
11.	श्री सुमंत्र का अयोध्या लौटना	93
12.	श्री भरत का अयोध्या आगमन	94
13.	श्री भरत का चित्रकूट प्रस्थान	97
14.	चित्रकूट दरबार	101

अरण्य काण्ड

1.	जयन्त की कुटिलता	105
2.	श्री सीता अनुसूया मिलन	106
3.	बिराध वध	108
4.	सुतीक्ष्ण जी का प्रेम	110
5.	पंचवटी निवास	112
6.	खरदूषण वध	115
7.	सूर्पणखा–रावण संवाद	116
8.	मारीच प्रसंग	117
9.	श्री सीता हरण	119
10.	जटायु–रावण युद्ध	121
11.	श्रीराम जी का विलाप	122
12.	जटायु कथा	125
13.	परम भक्ता शबरी	127

किष्किन्धा काण्ड

1.	ऋष्यमूक प्रस्थान	133
2.	श्रीराम–सुग्रीव मिलन	134
3.	बालिवध	136

4.	तारा – पुनर्विवाह	139
5.	श्रीराम का सुग्रीव पर रोष	140
6.	सीता अन्वेषण	142

सुन्दर काण्ड

1.	श्री हनुमान जी का लंका प्रस्थान	153
2.	लंका प्रवेश	154
3.	भक्त विभीषण से भेंट	156
4.	प्रमदा वन में सीता दर्शन	158
5.	प्रमदा वन भंजन	161
6.	श्री हनुमान–रावण संवाद	165
7.	लंका दहन एवं वापिसी	166
8.	सैन्य–प्रस्थान	168
9.	मन्दोदरी–रावण संवाद	169
10.	लंकेश की मंत्रणा	171
11.	विभीषण शरणागति	171
12.	सिंधु तरण	173

लंका काण्ड

1.	श्री रामश्वेर स्थापना	175
2.	पुनः मन्दोदरी प्रार्थना	175
3.	प्रहस्त का समझाना	176
4.	लंकेश मान मर्दन	177
5.	अंगद – रावण संवाद	178
6.	मंदोदरी का रावण को समझाना	182
7.	युद्ध प्रारंभ	183
8.	श्री लक्ष्मण–मेघनाद युद्ध	184
9.	कुंभकरण वध	186
10.	मेघनाद वध	188

11.	रावण का शोक	190
12.	प्रहस्त वध	191
13.	श्री राम रावण युद्ध	192
14.	अग्नि परीक्षा	194
15.	लंका से प्रस्थान	195

उत्तर काण्ड

1.	अयोध्या आगमन	197
2.	श्रीराम राज्याभिषेक	197
3.	श्रीराम गीता	201
4.	शिव पार्वती संवाद	202
5.	गरुड़ भुशुन्डि संवाद	206
6.	गरुड़ के प्रश्न	208
7.	कलि प्रभाव	213
8.	संत असंत के लक्षण	219
9.	गरुड़ जी को उपदेश	222
10.	करुणेश की विनय	223

श्रीराम जय राम जय जय राम।
श्रीराम जय राम जय जय राम।।

श्री राम–सुग्रीव मित्रता

श्री राम–सीता